

डायमंड शाश्वत कथा माला

रामायण के अमर पात्र

हनुमान

उपन्यास



डॉ. विनय

रामायण के अमर पात्र

पवनपुत्र हनुमान



eISBN: 978-93-5278-425-7

© प्रकाशकाधीन

प्रकाशक: डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा.) लि.

X-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेज-II

नई दिल्ली-110020

फोन: 011-40712100, 41611861

फैक्स: 011-41611866

ई-मेल: ebooks@dpb.in

वेबसाइट: www.diamondbook.in

संस्करण: 2017

पवनपुत्र हनुमान

लेखक: डॉ. विनय

भूमिका

रामायण और महाभारत भारतीय संस्कृति के विराट् कोष हैं। और इन दोनों में रामायण का सम्मान भक्ति की दृष्टि से महाभारत से अधिक है। यद्यपि रामायण में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का प्रतिपादन है और महाभारत में कौरवों पांडवों की कथा के बहाने कृष्ण का ब्रह्मत्व प्रतिष्ठित किया गया है। रामायण का मान सामान्य जन में इसलिए अधिक है कि उसके चरित नायक राम का जीवन चरित्र व्यक्ति और समाज दोनों के लिए जीवन मूल्य की दृष्टि से अनुकरणीय है।

आदिकवि वाल्मीकि ने सम्पूर्ण राम कथा में राम को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में प्रतिपादित कर एक महान सांस्कृतिक आधार प्रतिष्ठित किया था और उसके बाद अनेक प्रकार से राम कथा का स्वरूप विकसित होता रहा। जैन धर्मावलंबियों ने अपने ढंग से इस कथा को प्रस्तुत किया और बाद के आने वाले रचनाकारों ने -हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता- के आधार पर राम की कथा को उसके मूल्य की रक्षा करते हुए अपने ढंग से प्रस्तुत किया है। गोस्वामी तुलसीदास ने राम कथा को भक्ति का व्यावहारिक केन्द्रबिन्दु बना दिया। उनके राम भक्ति के आधार हैं और उनका जीवन ही अनुकरणीय है। गोस्वामी तुलसीदास के बाद भी राम कथा को विभिन्न रूपों में अनुभव किया जाता रहा और जहां-जहां इस विराट् भाव भूमि में कवियों की दृष्टि में, जो स्थल मानवीय दृष्टि से उपेक्षित रह गये उन्हें केन्द्र बनाकर राम की कथा में अन्य आयाम जोड़ने का उपक्रम भी जारी रहा।

राम कथा हमारे जहां भक्ति का बहुत बड़ा मूल्य प्रस्तुत करती है वहां कुछ ऐसे प्रश्न भी छोड़ देती है जिनका कोई तर्कपूर्ण समाधान शायद नहीं मिल पाता। और जब मन किसी बात को मानने से मना कर दे और उसका तर्कपूर्ण समाधान न हो तब एक गहरे रचनात्मक द्वन्द्व की रचना होती है। हमने रामकथा के विभिन्न पात्रों को उस कथा के मूल आदर्श वृत्त में ही रखकर मनन और अनुसंधान से, औपन्यासिक रूप में चित्रित करने का प्रयास किया है। क्योंकि, रामकथा में प्रत्येक पात्र किसी न किसी जीवन दृष्टि या जीवनमूल्य को भी प्रतिपादित करता है। राम यदि आदर्श पुत्र, पति है तो लक्ष्मण आदर्श भाई के रूप में प्रतिष्ठित है। और इसी प्रकार अन्य पात्रों का मूल मूल्य वृत्त भी देखा जा सकता है। अब आधुनिक दृष्टि में यह मूल मूल्य वृत्त कहां तक हमारे जीवन में रच सकता है यह बहुत बड़ा प्रश्न है। और इसलिए किसी भी लेखक का यह रचनात्मक प्रयास कि पुराकथा के पात्रों में क्या कोई मानसिक द्वन्द्व रहा होगा? क्या उन्होंने सहज मानव के रूप में होंठों को मुस्कराने की और आंखों को रोने की आज्ञा दी होगी? और तब हम यह अनुभव करते हैं कि उस विराट् मूल्य के आलोक में छोटा-सा मानवीय प्रकाश खण्ड उठाकर अपने दृष्टिकोण से अपने पाठकों के सामने प्रस्तुत कर सकें। राम गाथा के विशिष्ट पात्रों पर औपन्यासिक रचनावली के पीछे हमारा यही दृष्टिकोण रहा है कि हम उस विराट् को अपनी दृष्टि से अपने लिए किस रूप में सार्थक कर

सकते हैं।

गोस्वामी जी के शब्दों में—

सरल कवित, कीरति बिमल, सुनि आदरहिं सुजान।
सहज बैर बिसराय रिपु, जो सुनि करै बखान ॥

और हम इस रास्ते पर यदि चल नहीं पाते तो चलने की सोच तो सकते हैं। हमारे सामने सबसे बड़ा प्रश्न यह रहा कि जहां-जहां राम कथा के बड़े-बड़े ग्रन्थ कुछ नहीं बोलते वहां उसी मूल्य चेतना में हम गद्य में कैसे उस अबोले के यथार्थ को चित्रित करें। पुराकथा की दृष्टि से जो सच हो सकता है और आधुनिक दृष्टि से जो स्वीकार भी हो ऐसे कथा तंत्रों को कल्पनाशीलता से रचते हुए हमारा हमेशा ध्यान रहा है कि मनुष्य के अन्तर का उदात्त भाव भी मुखर हो सके क्योंकि हमने जब-जब इन बड़े पात्रों से साक्षात्कार किया है तब-तब एक उदात्त तत्व की आलोक की तरह से दृष्टि के सामने आया है। उस आलोक में से थोड़ा बहुत अब हमारी ओर से आपके सामने है।

—डा. विनय
25 बैंगलों रोड, दिल्ली-110007

पवनपुत्र हनुमान

जन्म कथा

सामने विशाल समुद्र, उठती-उतराती, लंबी छलांग मारती, किनारों से टकरा-टकराकर लौट जाती, दूध के फेन के समान लहरें। दूर-दूर तक इस महासागर का कोई छोर नहीं था। सीता की खोज में निकला वानर दल, उनके नेता अंगद, बुद्धिमान जामवन्त और महाबली हनुमान, सभी लोग विचार में डूबे हुए थे। कोई हल नहीं सूझ रहा था, कैसे समुद्र पार किया जाए?

इसका मतलब तो यह हुआ कि हम कभी मां जानकी को खोज ही नहीं पायेंगे। अंगद निराश था। कितने विश्वास के साथ भेजा था उन्हें श्रीराम ने। दण्डक वन से यहां तक छलांग लगाते आते उन्हें एक मास होने को आया था और अभी तक सीता का कहीं अता-पता नहीं लग पाया था। इस प्रकार तो सीता को खोजने के लिए दी गई अवधि ही पूरी हो जाएगी। कुछ न कुछ उपाय तो करना होगा।

अभी वे यह सोच ही रहे थे कि जामवन्त को ध्यान आया—अगर मैं प्रयास करूं तो नब्बे योजन तक छलांग लगा सकता हूं और यह समुद्र तो सौ योजन लंबा है। इसको पार करने के लिए तो कोई और उपाय ही ढूंढना होगा। जामवन्त दरअसल बूढ़े हो गए थे। अगर पहले की बात होती तो निश्चय ही वे अब तक कई बार यह समुद्र लांघ गए होते। जामवन्त यह सोच ही रहे थे कि तभी उनकी दृष्टि हनुमान जी पर पड़ी। हनुमान! सभी जानते हैं, अपने शौर्य, बल, धैर्य, पराक्रम, बुद्धिमत्ता और प्रभाव में श्रेष्ठ हैं। यदि ये चाहें तो समुद्र पार कर सकते हैं। और यह सोचते हुए जामवन्त ने हनुमान के पास आकर कहा—

“वीरवर! तुम पवनपुत्र होकर समुद्र को लांघने में संकोच कर रहे हो। अपनी शक्ति को पहचानो हनुमान!”

“आप समझते हैं, मैं श्रीराम की सेवा नहीं करना चाहता?”

“नहीं, मैंने तो यही नहीं कहा लेकिन तुम चाहो तो यह समुद्र पार कर सकते हो। तुममें अपूर्व बल है हनुमान! तुम्हें अपने बल का पता नहीं।”

“भला मुझे अपने बल का पता क्यों नहीं होगा?”

“यह एक रहस्य की बात है। इस समय तुम अपना बल ही नहीं भूल बैठे बल्कि वह कारण भी भूल गए हो जिससे तुम्हारा यह बल तुम्हारे लिए अज्ञात हो गया है।”

“यह क्या गुत्थी है? मैं समझ नहीं पा रहा हूं।”

“और मैं बता नहीं पा रहा हूं। शायद तुम ही यदि अपने बाल्यपन की ओर दृष्टि दौड़ाओ तो

तुम्हें सब याद आ जाएगा।”

“आपने किस समय की याद दिला दी जामवन्त जी?”

वह सुमेरू पर्वत, मेरे पिता का राज्य, महाराज केसरी मेरे पिता और यह सोचते हुए हनुमान को ऐसा लगा—हवा के तेज झोंके में फड़फड़ा कर एक पुराना पन्ना खुल गया।

सुमेरू पर्वत उस वानरों का एक बड़ा राज्य हुआ करता था और वहां महाराज केसरी राज्य करते थे।

उनकी पत्नी अंजना विख्यात और उनकी प्रिय पत्नी थी। हनुमान ने इन्हीं अंजना के गर्भ से जन्म लिया था।

जन्म के समय हनुमान के शरीर की शोभा देखने योग्य थी। वे बचपन से ही बड़े सुन्दर थे मानो धान के अगले सिरे पर जो हल्का पीलापन होता है, उससे पूरी फली शोभायमान होती है उसी प्रकार से हनुमान की त्वचा कोमली हरेपन के ऊपर सुनहरी पीली छटा के रूप में झलक रही थी।

पिता केसरी के लिए यह बड़ी प्रसन्नता का विषय था। उनके यहां एक पुत्र ने जन्म लिया। राज्य के उत्तराधिकारी ने जन्म लिया।

महाराज केसरी ने दिव्य रूप के धनी अपने इस बालक का जन्मोत्सव बड़े उत्साह से मनाया। जामवन्त इस उत्सव में आए थे।

जामवन्त ने तो तब ही देखकर यह भांप लिया था कि यह बालक अवश्य ही अपने कुल की कीर्ति को ऊंचाई के शिखर पर पहुंचाने वाला, इतिहास में अपना नाम अमर कर जाने वाला होगा। बड़ी-बड़ी आंखें, ऊंची नाक और धनुषाकार अधरों के नीचे नुकीली उभरी हुई ठोड़ी, लंबी गर्दन, लंबी भुजाएं, विशाल वक्षस्थल और उछलती टांगें, यानि बालक का सारा शरीर देखकर यह लगता था कि मानो किसी देवता ने बालरूप में अवतार लेकर मां अंजनी और पिता केसरी को कृतार्थ कर दिया था।

जन्मोत्सव तो मिलन का एक बहाना था। वास्तव में बिखरी हुई वानर शक्ति को एक झंडे के नीचे लगाकर उन्हें एकता के सूत्र में बांधना ही महाराज केसरी का मूल उद्देश्य था और इसमें वे काफी सीमा तक सफल भी हुए।

दक्षिण भारत के वानर समूह, जो इस उत्सव में उपस्थित हुए थे, उन सबको किष्किन्धा के विशाल राज्य के अधीन कर दिया गया था और इधर उत्तर में स्वयं केसरी वानरों की बागडोर संभाले हुए थे। राक्षसों के बढ़ते हुए आतंक के प्रभाव से सभी लोग त्रस्त थे। पुत्र के उत्सव में सभी वानर समूहों के बीच एकता का सूत्रपात वानरों के लिए एक नए युग का सूत्रपात बन गया।

सुमेरू पर्वत पर यह समारोह कई दिन तक चलता रहा। चारों तरफ वानर दलों की उछलकूद मचती रही। सभी प्रसन्न थे। एक लम्बे अरसे बाद सभी को साथ-साथ रहने का, एक-

दूसरे के सम्पर्क में आने का अवसर मिला था।

और फिर एक दिन सभी लोग लौट गए जहां-जहां से आए थे। महाराज केसरी अपने राज्य कार्य में व्यस्त हो गए और माता अंजना पुत्र के लालन पालन में लग गई।

धीरे-धीरे हनुमान बड़े होने लगे। बचपन से शैतान प्रकृति का यह बालक अपने कौतुकों से नित्य ही माता-पिता को रिझाता था। एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर कूदता हुआ कब कहां क्या कर दे, कोई नहीं जान पाता था और धीरे-धीरे उसके क्रियाकलाप इतने बढ़ गए कि लोग सुनकर दांतों तले उंगली दबाने लगे।

एक दिन माता अंजना फल लाने के लिए घने वन में चली गई। वह अपने पुत्र को एक दासी के पास छोड़ गई। उसका आदेश था कि यह बड़ा शैतान है। देखना, इसका ख्याल रखना ऐसा न हो कोई उत्पात खड़ा कर दे।

माता अंजना को जाते हुए हनुमान देखते रहे। मानो वे भी उसके जाने की प्रतीक्षा कर रहे हो। फिर कुछ देर यूं ही इधर-उधर थोड़ा ऊधम मचाकर उन्हें भूख लगने लगी और पता नहीं माता की झलक न दिखाई पड़ने के कारण उन्हें वह समय भारी लगने लगा। थोड़ी देर तो बालक ने सहन किया लेकिन काफी देर तक मां के न आने पर वह भयानक स्वर करते हुए रोने लगे।

उनके रोने का स्वर कुछ इतना तेज था कि वह दासी चौंक गई। पास जाकर देखा तो हनुमान को हाथ-पैर पीटते रोते पाया।

“अरे क्या हुआ?”

“ऐं....ऐं....” रोते रहे हनुमान। कोई उत्तर नहीं दिया।

दासी डर गई—कहीं किसी कीड़े ने तो नहीं काट लिया।

तभी हनुमान ने आकाश में उगे प्रातःकाल के सूर्य को देखा। उन्होंने समझा यह तो कोई फल है। उसे देखकर वह उसे लपकने के लिए दौड़ पड़े।

अब तो दासी और भी डर गई।

उसने देखा हनुमान बालसूर्य की ओर मुंह किए आकाश में दौड़े चले जा रहे हैं।

हनुमान का यह कृत्य देखकर दासी ही नहीं आकाश में देवताओं और ऋषियों को भी यह दृश्य कुतूहल में डाल गया।

यह वायु पुत्र जिस प्रकार ऊंचे वेग से आकाश में उड़ रहा है ऐसा वेग न तो वायु का है न गरुड़ का और न मानव मन का। और फिर यदि वाल्यावस्था में इस बालक के वेग का यह रूप है तो युवावस्था में क्या रूप होगा। यह सोचकर तो उन सबके हृदय दहल गए।

जब महाराज केसरी को पता चला तो वे भी वायुवेग से धीरे-धीरे अपने पुत्र के पीछे-पीछे चल दिए। लेकिन हनुमान तो मानो पिता से भी सहस्र गुना तेज थे। थोड़ी ही देर में वह सहस्र

योजन लम्बे आकाश को पार कर सूर्य के समीप पहुंच गए।

आज एक बालक उनके पास जिज्ञासा वश आ गया है अतः सूर्य ने उसे अपनी अग्नि समान किरणों से जलाया नहीं। उन्हें लगा शायद यह बालक उनके बारे में जानता नहीं है, इसे गुण दोष का ज्ञान नहीं है। इसीलिए सूर्य ने उसके प्रति उदारता दिखलाई।

इधर हनुमान सूर्यदेव को लपकने के लिए उछले थे तो दूसरी ओर राहु भी सूर्यदेव पर ग्रहण लगाना चाहता था।

लेकिन जब सूर्य के रथ पर चढ़े हनुमान ने सूर्य और चन्द्रमा को ग्रहण लगाने वाले राहु को सूर्य के पास आते देखा तो उन्होंने उसे ही पकड़ लिया।

राहु को अपने ऊपर यह आक्रमण, देवताओं का षड्यंत्र लगा इसलिए वह अपने से अधिक बलवान किन्तु बालक को अपने सम्मुख काल के रूप में जानकर वहां से भाग खड़ा हुआ और सीधे देवराज इन्द्र की सभा में पहुंच गया।

राहु को अपनी सभा में इस प्रकार कुपित हुए आया देखकर इन्द्र चकित रह गए।

राहु ने क्रोध में भरकर कहा—“बल और वृत्तासुर का वध करने वाले, देवराज! आपने मेरी भूख शान्त करने के लिए सूर्य और चन्द्रमा को मेरे लिए सौंपा था लेकिन अब अचानक उसे दूसरे के हवाले कर दिया है, आपने ऐसा क्यों किया?”

“आज अमावस्या है और मैं अपने क्रम से सूर्य को ग्रस्त करने के लिए जैसे ही पास गया, आपके द्वारा भेजे उस दूसरे राहु ने मेरी पकड़ से सूर्य को मुक्त कर दिया और मुझे पकड़ लिया।”

“मैंने अपने आपको इस संकट से बचाने के लिए शीघ्र ही अपना आकार तिल के समान कर लिया और मैं उसकी मुष्टिका के छेद में से बाहर आ गया। कहने को तो वह बालक है किन्तु जिस प्रकार उसने सूर्य को अपनी मुट्ठी में भींचे उसे कुतरने का उपक्रम किया, मैं इससे घबरा गया और अपनी जान बचाकर आपकी शरण में आया हूँ।”

इन्द्र ने जब यह सुना तो स्वाभाविक था कि वे चौंक गए।

“तुम क्या कह रहे हो राहु? हमने कोई दूसरा राहु नहीं भेजा, फिर कौन हमारे विधान में हस्तक्षेप करने आया है। यह तो विचारणीय है। इसका अभिप्राय तो यह हुआ कि कोई शक्ति हमसे सीधा मुकाबला करना चाहती है।”

और यह कहते हुए इन्द्र अपनी स्वर्णमाला पहने हुए सिंहासन छोड़कर उठ खड़े हुए।

“अच्छा आओ! चलो देखते हैं।” यह कहते हुए राहु के साथ इन्द्र चल दिए।

अपने दिव्य ऐरावत पर सवार देवराज इन्द्र राहु के साथ उस स्थान पर पहुंचे जहां अंजना पुत्र हनुमान सूर्य को पकड़े हुए थे।

राहु इन्द्र को छोड़कर बड़ी तेजी से आगे बढ़ गया। जब हनुमान ने इस विशालकाय दैत्य

को देखा तो उन्होंने सूर्य को छोड़कर इसे फल जानकर पकड़ने के लिए अपना हाथ बढ़ाया।

हनुमान को अपनी ओर हाथ बढ़ाया देखकर राहु घबरा गया। वह उछला और बचाओ, बचाओ की पुकार करता हुआ इन्द्र से गुहार करने लगा।

इन्द्र ने जब राहु की चीख-पुकार सुनी तो वहीं से सान्त्वना देते हुए राहु से कहा—“डरो मत, मैं अभी इसको मार डालता हूँ।” और जैसे ही इन्द्र हनुमान की तरफ बढ़े, हनुमान ने राहु को छोड़कर अब अपना ध्यान ऐरावत की ओर कर लिया।

इन्द्र ने जब यह देखा तो उनकी चिन्ता और अधिक बढ़ गई, वह सोचने लगे कि आखिर यह शक्तिशाली है कौन? उन्हें उस समय हनुमान अग्नि के समान भयानक शक्ति के रूप में लगे जो इन्हें काल का घास बनाना चाहते थे।

पर हनुमान तो बालक थे इसलिए इन्द्र को उनका चेहरा देखकर क्रोध नहीं आया और वात्सल्य उभर पड़ा। तभी हनुमान ने उनके ऐरावत की सूंड पकड़कर उसे अपनी ओर खींचना शुरू कर दिया। इन्द्र देवलोक की ओर ऊपर आकाश में चल रहे थे और हनुमान ऐरावत सहित उन्हें अपना भोज्य बनाने के लिए अपनी ओर खींच रहे थे।

जब बहुत देर तक इन्द्र प्रयास करने पर भी ऐरावत को हनुमान की पकड़ से मुक्त नहीं करा सके और ऐरावत की कर्णभेदी चीख-पुकार उन्हें असह्य हो गई तो उन्होंने अपने मारक अस्त्र वज्र का प्रहार कर दिया।

इन्द्र के वज्र की चोट खाकर हनुमान एक पहाड़ पर गिर पड़े, गिरते हुए उनकी ठोड़ी टूट गई। वास्तव में ठोड़ी (हनु) के टूटने के कारण ही उनका नाम हनुमान पड़ा।

अपने पुत्र पर वज्र का इस प्रकार आघात हुआ देखकर वायु रूप पिता केसरी को अत्यन्त क्रोध आ गया और इन्द्र के इस अपराध का दंड देने के लिए कृत संकल्प हो गए।

वायु का क्रोध तो इन्द्र पर था लेकिन उनके प्रतिशोध ने सभी प्रजाजनों को व्याकुल कर दिया।

शक्तिशाली वायु ने प्रजा के भीतर रहकर भी अपनी गति समेट ली और श्वास का संचार रुक गया। वे अपने शिशु हनुमान को लेकर पर्वत की गुफा में चले गए।

जैसे इन्द्र वर्षा को रोक देते हैं उसी प्रकार वायु के रुक जाने पर प्राणियों का प्राण जाने का भय सताने लगा। वायु के प्रकोप से सभी प्राणियों की सांस बंद होने लगी। उनके अंग और जोड़-जोड़ टूटने लगे और सभी धीरे-धीरे चेतनाशून्य हो गए।

सारे प्राणी त्राहि-त्राहि करने लगे। धर्म कार्य बंद हो गया, तीनों लोकों में अब न यज्ञ हो रहा था और न वेदों का पारायण। ऐसा लग रहा था मानो सभी प्राणी नर्क के गर्त में गिर गए हों।

गन्धर्वों, देवताओं, असुरों और मनुष्यों ने जब यह दशा देखी तो वे प्राणीमात्र के जीवन की रक्षा के लिए प्रजापति ब्रह्मा की शरण में गए।

उस समय देवताओं के पेट इस तरह फूल गए थे मानो उन्हें महोदर का रोग हो गया हो।
उन्होंने हाथ जोड़कर कहा—

“हे भगवान! आप हमारे जनक हैं, प्रजापति हैं, आपने चार प्रकार की प्रजाओं की सृष्टि की है। हम सबको आयु के स्वामी वायुदेव को अर्पित कर दिया है, ये वायुदेव ही हमारे प्राणों के रक्षक हैं लेकिन अब लगता है कि हमारा यह अधिपति हमसे ही विमुख हो रहा है। आज इन्होंने अन्तःपुर की स्त्रियों की भांति हमारे शरीर के भीतर अपने संचार को रोक दिया है और अब यह हमारे सुख के जनक की जगह दुख के जनक हो गए हैं।”

“हे प्रजापति! अब हम वायु रोध से पीड़ित अपने प्राणों की रक्षा के लिए आपकी शरण में आए हैं, आप ही हमारी रक्षा कर सकते हैं।”

अपने सम्मुख निवेदन के लिए आए प्रजाजनों की यह दुखद व्यथा सुनकर जगत पालक और जगत रक्षक ब्रह्मा ने कहा—

“आपने यह जो कथा सुनाई है, इसका कोई कारण अवश्य होगा क्योंकि आज तक वायु ने कभी आपके साथ ऐसा आचरण नहीं किया।”

“हम इसमें असमर्थ हैं क्योंकि हमें नहीं मालूम कि हमसे क्या अपराध हुआ है जो वायु ने हमें अपने कोप का भाजन बना लिया।”

“तो सुनिए, जिस कारण ने क्रुद्ध होकर अपनी गति रोक दी है, वह साधारण कारण नहीं है। आपको शायद ज्ञात नहीं, आज देवराज इन्द्र ने राहु की बात सुनकर उसकी रक्षा के ख्याल से वायु के पुत्र हनुमान पर वज्र का प्रहार कर दिया है और जिसके कारण वह अबोध बालक गिरकर चोटग्रस्त हो गया है। बालक पर इन्द्र का यह क्रोध और वज्र का प्रहार वायु के लिए ही क्या किसी भी पिता के लिए असह्य हो सकता है। इसमें यदि वायु क्रोध करता है तो उसका क्या दोष है? दोष तो इन्द्र का है जिसने बिना बात राहु जैसे दैत्य के लिए अनावश्यक रूप से वायु से बैर मोल ले लिया। आप ही बताइए, क्या इन्द्र का यह आचरण उचित है?”

“किन्तु हे देव! वायुदेव तो स्वयं शरीर नहीं धारण करते बल्कि प्राणी मात्र के शरीर में रहकर उसमें प्राणों का संचार करते हैं और वायु के बिना तो यह शरीर जड़ है। वायु ही सबका प्राण है, वायु ही सुख है और वायु ही सम्पूर्ण जगत है। वायु के अभाव में कोई भी प्राणी जीवन की कल्पना नहीं कर सकता।”

“वास्तव में आपका दुख मैं समझता हूँ।” यह सान्त्वना देते हुए ब्रह्माजी ने कहा—“इसमें कोई मतभेद नहीं है कि वायु जगत की आयु है किन्तु इस समय तो वायु ने संसार के सभी प्राणियों को त्याग दिया है। अतः हे देवताओं, गन्धर्वों, असुरों और मनुष्यों! हमें शीघ्र ही उस स्थान पर चलना चाहिए जहां एकान्त गुफा में वायुदेव अपने पुत्र के साथ छुपे बैठे हैं। यदि इसमें विलंब हुआ तो ऐसा न हो कि उनके प्रसन्न हुए बिना सभी का विनाश हो जाए।”

ब्रह्माजी के द्वारा यह आदेश पाकर सभी निवेदन करने वाले जन ब्रह्मा के साथ उस स्थान

पर पहुंचे जहां वायुदेव अपने क्षतिग्रस्त पुत्र को लिए गुप्त वास किए बैठे थे।

इधर तो ब्रह्मा के साथ ये सभी लोग वायु से प्राण याचना करने पहुंचे लेकिन दूसरी ओर माता अंजना को ज्ञात ही नहीं हो सका कि हुआ क्या है? उसे वह चिंता अवश्य थी कि उसके बेटे को क्या हो गया? वह अभी तक क्यों नहीं लौटा?

ममता तो आखिर ममता होती है। वह अपने बेटे के लिए कलपने लगी, विलाप करने लगी और अपने पति साक्षात् वायुदेव से निवेदन करने लगी—

“कहां हो देव! कृपा करके अपन पुत्र के प्राणों की रक्षा कीजिए। मुझे नहीं ज्ञात कि इस समय वह कहां है?”

गुफा में बैठे हुए वायुदेव ने जब अन्तर्ज्ञान से अंजना का यह हाल देखा तो उन्हें वास्तव में उनकी चिंता हो आई लेकिन इस समय तो वे उलझे हुए थे। स्वयं देवगण, ब्रह्मा के साथ आए हुए थे। असुर और गन्धर्व भी थे और उनका इन्द्र पर क्रोध भी था इसलिए इस समस्या का समाधान किए बिना तो लौटना संभव नहीं था।

वायुदेव की गोद में ही उनका वह चोट खाया पुत्र चुपचाप मीठी नींद सो रहा था। उसके अंगों की शोभा सूर्य के समान प्रकाशवान थी।

वायु अपने पुत्र के इस प्रकार चोट लग जाने से दुखी थे।

ब्रह्मा को देखकर वह अपने शिशु को लिए उनके आगे आकर खड़े हो गए।

उनके कानों में कुण्डल हिल रहे थे, माथे पर मुकुट और कंठ में हार शोभा दे रहा था।

पुत्र को गोदी में लिए हुए ही वायुदेव ने ब्रह्माजी के चरण स्पर्श किए।

प्रजापति ब्रह्मा ने पुत्र स्नेह के भाव से अपने हाथ उस मूर्छित शिशु पर फेरते हुए ऐसा आभास दिया मानो कह रहे हों—हे बालक! बहुत देर सो लिए, अब उठ जाओ।

हाथ फेरने का कुछ ऐसा चमत्कार हुआ मानो हनुमान ब्रह्माजी के इस स्पर्श की ही प्रतीक्षा कर रहे थे।

हनुमान की चेतना लौट आई थी, वे फिर उसी प्रकार मचलने लगे थे। गोदी में तो वे रुक ही नहीं सकते थे।

यह तो विधान था और वहां उनका कोई वश नहीं था वरना हनुमान तो मां के गर्भ में भी रुकने वाले नहीं थे।

हनुमान को इस प्रकार जीवित जानकर वायुदेव अत्यन्त प्रसन्न हो गए और उन्होंने अपना स्वरूप जो समेटा था वह फिर से गतिमान कर दिया। सभी प्राणियों में फिर से वायु का संचरण विधिवत होने लगा।

जिस प्रकार भयंकर उमस में वायु का एक शीतल झोंका सबको राहत दिलाता हुआ चला

जाता है, उसी प्रकार वायु के अवरोध से छूटी प्रजा प्रसन्न हो गई और अब सभी तरफ ऐसा लगने लगा मानो कमल खिल उठे हों।

यह देखकर ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्य के ऐश्वर्यों से सम्पन्न ब्रह्मा, विष्णु और महेश के रूप में तीन मूर्ति धारण करने वाले, त्रिलोक में वास करने वाले तथा बाल्य, पौगंड तथा कैशोर दशाओं से युक्त देवताओं के द्वारा सदा पूजे जाने वाले ब्रह्माजी ने वायुदेव को प्रसन्न करते हुए देवताओं से कहा—

“हे देवगणो! अभी आपने दो चमत्कार देखे, पहला वायुपुत्र ने खेल-खेल में सूर्य को देखकर, उसे फल समझकर पृथ्वी लोक से देवलोक तक की यात्रा उछलकर पूरी कर ली और दूसरा आश्चर्यजनक और कौतूहल पैदा करने वाला कर्म यह किया कि जो राहु, सूर्य और चन्द्रमा को ग्रसता है, जिस पर देवताओं का भी वश नहीं, उसे भी भयभीत कर दिया। इन्द्र के वज्र ने वृत्तासुर को मार डाला था लेकिन यह बालक उस वज्र से नहीं बल्कि ऊंचाई से गिरने के कारण मूर्च्छित हुआ था। अगर यह उस वज्र को देख लेता तो इन्द्र समेत उस वज्र का भक्षण कर लेता फिर आपके पास अपने बचाव का कोई साधन नहीं होता। इसमें आश्चर्य की बात जो है वह तो है ही पर जान लेने वाली बात यह है कि यह राक्षस नहीं, दानव या दैत्य नहीं, यह साक्षात् बालरूप ब्रह्म का ही अंश है।”

“यह बालक सूर्य की ओर जो दौड़ा था, यह उसकी बाल सुलभ क्रीड़ा ही थी, किसी प्रकार का अनिष्ट करने का उसका कोई भाव नहीं था। यह तो भविष्य में भी आप लोगों के बहुत से कार्य सिद्ध करेगा अतः आप वायु देवता को प्रसन्न करने के लिए इस बालक को वरदान दें।”

ब्रह्माजी से यह सुनकर इन्द्र को अपनी गलती का अनुभव हुआ और अब उन्होंने बड़े धैर्य से वत्सल भाव जताते हुए इस बालक की टूटी हुई हनु ठोड़ी को देखते हुए वायुदेव से कहा—“हे देवश्रेष्ठ! राहु ने मेरी बुद्धि पर पर्दा डाल दिया था। इतना सुंदर और प्रिय बालक वज्र की चोट का अधिकारी नहीं था, मैं उसके लिए आपसे क्षमा चाहता हूँ।” और यह कहते हुए इन्द्र ने कमलों की एक सुंदर माला इस बालक के गले में डाल दी।

गले में माला पड़ते ही हनुमान की ठोड़ी का घाव ठीक हो गया।

अब इन्द्र ने कहा—

“मेरे हाथ से छूटे हुए वज्र के द्वारा इस बालक की हनु टूट गई थी इसलिए इस वानर श्रेष्ठ का नाम आज से तीनों लोकों में हनुमान के नाम से प्रसिद्ध रहेगा। मैं इसे वरदान देता हूँ कि यह कभी मेरे वज्र से भी नहीं मारा जा सकेगा।”

इन्द्र के द्वारा यह वरदान पाकर भोला बालक हनुमान बड़ी आश्चर्यजनक दृष्टि से इन्द्र को देखने लगा।

इसके बाद अंधकार का नाश करने वाले सूर्य ने हनुमान को वरदान देते हुए कहा—

“हे कपिश्रेष्ठ! मैं तुम्हें अपने तेज का सौवा अंश प्रदान करता हूँ। इसके साथ-साथ जब तुम

में शास्त्र अध्ययन करने की शक्ति आ जाएगी तब मैं तुम्हें शास्त्रों का ज्ञान प्रदान करूंगा। उससे तुम एक अच्छे वक्ता तो बनोगे ही तुम्हारे समान अन्य कोई ज्ञानी नहीं होगा।”

वरुण ने हनुमान को वर देते हुए कहा—

“दस लाख वर्षों की आयु हो जाने पर भी तुम मेरे बंधन और जल से किसी प्रकार प्रभावित नहीं हो सकोगे।”

यम ने हनुमान को अवध्य और नीरोग रहने का वर दिया।

कुबेर ने हनुमान से संतुष्ट होकर उसे यह वरदान दिया कि “तुम्हें कभी युद्ध में कोई विषाद नहीं होगा।” और यह कहते हुए उन्हें एक दिव्य गदा भेंट की। जो संग्राम में हनुमान की रक्षक रहेगी।

इन सबके पश्चात शंकर ने उसे यह वर दिया कि वह बालक स्वयं उनके द्वारा और उनके शास्त्रों द्वारा भी अवध्य रहेगा।

देव शिल्पियों में श्रेष्ठ और बुद्धिमान विश्वकर्मा ने बाल्य सूर्य के समान शोभा वाले उस शिशु को देखकर यह वरदान दिया—

“मेरे बनाए हुए जितने भी दिव्य अस्त्र-शस्त्र हैं, यह बालक उन सबसे अवध्य रहेगा और चिरंजीवी होगा।”

अंत में स्वयं ब्रह्मा ने उस बालक को लक्ष्य करके कहा—“हे वत्स! तुम दीर्घ आयु होओगे। महात्मा कहलाओगे और सभी प्रकार की ब्रह्म दंडों से अवध्य रहोगे।”

इस प्रकार सभी देवताओं के द्वारा वरदान प्राप्त हनुमान वहां स्वयं एक साक्षात् देवमंडल के समान शोभायमान होने लगे। अब ब्रह्माजी ने प्रसन्न मन होकर वायु से कहा—“हे मारुत! तुम्हारा यह पुत्र मारुति शत्रुओं के लिए भयानक और विप्लवकारी होगा किन्तु मित्रों के लिए उन्हें अभयदान देने वाला होगा। युद्ध में इसे कोई नहीं जीत पाएगा। यही नहीं, यह इच्छानुसार रूप धारण कर सकेगा। जहां चाहेगा, वहां जा सकेगा। इसकी गति इसकी इच्छा पर निर्भर होगी। यह बड़ा यशस्वी होगा, वायुदेव!”

“मैं यह भविष्यवाणी करता हूँ कि आने वाले समय में रावण का संहार करने में और राम का सेवक होकर उनकी सेवा करने में यह अद्भुत रोमांचकारी कार्य करेगा।”

ऐसा कहते हुए सभी देवगण ब्रह्मा सहित अपने-अपने लोक को लौट गए।

तभी, हनुमान को—जो अब तक इस सारे दृश्य को बड़े कौतुक से देख रहा था, अचानक अपनी मां की याद आई और वह चिल्ला पड़ा।

“मां!...मां!...”

अरे लगता है बहुत देर हो गई। तुम्हारी माता अंजना तुम्हारी इंतजार कर रही होगी।” तभी यह ध्यान करके गंध वाहन वायु पुत्र को लेकर घर आ गए।

अपने सामने पुत्र को पाकर देखते ही मां पहचान गई, अवश्य कोई घटना घटी है।

“अरे! यह तेरी ठोड़ी पर निशान कैसा है? और तू कहां चला गया था रे? मैं कब से तेरी राह देख रही हूं।”

इससे पहले कि हनुमान कुछ कहते, वायुदेव ने सारी कहानी कहते हुए उसे बताया—“अब तू इसे साधारण बालक मत समझ बल्कि अत्यन्त शक्तिशाली और पूर्ण पुरुष मान। सभी देवताओं ने इसे सब प्रकार के वरदान दे दिए हैं।”

और फिर अंजना को समझाते हुए वायुदेव महाराज ने कहा—“देवी! जब इस बालक के पास कोई वरदान नहीं था तब तो यह आकाश तक की छलांग लगाकर सूर्य को सेव समझकर खाने के लिए दौड़ गया था और अब तो यह इतने सारे वरदानों से युक्त हो गया है इसलिए अब इसका ध्यान ज्यादा रखना पड़ेगा। इसका पालन-पोषण करना हमारे बस का नहीं है। कैसे नियंत्रण कर पायेंगे हम इसकी दिव्य शक्तियों पर?”

पति की यह बात सुनकर अंजना ने कहा—“वाह! आप यह क्या कहते हैं? जब इसको देवताओं ने अवध्य रहने का वरदान दे दिया है तो फिर क्या चिंता? एक मां का मन बड़ा कोमल होता है और वह सदैव बच्चे के होने वाले अनिष्ट से भयभीत रहती है लेकिन जब मुझे यह ज्ञात हो गया है कि मेरा बालक वज्र भी सह सकता है, जल और अग्नि भी इसका कुछ नहीं बिगाड़ सकते तो फिर मुझे इसके बारे में क्या चिंता? जो मेरा कष्ट था वह तो आपने दूर कर ही दिया।”

और मां अंजना ने यह कहते हुए वर पाकर शक्ति सम्पन्न बने हनुमान को अपने आंचल में छिपा लिया।

अब तो हनुमान की गतिविधियां और अधिक विप्लवकारी हो गईं। वह नित्य कोई न कोई बड़ा उपद्रव कर देते थे। निर्भय हनुमान अब महर्षियों के आश्रम में जा-जाकर उपद्रव करने लगे।

कभी यज्ञ के पात्र तोड़ देते थे, कभी अग्निहोत्र के साधन नष्ट कर देते थे। ऋषियों के वल्कल फाड़ देते थे।

हनुमान के ये सारे कर्म देखकर भी ऋषिगण न तो उन्हें शाप दे सकते थे और न उनका कुछ बिगाड़ सकते थे। उनके पास अपने बचाव का कोई साधन ही नहीं था क्योंकि ब्रह्मा ने उन्हें ब्रह्मदंड से वंचित जो कर दिया था और ऋषियों के पास तो केवल ब्रह्मदंड ही होता है इसलिए लाचार ऋषिगण उनके उपद्रव को सह जाते थे।

यद्यपि उनके पिता केसरी ने हनुमान को कई बार अपने इस उदंड व्यवहार के लिए मना भी किया, समझाया भी फिर भी उनकी बाल वृत्ति पर इसका कोई असर नहीं हुआ और जब तब समय मिलता वे मर्यादा का उल्लंघन कर बैठते।

हमेशा समय एक सा नहीं रहता। हनुमान के इस कृत्य पर दुखी होकर महर्षि भृगु और

अंगिरा के वंश में उत्पन्न ऋषियों ने हनुमान की उदंडताओं को देखते हुए उन्हें शाप दे डाला और कहा—

“हे वानर वीर! जिस बल के भरोसे पर तुम हमें सता रहे हो, जाओ हम तुम्हें शाप देते हैं कि तुम उस बल को ही भूल जाओगे, तुम्हें ज्ञात ही नहीं रहेगा कि तुम्हारे पास इतना बल है लेकिन समय पड़ने पर जब कोई तुम्हें तुम्हारे बल का स्मरण कराएगा तभी तुम्हारा बल पुनः प्रकट होकर रचनात्मक रूप में उपयोग में आएगा।”

महर्षियों ने अपने कमंडल से जल डालकर उसके छींटे बालक हनुमान के मुख पर डाल दिए। जल के छींटों पड़ते ही हनुमान की सारी उदंडता क्षण भर में सौम्य और शील में परिवर्तित हो गई। उनका ओज घट गया और अब वे मधुर प्रकृति के, सबका सम्मान करने वाले बालक के रूप में शिष्ट आचरण के लिए जाने जाने लगे।

ऋषियों का शाप पाकर जब हनुमान एक आज्ञाकारी बालक के रूप में अपने घर लौटे तो मां अंजना ने उसके व्यवहार में परिवर्तन देखा। हनुमान की उछलकूद शान्त प्रकृति में ढल गई थी तो मां को लगा, यह अवश्य कोई जादू-टोना हुआ है। लेकिन एक दृष्टि से मां को सुख भी मिला, चलो अच्छा है, अब कम से कम आस-पास से इसकी शिकायत तो नहीं आएगी।

अब हनुमान एक आज्ञाकारी पुत्र के रूप में विद्याध्ययन करते हुए पलने-बढ़ने लगे।

सुग्रीव से मैत्री

किष्किन्धा के सम्पूर्ण राज्य के स्वामी और अधिपति ऋक्षराज के दो पुत्र थे, बाली और सुग्रीव। ऋक्षराज सूर्य के समान तेजस्वी थे और महाराज केसरी के समान ही अपने क्षेत्र के अधिपति।

जब तक ऋक्षराज जीवित रहे, वानरों के दल में कभी कोई असंतोष नहीं उपजा। वह एक सही मायने में प्रजापालक और प्रजा के प्रति पितावत व्यवहार करने वाले बड़े दयालु राजा थे।

इनके दोनों पुत्र भी इन्हीं के समान गुणी, तेजस्वी और बड़े पराक्रमी थे। लेकिन आयु की एक निश्चित सीमा होती है इसलिए जो प्राणी जगत में आता है वह जाता भी है। अतः काल धर्म के विधान के अनुसार वृद्धावस्था आने पर ऋक्षराज भी मृत्यु को प्राप्त हुए।

राजा की मृत्यु के बाद मंत्रियों ने सिंहासन पर महाराज के ज्येष्ठ पुत्र बाली को किष्किन्धा नरेश के रूप में प्रतिष्ठित किया। बाली के राजा बनने पर उनके छोटे भाई सुग्रीव को युवराज बना दिया।

बाली और सुग्रीव दोनों ही समरूप थे। दोनों में किसी को भी पहचान पाना बड़ा कठिन था, दोनों की शकल बहुत मिलती-जुलती थी। बाली और सुग्रीव में भाईचारा तो था ही, वे एक दूसरे के अभिन्न मित्र भी थे इसलिए दोनों में अटूट प्रेम था और किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं था।

लेकिन एक बार ऐसी घटना घट गई कि यह पारस्परिक प्रेम द्वेष में बदल गया और दोनों भाई एक दूसरे के शत्रु हो गए।

कारण भी कोई बहुत बड़ा गहरा नहीं था, सुग्रीव तो सदा ही भाई के प्रति समर्पित था और उनकी सेवा में लगा रहता था और बाली शासन को बढ़ाने में व्यस्त था।

लेकिन घटना तो घटती है उसे कौन रोक सकता है? एक दानव के वध के लिए दोनों भाई उसका पीछा करते हुए चल दिए क्योंकि वह मायावी दानव बड़ा तेजस्वी था। वह मय दानव का पुत्र और दुन्दुभि का बड़ा भाई था। बाली के साथ उसका बैर हो गया।

एक दिन आधी रात के समय जब सब लोग सो रहे थे, वह मायावी दानव किष्किन्धा के दरवाजे पर आ गया और क्रोध में भरकर बाली को ललकारने लगा। दोनों भाई उस समय सो रहे थे लेकिन उसकी गर्जना सुनकर सुग्रीव की नींद खुल गई। जब उसने राक्षस की ललकार सुनी तो उससे नहीं रहा गया और वह तेजी से बाहर आ गया। उसे असुर को मारने के लिए जाता देखकर अन्तःपुर की स्त्रियों ने उसके पैर पकड़ लिए लेकिन वह तो रुकने वाला नहीं था।

अन्तःपुर की स्त्रियों का यह विलाप सुनकर बाली की भी नींद खुल गई और जब उसने देखा कि मायावी राक्षस दरवाजे पर चुनौती दे रहा है तो सुग्रीव को रोककर वह खुद उससे लड़ने के लिए चल दिया।

सुग्रीव ने अपने भाई को जाता देख स्वयं भी उन्हीं का अनुसरण किया और वे राक्षस के

पीछे चल दिए। संयोग की बात कि राक्षस दौड़ता हुआ एक पर्वत गुफा में घुस गया तो बाली भी उस गुफा में उसका पीछा करते हुए जाने लगा।

बाली ने सुग्रीव से कहा—“देखो, मैं इस गुफा में उस राक्षस के अभिमान को चूर करने के लिए जा रहा हूँ। मेरे लौटने तक तुम यहीं ठहरना और सावधान रहना।”

सुग्रीव अपने दायित्व को जानकर वहीं खड़े रह गए और बाली गुफा में प्रवेश कर गए। बाली ने सुग्रीव को साथ ले जाने का उसका निवेदन स्वीकार नहीं किया। हारकर सुग्रीव को बाहर ही प्रतीक्षा करनी पड़ी लेकिन आश्चर्य की बात तो यह थी कि बाली को उस गुफा में एक वर्ष से अधिक का समय बीत गया। सुग्रीव के लिए बाहर खड़े रहकर प्रतीक्षा करना बड़ा कठिन हो गया। तभी उसे लगा, उसने कोई भयानक आवाज सुनी। एक हृदय विदारक और मारक चीत्कार हुआ जैसे किसी ने प्राण छोड़ते हुए घुटी-घुटी आवाज में ईश्वर का स्मरण किया हो और तेज रक्त धार बह निकली। इसी के बीच एक जोर की आवाज—सुग्रीव! ठहरना मैं आ रहा हूँ। सुग्रीव के कानों में पड़ी।

रक्त की धारा और सुग्रीव की पुकार दोनों ने सुग्रीव के मन में यह निश्चय कर दिया कि उस राक्षस ने अवश्य ही बाली को मार डाला है और अब वह सुग्रीव को मारने के लिए गुफा से बाहर आना चाहता है।

वह सोच में पड़ गया और फिर अपने बचाव के लिए उसने एक पत्थर की चट्टान उस गुफा के मुँह पर रख दी। लौटकर नदी के किनारे अपने प्रिय बड़े भाई को जलांजलि दी और शोक से व्याकुल हुआ वह किष्किन्धा में लौट आया।

जब किष्किन्धा में सबने यह दुखद समाचार जाना कि मायावी राक्षस ने बाली का वध कर दिया है और उससे बचने के लिए सुग्रीव उस गुफा पर बड़ी चट्टान रखकर चला आया है तो सबने सोच विचार कर यही निश्चय किया कि अब बाली की अनुपस्थिति में युवराज सुग्रीव को ही महाराज के पद पर प्रतिष्ठित किया जाए।

अब सुग्रीव का राज्याभिषेक कर दिया गया और वे किष्किन्धा के राजा हो गए।

सुग्रीव न्यायपूर्वक अपने राज्य का संचालन करने लगे।

अभी उन्हें राज्य प्राप्त किए हुए कुछ ही दिन बीते थे कि उस दानव को मारकर महाराज बाली वापिस अपने राज्य में लौट आए। सुग्रीव ने जब यह सुना तो एक तरफ तो उसके मन में अपने प्रिय भाई के वापिस लौटने की प्रसन्नता जागी तो दूसरी ओर एक डर भी पैदा हुआ क्योंकि वह तो गुफा के मुँह पर पत्थर इसलिए रखकर आया था कि उसने स्वयं जो चिंघाड़ सुनी थी, वह बाली की थी और तेज रक्त की धारा से उसे यह शंका हुई कि राक्षस ने अवश्य ही बाली को मार दिया है। लेकिन अगर वास्तव में बाली ने राक्षस को मारा है तो गुफा के मुँह पर चट्टान से भाई के मन में अवश्य मेरे प्रति अविश्वास जागा होगा।

और इस तरह सुग्रीव अपने आपको और उस घड़ी को कोसने लगा। वह सोच रहे थे कि

जहां इतने दिन तक भाई की प्रतीक्षा की, वहां कुछ दिन और भी प्रतीक्षा की जा सकती थी।

इधर सुग्रीव डर रहा था भाई के क्रोध से और उधर सत्य ही बाली के मन में सुग्रीव के प्रति जो क्रोध उपजा था, वह उसे यहां राजा बना देखकर निश्चय में बदल गया। बाली क्रोध से पागल हो उठा। बाली ने सुग्रीव को पहले तो क्रोध में बहुत लानतें दी और साथ ही उसके सभी मंत्रियों को कैद कर दिया।

वैसे अपनी शक्ति में सुग्रीव भी कम नहीं था, वह चाहता तो बाली को बंदी बना सकता था लेकिन उसके मन में तो भाई के प्रति अपार स्नेह था। एक अर्थ में वह उसे अपना गुरु मानता था इसलिए उसने ऐसा कुछ भी नहीं किया।

ज्योंही बाली उसके सामने आया, सुग्रीव ने उसका अतिथि सत्कार किया। उसके चरणों में अपना सिर झुकाया लेकिन बाली तो क्रोध में भरा हुआ था। आशीर्वाद देना तो दूर, उसने सुग्रीव की बात तक नहीं सुनी।

सुग्रीव ने अपने भाई बाली को प्रसन्न करने के लिए प्रयत्न किए। किन्तु बाली प्रसन्न नहीं हुआ। वह तो सुग्रीव को स्वार्थी और विश्वासघाती मानता था।

भरी सभा में सिंहासन से उतरकर सुग्रीव ने विनम्र शब्दों में बाली से कहा—“हे अनाथनंदन! यह मेरे लिए बड़े सौभाग्य की बात है कि आप कुशलपूर्वक लौट आए हैं और उस दुष्ट राक्षस का संहार कर दिया। मैं आपके बिना कितना अनाथ अनुभव कर रहा था अपने आपको, मैं यह आपसे क्या कहूँ? आप ही मेरे नाथ हैं। मेरे लिए पिता और भाई दोनों आप ही हैं। मैंने तो आपकी अनुपस्थिति में केवल आपका दायित्व निभाया है, अब आप आ गए हैं तो यह मुकुट संभालिए और यह राज्य भी।”

“मैं तुम्हारी सब चालें जान गया हूँ सुग्रीव, तुम कितने धूर्त हो, तुम मुझे गुफा में बन्द करके चले आए। तुमने सोचा होगा कि रास्ते का कांटा समाप्त हो गया। मैं तुम्हारी इन झूठी बातों में नहीं आने वाला।”

और बाली को न विश्वास आना था और न विश्वास आया लेकिन सुग्रीव ने बड़ी सहजता से अपने सिर का मुकुट उतारकर बाली के सिर पर रख दिया और स्वयं हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

“हे महाराज! बाली! मैं आपका सेवक हूँ, जो अपराध मुझसे हुआ हूँ मैं उसका दंड भुगतने के लिए तैयार हूँ। इसमें किसी का दोष नहीं है, दोष केवल मेरा है अथवा समय का।”

“तुम घाती हो सुग्रीव! मैंने तुम्हें कितना प्यार दिया, कितना अपना पन दिया? तुम्हारा विवाह कराया लेकिन तुमने सब पर पानी फेर दिया। तुम भूल गए कि मैं तुमसे बड़ा हूँ। अगर तुम्हें राज्य चाहिए तो मुझसे कहते, मैं तुम्हारे लिए राज्य छोड़ देता किन्तु इस प्रकार कुटिलता से तुम मेरा राज्य हड़प सकते हो?”

“तुमने समझा होगा कि बाली तो अब लौटेगा नहीं। अरे वो एक चट्टान क्या, मेरे सामने

पर्वत भी आ जाए तो मैं चूरा कर दूंगा। जा दुष्ट तू मेरा छोटा भाई है इसलिए मैं तुझे प्राणदंड नहीं दूंगा लेकिन मेरी एक बात याद रखना कि आज के बाद यदि मैंने तेरी सूरत देख ली तो समझ ले कि तू भी संसार में स्वयं को जीवित नहीं पाएगा।”

बाली क्रोध में फड़फड़ाता हुआ सुग्रीव को देश निकाला देने का आदेश दे रहा था और सुग्रीव अपने भाई के इस क्रोध को देखकर डर रहा था। उसने फिर एक बार निवेदन किया और बाली से कहा—

“यहां मुझे दुखी मन से लौटा देखकर गांववासियों ने मेरा राज्याभिषेक कर दिया। मैंने स्वेच्छा से इस राज्य को ग्रहण नहीं किया है। आप यहां के सम्माननीय राजा हैं और मैं आपका उसी प्रकार सेवक हूँ जिस प्रकार पहले हुए करता था। मंत्रियों, नगरवासियों, नगर सहित यह राज्य आपका मेरे पास धरोहर के रूप में रखा हुआ था। अब मैं इसे आपकी सेवा में वापिस कर रहा हूँ।”

“हे सौम्य! आप मुझ पर क्रोधित न हों। मैं आपके सम्मुख मस्तक झुकाकर और हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ। मुझे तो जबरदस्ती राजा बनाया गया था, उसका भी यह कारण था कि राजा विहीन राज्य अधिक दिन तक रह नहीं सकता है और कोई भी अन्य शत्रु उस पर आसानी से हमला कर सकता है।”

सुग्रीव ने सभी बातें वाली को बड़े प्रेमपूर्वक बताई और कारण भी बता दिया परन्तु बाली का क्रोध शान्त नहीं हुआ और उसने सुग्रीव को बड़ी ही कठोर बातें कहीं।

बाली ने सभी मंत्रियों ओर नगरवासियों को बुलाया और सबके सामने सुग्रीव को अपमानित किया। उसने कहा—

“हे नगरवासियों! आप लोगों को तो ज्ञात है कि एक दिन रात के समय एक मायावी राक्षस मुझसे युद्ध करने आया था। उस राक्षस की खुलकर सुनकर मैं उससे युद्ध करने के विचार से बाहर आया और मेरे पीछे-पीछे मेरा यह क्रूर स्वभाव वाला दुष्ट भाई भी राजभवन से बाहर आ गया।”

“यद्यपि वह राक्षस बड़ा ही भयानक और बलशाली था परन्तु मेरे साथ सुग्रीव को देखकर वह भाग खड़ा हुआ और तेजी से भागते हुए एक गुफा में प्रवेश कर गया।”

“जब वह राक्षस गुफा में घुस गया तो मैंने अपने इस भाई से कहा कि सुग्रीव! इस शत्रु को मारे बिना मेरा किष्किन्धा जाना असंभव है अतः जब तक मैं इस राक्षस को मारकर बाहर नहीं आ जाता तब तक तुम इस गुफा के द्वार पर मेरी प्रतीक्षा करना।”

“यह कहकर और इसका विश्वास करते हुए मैं गुफा के अन्दर प्रविष्ट हो गया। भीतर आकर उस राक्षस को खोजने लगा और मुझे इस सबमें एक वर्ष बीत गया। इसके बाद जब मैंने उस राक्षस को देखा तो उसे उसके सभी बंधु-बांधवों सहित मार दिया। उसके मुख से और छाती से इतना रक्त बहा कि सारी गुफा भर गई।”

बाली ने आगे कहा—“जब मैं उस दुष्ट राक्षस का वध करके लौटा तो मुझे निकलने का कोई मार्ग दिखाई नहीं दिया। क्योंकि गुफा का द्वार तो बन्द था। मैंने सुग्रीव, सुग्रीव कहकर पुकारा किन्तु कोई उत्तर नहीं मिला। मैंने बार-बार लात मार-मारकर उस पत्थर को पीछे की ओर धकेला और तब गुफा से निकलकर यहां तक आया हूं।”

बाली ने सभी लोगों से कहा कि “यह सुग्रीव तो ऐसा क्रूर और निर्दयी है कि इसने तो भाई के प्रेम को भी भुला दिया और सारा राज्य अपने हाथ में लेने के इरादे से मुझे उस गुफा में बन्द कर दिया।”

इस तरह सभी के सामने सुग्रीव को दोषी बताते हुए और अपमानित करते हुए बाली ने उसे घर से निकाल दिया। उस समय उसके शरीर पर भी एक ही वस्त्र था। उस एक वस्त्र को धारण किए ही सुग्रीव घर से निकल गया।

किष्किन्धा राज्य से बाली द्वारा सुग्रीव का निष्कासन वानरों के लिए एक असामान्य घटना थी। बाली के बल के कारण कोई उसका विरोध तो न कर सका किन्तु फिर भी सबके मन में एक असंतोष था।

इधर सुग्रीव ऋष्यमूक पर्वत पर कंदराओं में घूमते हुए अपने निष्कासन का समय व्यतीत कर रहे थे। सुग्रीव के साथ उनके हितैषी जामवन्त और नल-नील आदि कुछ वानर अवश्य थे लेकिन उन्हें एक ऐसे शक्तिशाली सहयोगी की आवश्यकता थी जिससे वे राज्य न सही, पारिवारिक शान्ति तो पा ही सकते हैं।

किष्किन्धा का यह समाचार अब उत्तर में सुमेरू पर्वत पर रहने वाले वानर समूह में पहुंचा तो उस समय वानरराज केसरी स्वयं काफी वृद्ध हो चुके थे। और उनका पुत्र हनुमान अब न केवल बड़ा हो गया था बल्कि ऐसा लगता था कि ऋषियों के शाप से, जबसे वह अपने अतुल बल को भूल बैठा था, उसके सौम्य और शील का अभाव बढ़ गया था। हनुमान के समान पराक्रमी, उत्साही, बुद्धिमान, प्रतापी, सुशील, मधुरभाषी, नीति, निपुण विवेकी ओर गंभीर युवराज शायद ही कोई और हो।

यह वह समय था जब हनुमान असीम शक्तिशाली होकर भी व्याकरण का अध्ययन करने के लिए अपनी शंकाएं पूछने की इच्छा से सूर्य की ओर मुंह का महान ग्रन्थ धारण किए उदयाचल से अस्ताचल तक जाते थे।

हनुमान ने अपनी शिक्षा ग्रहण करते हुए महामास्य का ही अध्ययन नहीं किया बल्कि सूत्र, वृत्ति, वार्तिक आदि का भी पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया। अन्य शास्त्रों के साथ छन्द शास्त्र में भी महारत हासिल किया।

सम्पूर्ण विद्याओं के ज्ञान तथा तपस्या के अनुष्ठान में हनुमान देवगुरु समान थे। ज्ञान के अलावा शक्ति में तो हनुमान भूतल को हिला देने वाले, भूमि के भीतर प्रवेश करने वाले, महासागर की तरह विराट, लोकों को दग्ध करने वाले, साक्षात् अग्निस्वरूपा हनुमान हर दृष्टि से अपने पिता महाराज केसरी के मन को प्रसन्न करने वाले थे।

महाराज केसरी को जब यह ज्ञात हुआ कि बाली ने सुग्रीव को राज्य से निकाल दिया है और वह बेचारा भाई के कोप से डरकर ऋष्यमूक पर्वत पर वनों, कन्दराओं में इधर से उधर लुकता-छिपता अपना जीवन व्यतीत कर रहा है तो उन्हें अत्यन्त दुःख हुआ। केसरी को वह दिन याद आया जब अपने पुत्र हनुमान के जन्म-उत्सव पर किष्किन्धा नरेश महाराज ऋक्षराज पधारे थे। कितनी एकता थी उन दिनों। कितने प्रसन्न थे सब लोग लेकिन कटुता का बीज, जो आज दो भाइयों के बीच उन आया है इसको फलने से पहले कैसे रोका जाए। इस प्रकार तो वानर जाति में ही फूट पड़ जाएगी यही सोच-सोचकर केसरी व्यथित ही रहे थे।

तभी अकस्मात् उन्हें अपने वीर पुत्र हनुमान का स्मरण हो आया। हनुमान बहुत ही धीर, गंभीर और विवेकी है। वह अवश्य ही सुग्रीव को सात्वना देंगे और उसके कष्ट का निवारण भी कर सकेंगे।

केसरी को यह भी ज्ञात था कि ऋषियों के शाप से हनुमान अपने बल को भूल चुके हैं किन्तु स्थिति बनने पर, किसी के स्मरण दिलाने पर वह अवश्य ही पुराने बल को याद कर लेंगे।

इस समय केसरी को लगा कि दक्षिण प्रदेश की इस वानरों की आपसी कलह को शांत करने के लिए उन्हें ही कुछ प्रयास करना होगा। यही सोचकर उन्होंने हनुमान को अपने समीप बुलाया।

“कहिए क्या आज्ञा है, पिताजी?”

“वत्स! तुम्हें ज्ञात है कि इस समय दक्षिण प्रदेश में वानर समूह आन्तरिक कलह के दौर से गुजर रहा है। बाली और सुग्रीव में आपसी भ्रम और अविश्वास के कारण तनाव पैदा हो गया है। दोनों भाई एक-दूसरे के शत्रु हो रहे हैं। और सुग्रीव इस समय संकट में है। मेरा विचार है कि तुम सब भांति सक्षम हो। तुम यदि किष्किन्धा चले जाओ तो सुग्रीव की सहायता कर सकते हो। बाली को अपने बल पर अहंकार हो गया है। ऐसा न हो कि भाई-भाई के बेर में दक्षिण प्रदेश की शांति ही भंग हो जाए और आपसी फूट का लाभ उठाकर राक्षस समूह हम पर हावी हो जाए अतः मेरी राय है कि तुम दक्षिण प्रदेश चले जाओ। आखिर वहां भी तो अपने ही परिवार में जन रहते हैं और उनकी रक्षा का दायित्व कुछ न कुछ तो हम पर भी आता है।”

“ठीक है, जैसी आपकी आज्ञा।”

और यह कहकर हनुमान उत्तर-सुमेरु खण्ड से वायु वेग से चलकर दक्षिण में ऋष्य मूक पर्वत पर आ गए।

सुग्रीव को जब यह ज्ञात हुआ कि कोई विशालकाय वानर हवा में तैरता हुआ उत्तर सुमेरु खण्ड से यहां आया है तो उन्हें विश्वास हो गया कि यह महाराज केसरी ने भेजा होगा।

जामवन्त से परामर्श करके सुग्रीव ने हनुमान का यथोचित सम्मान सत्कार किया और अपनी व्यथा गाथा उन्हें कह सुनाई।

धीर गम्भीर हनुमान ने सब कहानी सुनकर कहा—

“हे महाराज सुग्रीव! आप चिन्ता न करें। आपका खोया राज्य और पत्नी तथा सुख वैभव ही आपको वापिस दिलाने के लिए मैं यहां आया हूं। आप मेरा विश्वास करें।”

सुग्रीव को तो विश्वास था ही, उसने हनुमान को गले लगा लिया।

अब दोनों वानर श्रेष्ठ आपस में मित्र हो गए। सुग्रीव ने हनुमान को अपना मंत्री नियुक्त कर दिया।

हनुमान की राम और लक्ष्मण से भेंट

रमणीय पंपा सरोवर को देखकर राम का मन भर आया। चारों तरफ विशाल वृक्ष ओर और सुन्दर बहता जल किस भावनामय व्यक्ति का हृदय द्रवित नहीं कर देगा। फिर राम तो सीता के प्रति वैसे ही अति भावुक थे और इस समय तो वे वन में अपने वनवास का समय काट रहे थे। उन्हें तो भरत के दुःख और सीता हरण की चिंता से हुई मानसिक वेदना कष्ट पहुंचा रही थी। लेकिन फिर भी यह पंपा उन्हें थोड़ा ही सही सुख तो पहुंचा ही रही थी।

पर्वत की कंदराओ से निकले हवा के झोंके उसकी आवाज के साथ मानो एक मधुर राग अलाप रहे थे।

जान पड़ता था कि ये बसंत रूपी आग उन्हें जलाकर राख कर देगी। मंजरियों से सुशोभित आम, अशोक के वृक्ष और कमलों से घिरी पंपा सभी कुछ तो देखकर राम को सीता की याद आ रही थी लेकिन उनके पास इसका कोई समाधान नहीं था। इसीलिए वे वन-वन भटक रहे थे।

चहकते हुए पक्षी उसकी सुमधुर बोली उनके विरह व्याकुल मन को और अधिक व्यथित कर रहे थे।

लक्ष्मण के लिए राम का यह दुख असहनीय था लेकिन समाधान उनके पास भी कोई नहीं था।

इन्हीं विचारों से उलझे हुए दोनों भाई वन में विचरते हुए बड़े चले जा रहे थे।

दूसरी तरफ अपने भाई के आतंक से घबराया सुग्रीव हनुमान आदि के साथ एक पर्वत की चोटी पर छिपा बैठा था।

उसने जब देखा कि दो तपस्वी वेश धारण किए राजकुमार से युवक इधर ही आ रहे हैं तो उसकी चिंता बढ़ गई।

सुग्रीव ने अपने समीप बैठे हनुमान से कहा, “देखो वीर हनुमान! वे लोग इधर को ही आ रहे हैं। जरा पता तो लगाओ कि ये कौन हैं? कहीं ऐसा न हो कि ये दोनों बाली के भेजे गुप्तचर हों और हमारा भेद लेने आए हों। क्योंकि यदि ऐसा है तो फिर हमें यह जगह छोड़नी ही होगी। क्या सुग्रीव अपने ही राज्य में इतना निरीह हो जाएगा? तुम कोई यत्न करो हनुमान!”

यह कहते हुए सुग्रीव अत्यन्त भयभीत दिखलाई पड़ने लगे थे।

वैसे सुग्रीव धर्मात्मा थे, उन्हें राजधर्म का ज्ञान था। किन्तु बाली ने उनका सारा विवेक हर लिया।

अपने नरेश को इस प्रकार व्यथित हुआ जानकर हनुमान से न रहा गया। इसलिए उसने स्पष्ट शब्दों में कहा—

“आप इस सारी घबराहट को छोड़ दीजिए। बाली आपका कुछ भी नहीं बिगाड़ पाएगा, मेरा विश्वास करें। हां ये दोनों अजनबी कौन है, इसका पता मैं अभी लगाए देता हूं।”

“लेकिन एक सावधानी बरतनी होगी हनुमान!”

“वह क्या?” हनुमान ने कहा।

“तुम एक साधारण विप्र बनकर उनके सम्मुख जाओगे और यदि तुम्हें वे गुप्तचर लगें तो मुझे तुरन्त ही संकेत दे देना। मैं यहां से किसी सुरक्षित स्थान पर चला जाऊंगा।”

अपने नरेश को इस प्रकार डरा हुआ जानकर भी सांत्वना देते हुए वे चलने को तैयार हुए।

वृद्ध जामवन्त ने कहा, “जाओ हनुमान यह प्रिय कार्य भी तुम्हीं सम्भव करोगे।”

अपना लक्ष्य निर्धारित करके हनुमान ऋष्यमूक पर्वत से उस स्थान की ओर उछलते हुए बढ़ चले जहां वे दोनों रघुवंशी राजकुमार राम और लक्ष्मण थे।

हनुमान ने इन राजकुमारों से भेंट के लिए विप्र रूप धारण किया और उनके सम्मुख प्रगट हुए।

“आप सत्यपराक्रमी, धनुर्धारी, राजकुमारों के समान कांति वाले फिर भी खिन्नमना इन वन प्रदेश के लिए अपरिचित जन कौन है और किस प्रयोजन से यहां भ्रमण कर रहे हैं?”

“हे विप्र! हम कौशल के महाराज दशरथ के पुत्र राम और लक्ष्मण हैं। पिता के आदेश से और माता की इच्छा से हम यहां चौदह वर्ष का वनवास काल काटने के लिए आए थे। हमारी पत्नी सीता को लंका का राजा रावण धोखे से चुराकर ले गया है। हम उसी की तलाश में वन भटक रहे हैं और स्वयं को असहाय पा रहे हैं। आप हमें दिखलाई पड़े तो थोड़ा बहुत साहस उपजा हे। अतः हे विप्र! कहो, तुम कौन हो?”

“मैं तो एक साधारण सा कपि हूं और अपने महाराजा सुग्रीव का मंत्री हूं। मेरा नाम हनुमान है। मेरे महाराज सुग्रीव को उनके बड़े भाई बाली ने घर से निकाल दिया है, उनकी पत्नी को छीन लिया है अतः वे इस समय ऋष्यमूक पर्वत पर इधर-उधर छिपकर अपना समय व्यतीत कर रहे हैं।”

“वास्तव में मैं तो यह सोचकर आया था, पता नहीं वन में तपस्वी वेश में बाली के ही भेजे दूत हैं। और वे हमारी गुप्त सूचना बाली को देकर हमारे लिए एक संकट खड़ा कर देंगे। इसीलिए मैं विप्र वेश में यहां आया किन्तु यहां आपसे मिलकर सारी चिन्ता ही दूर हो गयी। आप तो स्वयं सुग्रीव की भांति राज्यहीन और पत्नी वियोगी हैं।”

“मेरे मित्र सुग्रीव बड़े धर्मात्मा हैं। आप चलें, वह आपसे मित्रता करना चाहते हैं। मुझे आप उन्हीं का मंत्री समझें। मैं वायुदेव का पुत्र हूं और ईश्वर के वरदान से जब चाहूं जैसा रूप धारण कर लेने की क्षमता रखता हूं। इस समय भी मैं सुग्रीव का प्रिय करने के लिए ही विप्र वेश में आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूं।”

हनुमान की ये बातें सुनकर राम विचार करने लगे। आदमी तो निश्चय ही योग्य, बुद्धिमान, धीर गम्भीर और नीति निपुण हैं, सत्यभाषी भी है। फिर लक्ष्मण से परामर्श करके वे हनुमान के साथ सुग्रीव से मिलने के लिए चल दिए।

मार्ग में लक्ष्मण ने कहा, “विप्रवर! शायद तुम्हें यह बात नहीं ज्ञात है—हम इस पम्पा सरोवर पर केवल सुग्रीव से ही भेंट करने के लिए आ रहे थे।”

“आपने जिस प्रकार सुन्दर भाषा में अपना परिचय देते हुए, बिलकुल शुद्ध बात कही है, थोड़े में ही जो स्पष्टता दर्शाते हुए अपना अभिप्राय संकट किया है और बात कहते समय अंगों से किसी भी प्रकार का दोष नहीं झलका ऐसा सभा हुआ आचरण कोई महान साधक ही कर सकता है।”

“तुम्हारी वाणी हृदय में मध्यमा रूप में स्थित है तथा कण्ठ में बैखरी रूप से प्रकट हुई है अतः तुम्हारे बोलते समय जो संयत आवाज थी वह स्वयं तुम्हारे योगी होने का प्रमाण है।”

“ये तुम्हारे संस्कार और शास्त्रीय परिपाटी से सम्पन्न तुम्हारा उच्चारण गुण अब्दुत है, अविलम्बित है, हृदय को आनन्द प्रदान करने वाला है। तुम्हारी वाणी सुनकर तो वध करने के लिए तलवार उठाए हुए शत्रु का हृदय भी बदल सकता है।”

“और हे वायु पुत्र! जिस राजा के पास तुम सा दूत अथवा सहयोगी सचिव है, वह कितना सौभाग्यशाली है यह तो स्वतः सिद्ध है। भला उसका कोई कार्य बिना सिद्ध हुए कैसे रह सकता है।”

हनुमान अपने कन्धों पर राम और लक्ष्मण को बिठाए पर्वत की गुफा की ओर चलते हुए लक्ष्मण द्वारा अपने गुणों की प्रशंसा सुनकर बोले—

“हे वीर श्रेष्ठ! किसी अकिंचन सेवक को इतनी उदारता से महानता के शिखर पर बैठा देने वाले आप निश्चय कुलीन ही नहीं दिव्य गुणों से सम्पन्न है। आपमें देवता विराजमान है।”

“अब मुझे लग रहा है, मेरे सखा सुग्रीव को आप सरीखे मित्र मिल गए हैं। अब वह अवश्य ही कष्ट से मुक्ति पा जाएंगे और हे राजकुमारों! वानरराज सुग्रीव को आप जैसे बुद्धिमान क्रोध विजयी और जितेन्द्रिय पुरुषों से मिलने की ही आवश्यकता थी। सौभाग्य की बात है कि आपने स्वयं ही दर्शन दे दिए।”

“वे भी राज्य भ्रष्ट है, और आप पिता के कारण वनवासी हुए। दोनों ही पत्नीहीन हैं, दोनों मित्र एक दूसरे के अवश्य ही सहायक होंगे।”

और इस तरह एक-दूसरे के पूरा परिचय पाकर हनुमान राम लक्ष्मण के साथ वन में छिपे सुग्रीव के समीप पहुंच गए।

ऋष्यमूक पर्वत पर राम और लक्ष्मण को बैठा कर हनुमान मलय पर्वत पर सुग्रीव के पास पहुंचे और उन्हें स्थिति से अवगत कराया।

हनुमान ने कहा—

“हे महाप्राश! जिनका पराक्रम अत्यंत दृढ़ और अमोघ है, वे तो कौशल के महाराज दशरथ के पुत्र राम-लक्ष्मण हैं। अपने पिता की आज्ञा पालन करने के लिए ही ये वन में विचरण कर रहे हैं।”

“हे महाराज! जिन्होंने राजसूय यज्ञ और अश्वमेध का अनुष्ठान करके अग्निदेव को तृप्त किया है। ब्राह्मणों को दान में अनेक गौ प्रदान की है। सत्य का पालन करते हुए जिन्होंने इस पृथ्वी का सदा पालन किया, उन्हीं महाराज दशरथ के ये पुत्र अपनी विमाता कैकेयी के द्वारा पिता से मांगे गये वरदान के उपलक्ष्य में वन वन में भटकने को बाध्य हुए हैं।”

“ये महात्मा श्रीराम मुनियों की भांति नियमों का पालन करने वाले हैं और अपने वनवास का समय दण्डकारण्य में सुख से व्यतीत कर रहे थे कि लंका का राजा रावण इनकी अनुपस्थिति में इनकी पत्नी को हर कर ले गया। वे उसी अपनी प्राण वल्लभा को ढूंढते हुए आपकी शरण में आए हैं।”

“हे महाराज! ये दोनों भाई आपसे मित्रता करना चाहते हैं। मेरा निवेदन है कि आप चल कर इन्हें अपनावें। इनका यथोचित सम्मान करें। और इनसे मिलकर इनकी मित्रता को स्वीकार करें।”

“प्रिय हनुमान! तुमने जो यह बात मुझे बताई है निश्चय ही मेरे मन को शांति देने वाली है। मैं निश्चय ही उनके स्नेह का आदर करूंगा, चलो मैं चलता हूं।”

और ऐसा कहते हुए सुग्रीव हनुमान के साथ श्रीराम और लक्ष्मण से मिलने के लिए चल दिए।

ऋष्यमूक पर्वत पर राम और लक्ष्मण बड़ी अधीरता से सुग्रीव की प्रतीक्षा कर रहे थे। हनुमान को सामने से सुग्रीव के साथ जाता देखकर दोनों ही भाइयों को बड़ा सुख मिला क्योंकि इस वन में कोई तो मिला जिसे वह अपना कह सकें वरना दूर-दूर तक कोई भी अपना दिखाई नहीं पड़ता था।

सुग्रीव ने राम के समीप पहुंचकर बड़ी आत्मीयता से उन्हें गले लगा लिया। राम यह देखकर अभिभूत हो गये।

वीरवर हनुमान ने राम लक्ष्मण से सुग्रीव के बारे में जो कुछ जैसा बताया था और सुग्रीव को राम का परिचय देते हुए जैसा कहा था, दोनों ही पक्षों ने वैसा ही पाया। इस अद्भुत दृश्य को देखकर वृद्ध शिरोमणी जामवन्त भी अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने अपना आशीर्वाद देते हुए कहा, “आप दोनों की मैत्री सफल हो।”

दोनों ने हाथ बढ़ाकर एक बार फिर एक दूसरे को गले से लगा लिया।

हनुमान ने अब अग्नि को प्रज्ज्वलित करके फूलों द्वारा अग्नि पूजन सम्पन्न कराया और फिर एक दूसरे ने एक दूसरे के गले में फूल माला डालकर मैत्री उत्सव को सम्पन्न कराया। राम

और सुग्रीव दोनों ने ही अग्नि की परिक्रमा करके मैत्री की दृढ़ता प्रदान करते हुए एक दूसरे का हृदय से सहयोग करने का संकल्प लिया।

इस समय ऋष्यमूक पर्वत की छटा देखते ही बनती थी। सुग्रीव के सहायक सभी वानर आ आकर जुड़ रहे थे। सभी यह दृश्य देखकर आनन्द मग्न हो रहे थे।

हनुमान ने ही उस सबका आतिथ्य सत्कार किया।

सुग्रीव ने राम से भाव विह्वल होकर कहा, भगवन! आप आज से मेरे मित्र हुए। आज से हम दोनों का सुख दुख एक ही है। इसके बाद सुग्रीव ने अधिक पत्तों और फूलों वाली शाल वृक्ष की एक शाखा तोड़ी और उसे बिछाकर वे श्रीराम के साथ ही उस पर विराजमान हुए। हनुमान ने चन्दन वृक्ष की एक शाख तोड़कर लक्ष्मण को बैठने के लिए आसन दिया।

अब सुग्रीव ने विधिवत रूप से राम को अपनी दुखों भरी गाथा सुनाई और उनसे अपने त्राण के लिए निवेदन किया।

राम ने सारी कथा सुनकर हंसते हुए सुग्रीव से कहा, “मेरे तुणीर में ये बाण अमोघ हैं मित्र! इनका बार कभी खाली नहीं जाता। तुम इसका विश्वास रखो और समय आने दो।” और यह कहते हुए राम ने एक बाण शाल वृक्ष की ओर लक्ष्य करके छोड़ दिया।

राम के धनुष से छूटा वह बाण सातों शाल वृक्षों को चीरता हुआ पृथ्वी के सातों तलों को भींधता हुआ पाताल में चला गया।

सुग्रीव यह देखकर हतप्रभ रह गए किन्तु हनुमान जो अब तक शान्त थे, प्रभु की माया को पहचान कर मुदित मन उनके चरणों में गिर कर कहने लगे—

“हे परम पूज्य! आज मुझे ज्ञात हो गया है, आप साधारण पुरुष नहीं हैं, आप साक्षात् नारायण के अवतार हैं आज आपको अपने सम्मुख देखकर हम वास्तव में तर गए। कितने दयालु हैं आप जो हम पर यह कृपा की। हमें अपने दर्शनों से लाभान्वित कराया।”

राम केवल मुस्करा दिए।

वह अपने बल के बारे में आश्वस्त थे किन्तु सुग्रीव ने जिस पर बाली के बल को महत्व देकर यह शंका प्रकट की थी कि बाली से टक्कर लेना एक कठिन कार्य है इसके निवारण के लिए ही राम को अपना कौशल दिखलाना पड़ा।

राम के द्वारा निर्दिष्ट करने पर सुग्रीव ने लंगोट कस अपनी गदा लेकर बाली को ललकारा।

पहले बार तो बाली को देखकर राम भी आश्चर्य में पड़ गए। दोनों भाईयों की शक्ल में समानता होती है पर यहां तो ऐसा लग रहा था मानो ये जुड़वां भाई हो।

राम सुग्रीव ओर बाली में भेद नहीं कर पाए इसीलिए वे बाली का वध नहीं कर सके।

और बाली ने सुग्रीव की जब बुरी तरह धुनाई की तो सुग्रीव घबरा उठा और भाग खड़ा हुआ। क्योंकि बाली को तो यह वरदान था कि जो भी उसके सम्मुख आकर लड़ेगा उसका

आधा बल बाली में आ जाएगा। सुग्रीव फिर भला बाली का मुकाबला कैसे कर पाता !

किन्तु दूसरी बार श्रीराम ने फिर से सुग्रीव को साहस दिला कर बाली को ललकारने को कहा—लेकिन अब की बार उसके गले में पहचान के लिए वनमाला डाल दी। साल वृक्ष की ओट में से राम ने बाली का वध कर दिया और अपने मित्र को कष्ट से मुक्त किया।

हनुमान का शक्ति को पहचानना

समुद्र के किनारे खड़े-खड़े हनुमान सोच रहे थे—कितना समय बीत गया। बचपन गया, युवावस्था भी बीत रही है और मैं अपनी ही अतुल शक्ति से अपरिचित रहा। फिर जामवन्त की ओर देखकर उसने कहा—

“जामवन्त जी! अब आप जानते थे कि मैं पवनपुत्र इतनी शक्ति रखता हूँ तो आपने मुझे पहले से इसका स्मरण क्यों नहीं कराया।”

“तुम्हें तो ऋषियों का शाप था। वह शाप किसी ऐसे निमित्त के लिए ही टूटना था जैसा समय आज आ गया है।”

“श्री राम के हित कार्य करने को अदम्य इच्छा रखते हुए भी तुम उसे पूरा करने में स्वयं को असमर्थ पाकर हताश जब सबसे अलग और निराश बैठे थे तो मुझे तत्काल यह स्मरण हो आया।”

“वानर जगत के वीर, सम्पूर्ण शास्त्रों के ज्ञाता जिस प्रकार महामुनि कश्यप के महाबली पुत्र और पक्षियों में श्रेष्ठ गरुड़ विख्यात है उसी प्रकार तुम भी तीव्रगामी हो। तुम्हारी गति पवन से भी तीव्र है।”

“उनके दोनों पंखों में जो बल है, वही बल तो तुम्हारे इन दोनों पंख रूपी हाथों में है। तुम्हारा वेग उनसे किसी प्रकार कम नहीं है।”

“तुम्हें शायद यह ज्ञात भी न हो—पुंजिक स्थल नाम की देव अप्सरा—समस्त अप्सराओं में अग्रगण्य मानी गई है। एक बार वह एक तपस्वी के द्वारा शापग्रस्त हो गई और उसे कपि योनि में जन्म लेना पड़ा वानरराज कुंज के यहां उत्पन्न वह अप्सरा अंजना के रूप में जन्मी। उसके समान सुंदर इस भूतल पर उस समय कोई नहीं था। नहीं अंजना तुम्हारी मां है। तुम्हारे पिता महाराज केसरी के साथ ही उसका विवाह हुआ।”

“हे वीरवर हनुमान! तुम शायद इसका विश्वास न भी करो क्योंकि तुमसे यह सब न तुम्हारी माता कहती ओर न ही तुम्हारे पिता कह सकते थे—किन्तु आज समय ही ऐसा आ गया कि मुझे तुम्हारे मन का स्मरण कराने के लिए यह कहना पड़ा।”

“अत्यन्त सुन्दर तुम्हारी मां मानवी का रूप धारण कर एक बार एक पर्वत शिखर पर ऐसे विचरण कर रही थी मानो वर्षाकाल का मेघ उमड़-धुमड़ रहा हो। रेशमी परिधान उसके शरीर पर लिपटा हुआ था। उस पर फूलों के विचित्र आभूषणों से सज्जित वह तेज वायु में अपने वस्त्रों को समेटती इधर से उधर दौड़ने लगी।”

“जो वस्त्र उसने धारण कर रखे थे—वे सुनहरे पीले रंग के थे। किन्तु उनकी किनारी लाल थी। पर्वत की चोटी पर खड़ी वह देवी साक्षात् अप्सरा अपने पूर्व और अपूर्व सौंदर्य की धनी किसी के भी मन को जलायमान कर सकती थी।”

“तभी उधर से वायुदेव गुजरे। उन्होंने ऐसी नव नव रस युवती मादक नारी के दर्शन करके अपने पास एक काम गंध अनुभव की। वायु ने देखा रेशमी वस्त्रों से लिपटी होने पर भी हवा में लहराते वस्त्रों में झांकता उसका लावण्यमय रूप सौंदर्य—सटी हुई गोल जांघें, एक दूसरे से लगे हुए उभरे उरोज, और मनोहर मुख मानो उन्हें ही आमंत्रित कर रहे थे।”

“वास्तव में कपि योनि में तो वह शापग्रस्त दशा में थी किन्तु, वह कोई भी रूप धारण कर सकती थी इसीलिए अपने अप्सरा रूप में वह कुछ क्षण के लिए शाप के प्रभाव से मुक्त सांस लेना चाहती थी। तब वह बिलकुल ही भूल गई—वह तो कपि योनि में जन्मी शापग्रस्त अंजना है।”

“इस दशा में उसके ऊंचे उभरे नितम्ब पतला कटि प्रदेश, सारे अंग प्रत्यंग परम सुन्दर—ऐसा निर्दोष रूप माधुर्य देखकर वायुदेव काम-मोहित हो गए।”

“वायु के सम्पूर्ण अंगों में काम का भाव जाग्रत हो गया मानो भाव मंदिर में काम की घंटियां बज उठी हों और शरीर के प्रत्येक रोम छिद्र से छनकर ध्वनि निस्सृत हो रही हो।”

“वायु ने भाव को न रोक पाने पर उस अनिंद्य सुन्दरी को अपने भुजदण्डों में भरकर अंक से लगा लिया।”

“लेकिन अंजना तो परमव्रती सती नारी थी। इस अवस्था में स्वयं को जानकर वह तो घबरा उठी।”

“कौन है...कौन है...?”

“कौन मेरे पतिव्रत धर्म को भंग करना चाहता है?”

“अंजना का यह स्वर सुनकर विनम्र भाव से वायुदेव ने कहा—पुंजिक स्थला! मैं तुम्हें पहचान गया हूँ। तुम ऋषि शाप से कपि योनि में जन्मी अंजना रूप में जरूर हो किन्तु इस समय तुम उसी अप्सरा रूप में हो।”

“हे सुन्दर कटि प्रदेश वाली सुनारी! मैं तुम्हारे एक पतिव्रत का नाश नहीं कर रहा। तुम इस भय से स्वयं को मुक्त कर दो।”

“हे यशस्विनी! मैंने तो अव्यक्त रूप से तुम्हारा आलिंगन किया है तथा मानसिक संकल्प से तुम्हारे साथ समागम किया है। इसमें तुम्हारे व्रत भंग का प्रश्न कहां? व्रत शरीर समागम से भंग होता है। मन से नहीं।”

“और फिर तुम्हारे गर्भ से बल, पराक्रम में अतुलनीय और बुद्धिमान पुत्र उत्पन्न होगा।”

“वह महान पराक्रमी समुद्र भी लांघने में समर्थ होगा।”

“प्रिय हनुमान! इसके पश्चात ही एक गुफा में तुम्हारी मां अंजना ने तुम्हें जन्म दिया।”

“तुम बाल्यावस्था में कितने उपद्रवी थे—कुछ याद आया?” यह प्रश्न करते हुए फिर जामवन्त ने कहा—

“कुछ याद है—बाल्यावस्था में तुमने उदित सूर्य को फल समझ कर उसे खा लेने के लिए छलांग लगा दी थी। तीन सौ योजन जाने पर भी तुमने उसके तेज की परवाह नहीं की और बढ़ते ही गए।”

“और जब तुम अंतरिक्ष कक्ष में पहुंच कर सूर्य के समीप पहुंच गए तो इन्द्र ने तुम पर कुपित होकर अपने वज्र का प्रहार कर दिया था।”

“तुम्हारी ठोड़ी में तभी चोट आ गई थी। उस ठोड़ी के टूटने से ही तुम हनुमान कहलाए।”

यह सुनकर हनुमान ने अपनी ठोड़ी पर हाथ लगाया—फिर तो उन्हें धीरे-धीरे अपने सारे करतब याद आ गए—जिस प्रकार वे ऋषि मुनियों तपस्वीजनों के आराम में उत्पात मचाते रहते थे और फिर एक दिन उन्हीं के शाप से वे अपना बलि बिलकुल भूल गए थे।

“इसका अर्थ यह हुआ—मैं महाराज केसरी का क्षेत्रज पुत्र हूं। वायु देव का औरस पुत्र हूं।”

“हनुमान के मुख से यह सुनकर जामवन्त ने कहा—

“हां वत्स! तुम पवन पुत्र हो। अतः छलांग लगाने में उनसे भी अधिक वेग वाले हो। अतः हमारी प्राण शक्ति तो चली गई है। अतः श्रीराम के इस पुण्य कार्य को तुम्हें अपने बल से संभव कर सकते हो।”

“वत्स! भगवान वामन ने तीनों लोकों को नापने के लिए जिस समय पैर बढ़ाया था उस समय मैंने पर्वत, वन कानन सहित पृथ्वी की इक्कीस बार परिक्रमा की थी।”

“समुद्र मंथन के समय भी देवगणों की आज्ञा से हमने औषधियों का संचय किया था जिनके द्वारा समुद्र को मथकर अमृत निकली थी। उस समय हममें बड़ा बल था पर अब वह पुरुषार्थ कहां?”

“अब तो मैं बूढ़ा हो गया हूं हनुमान! मेरा पराक्रम घट गया है। इस समय तो हम लोगों में तुम्हीं सबसे गुणी हो।”

“अतः हे पराक्रमी वीर! तुम अपने असीम बल का विस्तार करो। छलांग मारने में तुम्हारी बराबरी यहां कोई भी तो नहीं कर सकता है। यह सारी वानर सेना आज तुम्हारे उसी पराक्रम को देखना चाहती है।”

“उठो हनुमान, उठो और इस महासागर को लांघ जाओ, तुम्हारी गति ही इन सबसे बढ़कर है।”

“देखो वीर! ये सारे वानरगण चिंता में डूबे जा रहे हैं। ये श्रीराम को क्या मुंह दिखाएंगे? आज समय आ गया है जिस प्रकार भगवान विष्णु के वामन का अवसर ग्रहण करके तीन पग में सारी पृथ्वी, देवलोक और पाताल नाप लिया था, उसी प्रकार तुम भी अपने पग आगे बढ़ाओ!”

“जामवन्त जी! मैं समझ गया हूं। मुझे अभी कुछ याद आ गया है। जिसके रक्षक श्रीराम है

वह क्या नहीं कर सकता। लीजिए, आशीर्वाद दीजिए कि मैं देवी मां जानकी की कुशल का समाचार लेकर शीघ्र ही आपके सम्मुख उपस्थित हो सकूँ।”

और फिर देखते ही देखते वीरवर हनुमान ने अपना विराटरूप धारण कर लिया।

हनुमान को इस रूप में देखकर सभी वानरों सहित स्वयं अंगद, नल, नील आदि भी आश्चर्य चकित रह गए।

चारों तरफ वीर हनुमान के जयघोष से आकाश गूँजायमान हो गया।

हनुमान को भी अपने वेग ओर अतुल शक्ति पर विश्वास हो गया।

हनुमान को इस प्रकार सौ योजन के समुद्र को लांघने के लिए तैयार देखकर सभी वानर शोक और चिंता से मुक्त अत्यन्त हर्ष से भर उठें।

सभी ने हनुमान जी की इस विराट रूप में देखकर साक्षात् यही अनुभव किया मानो नारायण अवतार ग्रहण करके वामन के रूप में पृथ्वी को नापने के लिए तत्पर हो गए हों।

इस प्रकार अपनी प्रशंसा सुनकर महाबली हनुमान ने अपने शरीर को और अधिक विस्तार देना प्रारम्भ कर दिया और अपनी पूंछ को बार-बार घुमाकर अपने बल का मानो वे बार-बार स्मरण करने लगे।

अपने बड़े-बूढ़ों से अपनी प्रशंसा सुनकर हनुमान को बड़ा सुखद लग रहा था।

जिस प्रकार पर्वत की विस्तृत कन्दरा में कोई सिंह अंगड़ाई लेता है, उसी प्रकार वायुदेव के वह औरस पुत्र अपने शरीर की अंगड़ाई लेकर समुद्र लांघने के लिए पूर्व अभ्यास सा करने लगे।

ऐसे भी जम्हाई लेते हुए उनका मुख ऐसा लग रहा था मानो वे सारी सृष्टि को अपना भक्ष्य बनाना चाह रहे हों।

इस तरह पूरी तरह अपने बल को भांप कर शरीर का विस्तार करके समुद्र लांघने के लिए तैयार हनुमान ने सभी दल के सदस्यों और दलपति अंगद को संबोधित करते हुए कहा—

“हे वानर साथियों। आकाश मार्ग में विचरण करने वाले वायुदेव असीम शक्ति के धनी और बड़े बलवान हैं। अग्निदेव के सखा और वेग में सर्वप्रथम हैं—मैं उन्हीं वायुदेव की औरस सन्तान हूँ।”

“मुझे अपने बल का स्मरण हो आया है। कई सहस्रों योजनों तक फैले सुमेरु पर्वत को बालपन में मैंने कई बार प्रदक्षिणा की है। अपनी भुजाओं के अतुल वेग से समुद्र को विक्षुब्ध करके उसके जल से प्रलय की क्षमता रखता हूँ।”

“यह महासागर जो विराट रूप में आपको लहराता दिखलाई दे रहा है—यह वरुणदेव का निवास स्थान है। यह मेरी जांघों और पिंडलियों के वेग से विक्षुब्ध हो उठेगा। इससे इसमें रहने वाले बड़े-बड़े ग्राह ऊपर जा जाएंगे।”

“आप विश्वास जानिए सर्पभोजी गरुड़ के उड़ते समय मैं उनकी भी हजारों बार परिक्रमा कर सकता हूँ। मैं चाहूँ तो समुद्र को भी लांघ सकता हूँ। उसे सोख भी सकता हूँ।”

“अतः अब आप मुझे विश्वास के साथ विदा करें ताकि प्रभु श्रीराम के कार्य को मैं उनकी कृपा से शीघ्र ही सम्पन्न करके वापिस लौट सकूँ और उनके व्यथित हृदय को सांत्वना दे सकूँ कि देवी सीता का पता लग गया है।”

हनुमान के मुख से इस प्रकार आश्वस्त करने वाली बातें सुनकर मना जामवन्त ने कहा-

“वीर केसरी पुत्र! वेगवान पवन पुत्र! आज तुमने अपने पूर्वस्वरूप को पहचान कर निश्चय ही अपने बन्धुओं को शोक से त्राण दिलाया है।”

“जाओ, हमारा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। ऋषियों का प्रसाद तुम्हारे साथ है। तुम्हें हम सादर सद्भाव पूर्वक अनुमति देते हैं और आशा करते हैं कि तुम शीघ्र ही अपने लक्ष्य को पूरा करके लौटोगे।”

“जब तक हम लौट कर आओगे, तब तक हम तुम्हारी प्रतीक्षा में एक पैर से खड़े होकर तुम्हारी वापसी के लिए आंखें बिछाए रहेंगे। हम सब वानरों का जीवन अब तुम्हारे पुरुषार्थ के ही अधीन है।”

यह आशीर्वाद पाकर हनुमान ने कहा—“जब मैं यहां से छलांग लगाऊंगा, उस समय संसार में कोई भी मेरे बल को धारण नहीं कर सकेगा।”

“शिलाओं के समूह से शोभित ये महेन्द्र पर्वत के शिखर ही ऊंचे और स्थिर है। इन पर नाना प्रकार के वृक्ष लगे हुए हैं। मैं इस पर्वत पर ही पैर रखकर छलांग लगाऊंगा।”

“यहां से सौ योजन की छलांग लगाने के लिए केवल महेन्द्र पर्वत के शिखर ही मेरे बल को धारण करने में क्षमतावान है।”

ऐसा कहते ही वीरवर हनुमान उछलते कूदते महेन्द्र पर्वत पर चढ़ गए।

घने वन से युक्त महेन्द्र पर्वत पर अनेक हिंस्र पशु, सिंह, व्याघ्र आदि का वास रहता था। मतवाले हाथी यहां विचरण करते थे।

उसी विशाल पर्वत के शिखर पर चढ़कर हनुमान कुछ देर तो टहले—मानो छलांग के लिए उपयुक्त, जगह खोज रहे हों। फिर उन्होंने अपने दोनों पैरों से धरती को दबाकर छलांग की ज्यों ही मुद्रा बनाई—पर्वत आक्रान्त हो उठा मानो सिंह से आक्रान्त गज चिंघाड़ उठा हो।

पर्वत के बड़े-बड़े शिला समूह इधर-उधर बिखर गए। उनसे नए-नए झरने फूट निकले। मृग और हाथी भय से घबरा उठे। बड़े-बड़े वृक्ष झोंके खाकर घूमने लगे। और इससे मधुपान के संसर्ग से उद्धत मन वाले गन्धर्व युगल, विद्याधरों के समुदाय और उड़ते हुए पक्षी भी उस पर्वत के विशाल शिखरों को छोड़कर भाग खड़े हुए। बड़े-बड़े सर्प बिलों में घुस गए।

हनुमान के पैरों के दबाव का यह असर हुआ कि पर्वत की बड़ी-बड़ी चट्टानें टूट-टूट कर

नीचे गिरने लगी। कुछ क्षण के लिए तो ऐसा लगा—मानों इतना बड़ा मूधर हिल उठा हो सारा दृश्य प्रलयकारी हो गया।

किन्तु वानर यह सारा दृश्य कौतुक से देख रहे थे। और हनुमान छलांग मारकर लंका का स्मरण करके अपनी यात्रा पर चल दिए।

उनका अपार बल आज उन्हें सार्थक हुआ जान पड़ रहा था।

हनुमान की लंका यात्रा

महेन्द्र पर्वत पर खड़े हनुमान को सभी वानरों ने पैर से पर्वत चोटी को दबाते हुए छलांग लगाते देखा। ऐसा लगा मानो पूर्णिमा के दिन सागर से ज्वार आ गया हो। हनुमान के द्वारा दबाए जाते ही वह पर्वत कांप उठा था। उसकी शिलाएं धड़ाधड़ नीचे गिरने लगीं मानो उसको चोटी पकड़कर किसी ने हिला दिया हो। पर्वत पर वास करने वाले जीव-जन्तु भयानक तूफान आया जानकर घबराकर भाग खड़े हुए।

ऐसे वेगशाली हनुमान ने किसी भी विघ्न बाधा का विचार किए बिना बड़े वेग से ऊपर की ओर छलांग लगा दी।

छलांग लगाते समय आकाश में फैली इनकी दोनों भुजाएं पर्वत शिखर से निकलने वाले फनीले सर्प के समान दिखलाई दे रही थी। उनके नेत्र दावानल के समान दहक रहे थे और उनका मुख संध्याकाल के सूर्य के समान सुशोभित था।

हनुमान का शरीर समुद्र के ऊपर चल रहा था और उनकी परछाई जल में डूबी हुई दिखाई दे रही थी मानो जल में कोई नौका चल रही हो।

समुद्र के जिस भाग से होकर हनुमान गुजरते थे उनकी गति और वेग से पानी की लहरों में एक विक्षुब्धता छा जाती थी।

वेगशाली महापति हनुमान पर्वतों के समान ऊंची समुद्र की उन तरंग मालाओं को अपनी छाती से चूर-चूर करते हुए इस प्रकार उड़े जा रहे थे मानो आकाश और पृथ्वी दोनों को विक्षुब्ध कर रहे हों।

उनके द्वारा खींचे जाते हुए आकाश के मेघ इस प्रकार से उनके आने पर छितरा जाते थे मानो सूर्य की तेज किरणों से में वे छितरा रहे हों।

हनुमान को आकाश मार्ग से यात्रा करते हुए जाते देखकर सूर्य भी उन पर अपना वरद हन्त किए हुए थे और ऐसा लग रहा था कि वे बाल हनुमान के कृत्य को याद करके आतंकित हो रहे हों...कहीं आज हनुमान फिर तो उन्हें फल समझकर खाने नहीं आ रहा। ऋषि, मुनि और गन्धर्व उनकी प्रशंसा में स्तुति कर रहे थे।

हनुमान को उछाल मारकर समुद्र पार करते हुए देखकर इक्ष्वाकु कुल का सम्मान करने की इच्छा से स्वयं समुद्र ने विचार किया, यदि मैं हनुमान की सहायता नहीं करूंगा तो राम का पक्षधर समाज मुझे निंदनीय घोषित कर देगा।

सागर जानता था कि इक्ष्वाकु कुल के महाराज सगर ने उसे बढ़ाया था इसलिए रघुनाथ जी की सहायता करने वाले हनुमान को यात्रा में कोई कष्ट न हो यही विचार समुद्र के मन में आया और वह यही उपाय सोचने में लग गया जिससे वह वानर वीर कुछ देर के लिए विश्राम कर सके और शेष भाग को फिर सुगमता से पार कर सके।

यही सोचकर समुद्र ने अपने जल में छिपे हुए प्राचीन काल में अस्तित्व में रहने वाले सुर्ण गिरि मैनाक से कहा—

“हे पर्वतराज! महामना देवराज इन्द्र ने तुम्हें यहां पातालवासी राक्षसों को निकलने से रोकने के लिए मार्ग में बाधा रूप खड़ा किया था। आज भी असुरों के विरोध में तुम्हें अपना दायित्व निभाने का अवसर मिला है। हनुमान राक्षसराज रावण की लंका में इक्ष्वाकु कुल हंसिनी राम पत्नी सीता की खोज के लिए जा रहे हैं। अतः तुम्हें उनको विश्रान्ति देने के लिए अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए।”

“तुम जानते हो कि असुरों का पराक्रम सर्वत्र प्रसिद्ध है, आज ये फिर पाताल से ऊपर आना चाहते हैं। अतः उन्हें रोकने के लिए तुम्हें पाताल लोक के द्वारा को बंद करके खड़ा होना है।”

“हे पर्वतराज! ऊपर, नीचे और अगल-बगल में सब ओर बढ़ने की तुममें शक्ति है इसलिए मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ कि तुम ऊपर की ओर उठो।”

“यह कपि केसरी हनुमान! परम पराक्रमी हनुमान! तुम्हारे ऊपर से होकर जा रहे हैं। श्रीराम का कार्य सिद्ध करने के लिए ही इन्होंने यह दुष्कर छलांग लगाई है। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि यह इक्ष्वाकुवंशी राम के सेवक है, उनके अनन्य भक्त है। तुम तो जानते हो कि इक्ष्वाकुवंशी मेरे पूज्य है और जो मेरे पूज्य है, वे तुम्हारे भी पूज्य है। अतः मुझे उनकी सहायता करनी है इसीलिए मैं तुमसे कहता हूँ कि तुम ऊपर उठकर इनको विश्राम करने का अवसर प्रदान करो। ये हमारे अतिथि रूप है।”

मार्ग में चलते हुए हनुमान ने जब एक पर्वत खंड को अपने सामने समुद्र से उठता हुआ बाधा के रूप में खड़ा देख तो उन्हें संदेह हो उठा कि कहीं यह कोई विघ्न तो उपस्थित नहीं हो गया।

हनुमान के मन में यह संदेह उपजा देखकर मैनाक ने स्वयं यह घोषणा की—

“हे हनुमान वीर! आप संदेह न करें। आपने जो यह दुष्कर कर्म किया है, मैं तो उसके लिए आपको अपने शिखर ऊपर उठाकर कुछ क्षण विश्राम का अवसर प्रदान करना चाहता हूँ ताकि आप शेष यात्रा उसी शक्ति और सामर्थ्य के साथ पूरी कर सकें। यह इक्ष्वाकुंश का पुजारी समुद्र भी आपका सत्कार करना चाहता है। ओर फिर आप तो स्वयं राम की सेवा में तल्लीन हैं, उन्हीं के हित इस यात्रा पर आरूढ़ हुए हैं, आपको सुख पहुंचाना हमारा धर्म है। यदि आप हमारा सत्कार ग्रहण कर लेंगे तो यह भी आपका हमारे ऊपर उपकार होगा।”

“इस महासमुद्र ने आपके सत्कार के लिए ही मुझे नियुक्त किया है, इसी से मुझे यह पता चला है कि आपने समुद्र से सौ योजन दूर जाने के लिए आकाश में छलांग लगाई है। अतः कुछ देर के लिए यदि मेरे शिखर पर विश्राम कर लें तो फिर शेष भाग का लंघन सुगम होगा।”

इस तरह हनुमान ने निवेदन करते हुए मैनाक ने कहा—“हे कपि श्रेष्ठ! मेरे अंचल में बहुत से सुगंधित और स्वादिष्ट कंद, मूल फल है। मेरा निवेदन है कि आप यहां कुछ देर विश्राम

करके ही अपने शेष यात्रा पूरी करें।”

“मैं जानता हूँ कि आप देव शिरोमणी महात्मा वायु के पुत्र हैं, धर्म ज्ञाता हैं। अतः आपको विश्राम देकर इस बहाने मुझे वायुदेव का पूजन करने का भी अवसर प्राप्त हो जाएगा।”

“आपको शायद ज्ञात नहीं, वायु के प्रति तो मैं पहले से ही कृतज्ञ था एक बार वायु ने मुझे इन्द्र के कोप से बचाकर उनके वज्र से मेरे पंखे कटने से बचा दिए। आपको सम्मान देकर और आपका अतिथि सत्कार करके मैं आपके पिता के उपकार का ऋण चुकाने में भी सफल हो सकूंगा। अतः हे वानर शिरोमणी! आइए और अपनी थकान उतारिए। आप जैसे महिमावान प्राणी के दर्शन करके मैं अपने आपको धन्य मान रहा हूँ। कृपया मेरी पूजा, अर्चना और स्नेह को स्वीकार करें।”

हनुमान ने जब यह सुना तो उन्हें यह भी राम की एक कृपा लगी।

उन्होंने कहा—“मैनाक! मुझे भी आपसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई। आपने कहा और मैंने इसे अपना आतिथ्य मान लिया। आप समझिए कि मैंने आपकी पूजा ग्रहण कर ली।”

“यह मेरे कार्य की लाचारी समझिए अथवा विवशता कि मुझे एक एक पल बिना जानकी के समाचार के भारी पड़ रहा है। मैं मार्ग में कहीं भी न रुकने के लिए कृत संकल्प हूँ।”

ऐसा कहते हुए हनुमान क्षण भर के लिए नीचे को झुके, हाथ से उस पर्वत को स्पर्श किया और आगे बढ़ गए। और फिर अपने पिता के मार्ग का आश्रय लेते हुए निर्मल आकाश में चलने लगे।

हनुमान का यह दुष्कर कर्म देखकर सभी देवता, महर्षि और तपस्वी उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे।

इन्द्र ने जब यह देखा कि हनुमान के मार्ग में मैनाक ने उनका सत्कार करते हुए अपनी सेवाएं श्रद्धा सहित प्रस्तुत की है तो उनका कोप शान्त हो गया और उन्होंने गदगद कंठ से मैनाक के कर्म की प्रशंसा करते हुए कहा—

“हे शैलराज मोक! मैं तुम पर प्रसन्न हूँ, तुम्हें अभयदान देता हूँ कि तुम सुखपूर्वक जहां चाहों, रहने के लिए स्वतंत्र हो।”

“जिस हनुमान को सौ योजन समुद्र लांघने में कोई भय नहीं था, उन्हें विराम का अवसर देने की भावना प्रदर्शित करके और स्वयं को प्रस्तुत करके तुमने राम की सहायता ही की है। यह तुम्हारा पुण्य तुम्हें अवश्य ही सुफल देगा।

देवताओं, गन्धर्वों और महर्षियों को लगा कि हनुमान तो निश्चय ही बिना कहीं ठहरे आगे बढ़े जा रहे हैं तो उन्होंने सूर्य के समान तेजवाली नागमाता सुरसा से निवेदन किया—“हे देवी! यह पवन पुत्र हनुमान तो बिना विघ्न बाधा के समुद्र को लांघकर जा रहे हैं। इन्होंने तो मैनाक पर बिना आश्रय नहीं लिया। अतः यदि तुम दो घड़ी भर के लिए इनके मार्ग में बाधा डाल दो तो हम तुम्हारे उपकारी होंगे। क्योंकि हम एक बार फिर हनुमान की परीक्षा लेना चाहते हैं।”

“या तो हनुमान किसी उपाय से तुम्हें जीत लेंगे अथवा संकट में फंस जायेंगे इससे हमें इनके बल का ज्ञान हो जाएगा।”

देवताओं की यह इच्छा देखकर ओर उन्हीं के अनुरोध पर देवी सुरक्षा ने राक्षसी का रूप धारण करके हनुमान के मार्ग में बांधा उत्पन्न की। सुरसा का यह रूप बड़ा ही विकट और भयावह था। कोई भी साधारण प्राणी उसे देखकर डर सकता था। अपने आकार को बढ़ाकर हनुमान के मार्ग में पर्वत की तरह खड़े होकर उस राक्षसी रूपा ने कहा—“हे वानर! देवताओं ने तुम्हें भोजन बनाकर मेरे लिए अर्पित कर दिया है। अब मैं तुम्हें खाऊंगी इसलिए तुम मेरे मुख में सीधे चले जाओ। पुराने समय में ब्रह्माजी ने मुझे यह वरदान दिया था।”

यह कहते हुए सुरसा अपना विकराल मुंह फैलाकर हनुमान का भक्षण करने के भाव से बाधा के रूप में आकर खड़ी हो गई।

इस देवी को किस प्रकार समझाया जाए, यह सोचते हुए हनुमान ने विनम्र होकर कहा—“हे देवी! मैं तो देवता समान ही श्रीराम की पत्नी सीता को खोजने के लिए लंका जा रहा हूँ। लंका के दुष्ट राजा रावण ने उनका अपहरण कर लिया है। तुम भी तो स्वयं राम के राज्य में वास करती हो। अतः राम की सहायता करना तुम्हारा भी दायित्व है। और यदि तुम मुझे खाना ही चाहती हो तो इतनी कृपा अवश्य करो कि मैं पहले सीता की खोज करके यह समाचार श्रीराम को दे आऊँ, उसके बाद मैं तुम्हारे मुख में स्वयं आ जाऊँगा, यह प्रतिज्ञा करता हूँ।”

“किन्तु हे वानर! तुम नहीं जानते कि मुझे लांघकर जाना असंभव है। तुम केवल मेरे मुख में प्रवेश करने के पश्चात ही आगे जा सकते हो।”

जब तक सुरसा अपनी बात कहकर समाप्त करती, हनुमान ने अपने शरीर को बढ़ाना शुरू कर दिया, उसे देखकर सुरसा ने अभी अपने मुख को और विशाल कर लिया। इस विकास की ओर विस्तार की प्रतियोगिता में सुरसा का मुख पूरे सौ योजना का हो गया। तब पवन पुत्र हनुमान ने अवसर पाकर अपने आकार को एक अंगूठे के बराबर करके सुरसा के मुख में प्रवेश किया और पूरे मुख का भ्रमण करके वे लौट आए और बोले—“हे देवी! मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ। तुम्हारी प्रतिज्ञा के अनुसार मैंने तुम्हारे मुख में प्रवेश कर लिया है। अब मुझे आगे जाना है, मेरा नमस्कार स्वीकार करो।”

सुरसा का लक्ष्य पूरा हो गया था, वह केवल हनुमान की परीक्षा के लिए मार्ग में अवरोध करने के लिए खड़ी हुई थी।

हनुमान को अपने बल और वेग में सफल हुआ जानकर देवी सुरसा अपने वास्तविक रूप में आकर उन्हें प्रणाम करते हुए बोली—“हे कपि श्रेष्ठ! तुम्हारे मार्ग में कोई बाधा नहीं आएगी। तुम सरलता से अपना लक्ष्य पूरा करोगे। मैं तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए ही यहां उपस्थित हुई थी।”

सुरसा से विदा लेकर हनुमान अपने मार्ग पर आगे बढ़ चले। अभी वे कुछ और आगे बढ़े तो उन्हें इच्छा रूप धारण करने वाली सिंहिका नाम की राक्षसी रास्ते में बाधा बनी मिली। वह

सोचने लगी कि कितने लंबे समय के बाद आज भरपेट भोजन मिलेगा। उस राक्षसी ने अपने आकार को बढ़ाते हुए हनुमान की छाया पकड़ ली। हनुमान को लगा मानो किसी ने उनकी गति अवरुद्ध कर दी हो।

हनुमान को यह समझने देर न लगी कि अवश्य ही वह सिंहिका राक्षसी है तो उन्होंने उसके मर्म स्थानों को अपना लक्ष्य बनाया और अपने शरीर को संकुचित करके वे उसके मुख में प्रविष्ट हो गए और नाखूनों के उसके मर्मस्थानों को फाड़ डाला। उन आघातों को वह राक्षसी नहीं सह सकी और छटपटाने लगी तो उसको पूर्ण नष्ट करने के लिए हनुमान ने उसके हृदय को फाड़ डाला। इस प्रकार निश्चेष्ट होकर वह महाराक्षसी जल में गिर पड़ी।

हनुमान का यह पराक्रम देखकर आकाश में विचरण करने वाले प्राणी कह उठे, “वीरवर हनुमान! यह तुमने बड़ा ही परोपकार का कार्य किया है। अब तुम बिना किसी विघ्न बाधा के अपना अभीष्ट कार्य सिद्ध कर सकते हो। तुम्हें मार्ग में अब किसी प्रकार की बाधा उपस्थित नहीं होगी।”

“हे वीर हनुमान! जिस व्यक्ति में धैर्य, सूझ, बुद्धि और कुशलता—ये चार गुण होते हैं, उसे अपने कार्य में कभी असफलता नहीं मिलती।”

इस प्रकार आकाश मार्ग में बाधाओं को दूर करते हुए वीरवर हनुमान अपने लक्ष्य में सफल हुए समुद्र पार कर गए। जब सौ योजन पूरे कवर चुके तो उन्हें हरी-भरी वन श्रेणी दिखलाई दी।

यह देखकर उनकी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। अवश्य ही यह उनका अभीष्ट लंका द्वीप ही है।

उन्होंने देखा, उत्तर तट के समान ही समुद्र के दक्षिण तट पर भी मलय नामक पर्वत और उपवन दिखाई दे रहे हैं।

यहां आकर उन्हें लगा कि यदि राक्षसों ने मेरा यह विशाल रूप और तीव्र वेग जान लिया तो उनके मन में मेरे प्रति अनावश्यक कुतूहल उत्पन्न हो जाएगा और वे मेरा भेद जाकर मेरे लिए बाधा उत्पन्न कर सकते हैं। अतः अब हनुमान फिर अपने उसी वास्तविक रूप में आ गए। और फिर पर्वत शिखर पर बसी हुई लंका की धरती पर कूद गए।

यहां उन्होंने देखा कि यह लंका तो साक्षात् देवराज इन्द्र की अमरावती के समान शोभायमान हो रही है।

यह त्रिकूट पर्वत का शिखर था जहां हनुमान ने समुद्र लांघकर धरती पर पहली बार पैर रखा। इनके कूदने से जो हलचल हुई उससे पर्वत पर विशाल वृक्षों से फूल झड़कर गिरने लगे और क्षण भर को ऐसा लगा मानो लंका नगरी पर इन वृक्षों ने वीर हनुमान का स्वागत किया हो।

इतनी लंबी यात्रा—पूरे सौ योजन चलकर आने पर ही हनुमान को कोई थकान या श्वास में

कोई तेजी अनुभव नहीं हो रही थी बल्कि वह तो सोच रहे थे कि यदि सौ योजन मात्र इतना होता तो फिर तो सौ-सौ योजन के कितने ही समुद्र लांघ सकते हैं।

और इस प्रकार सोचते हुए हनुमान लंकापुरी में प्रवेश कर गए।

बड़े-बड़े जलाशयों, फलदार, वृक्षों, वन-उपवनों, फूलों से सुशोभित लंका बड़ी मनोहारी लग रही थी। लंका के द्वार पर खड़े हनुमान ने देखा कि बाहरी फाटक पर सोने की चादरें चढ़ी हुई थीं, दीवारों पर हरी लुभावनी लताएं सुशोभित थीं। उन्हें लगा कि मानो यह लंका अपनी शोभा में देवपुरी लग रही थी या कोई आकाश में विचरने वाली नगरी थी।

यह तो विश्वकर्मा की बनाई हुई एक ऐसी रचना थी जिसकी उपमा एक सुन्दर नारी से की जा सकती थी। इस नगरी के उत्तर द्वार पर पहुंच कर हनुमान चिंता में पड़ गए। वहां तो रक्षा व्यवस्था बड़ी जटिल थी। हाथी में त्रिशूल लिए बड़ी-बड़ी दाढ़ी वाले राक्षस लंका की रक्षा उसी प्रकार कर रहे थे जैसे सर्प अपनी नगरी की रक्षा करते हैं।

हनुमान सोचने लगे, यदि वानरगण यहां आ भी जाएं तो भी उनके लिए लंका में प्रवेश करना बड़ा कठिन है। साम नीति के लिए तो यहां लक्षण नहीं दिखाई दे रहा। यहां तो केवल चार वानर ही प्रवेश पा सकते हैं—अंगद, नील, सुग्रीव और मैं।

इसी प्रकार सोचते हुए हनुमान ने निश्चय किया कि चलो यह तो बाद में देखा जाएगा। पहले यह तो पता लगाया जाए कि विदेह कुमारी सीता जीवित भी हैं या रावण के अत्याचार से जीवित नहीं बची। आगे की कार्यवाही पर तो उनसे मिलने के बाद ही विचार होगा।

हनुमान को लगने लगा, अपने इस रूप में तो मैं किसी भी प्रकार से लंका में प्रवेश नहीं कर सकता, इसलिए मुझे अपने रूप को तो बदलना ही होगा और दिन की अपेक्षा रात्रि में अपना अन्वेषण कार्य करना होगा।

हनुमान की सबसे बड़ी समस्या तो यह थी कि सीता का दर्शन प्राप्त करने के लिए रावण की दृष्टि से बचते हुए कौन सा उपाय किया जाए ताकि सीता से भी भेंट हो जाए और किसी को मेरे आने का समाचार न मिले।

यह सोचते हुए हनुमान ने अपना अत्यन्त सुक्ष्म रूप धारण कर लिया और रात्रि की प्रतीक्षा करने लगे। रात्रि होने पर हनुमान पुरी के समीप पहुंचकर उछल कर परकोटे पर चढ़ गए वहां उन्होंने आकाश से लंका की शोभा निहारा।

सोने के बने हुए द्वार नगरी की शोभा को बढ़ा रहे थे। सभी द्वारों पर स्फटिक नील मणि के चबूतरे थे जिनमें हीरे-मोती जड़े हुए थे। मणिमय फर्श उनकी शोभा बढ़ा रहे थे। उनके दोनों तरफ तपाए हुए सोने के हाथी पहरेदार की भूमिका निभा रहे थे। उन द्वारों के भीतरी भाग में भी उसी प्रकार स्फटिक मणियों से बने हुए थे। और द्वारों पर राजहंस पक्षी निवास कर रहे थे।

कुबेर की अल्कापुरी की भांति शोभित यह लंका नगरी त्रिकूट पर्वत पर स्थित होने के कारण आकाश में उठी हुई स्वयं एक स्वर्ण विमान की तरह अपनी शोभा झलका रही थी।

यह नगरी देखकर हनुमान को बड़ा हर्ष हुआ। इतनी समृद्धशालिता देखकर हनुमान सोचने लगे—यह सही है, ऐसी समृद्धि को अस्त्र युक्त राक्षस ही काबू में रख सकते हैं, अन्य कोई दूसरा नहीं।

यह सोचते हुए हनुमान उस नगरी में प्रवेश करने लगे, तभी नगरी की अधिष्ठात्री देवी लंका ने अपने स्वाभाविक रूप में आकर हनुमान को देखा।

बड़े विकट मुंह वाली रावण द्वारा परिपालित वह लंका ऐसी उठ खड़ी हुई जैसे समुद्र में गमन करते हुए उनके सम्मुख सुरसा आ गई थी।

हनुमान को देखकर चिंघाड़ते हुए रस राक्षसी ने कहा—“ऐ वन में घूमने वाले बंदर तू कौन है? यहां क्यों आया है? क्या तुझे अपने प्राणों से मोह नहीं? क्या तू नहीं जानता कि रावण के रक्षक तुझे जिन्दा जला देंगे।”

अट्टहास करते हुए हनुमान ने कहा—“मुझसे प्रश्न करने वाली, मेरे संकटों को चिंता छोड़कर पहले मुझे यह बता कि तू कौन है और मुझ पर किस अधिकार से गरज रही है?”

“मैं लंका की रक्षक, रावण की सेविका हूं और मेरी अवहेलना करके इस पुरी में प्रवेश पाना असंभव है। तू नहीं जानता मूर्ख! मैं स्वयं लंका नगरी हूं। मैं सब तरह से इसकी रक्षा करती हूं।”

“हे देवी! मैं तो यहां कूदता-फांदता उत्सुकतावश तुम्हारी लंका की शोभा निहारता आ गया हूं और इसे देखना ही मेरा लक्ष्य है।”

“दुष्ट बंदर! मुझे बहकाता है। तू कोई भी हो, मैं इसकी परवाह नहीं करती पर यह अवश्य बताती हूं कि मुझसे युद्ध किए बिना तू इस नगरी में प्रवेश नहीं कर सकता।”

हनुमान ने उससे उलझने से बचने के लिए निवेदन किया—“हे देवी! मैं तो इस पुरी को देखने आया था, देखकर लौट जाऊंगा।”

हनुमान की यह उद्धृत प्रवृत्ति देखकर उस राक्षसी ने उसके गाल पर एक जोर का तमाचा मारा। हनुमान के लिए यह असह्य था उन्होंने उस नारी पर एक साथ कई आक्रमण किए और सिंहनाद करते हुए अपने बाएं हाथ की उंगलियों को मोड़कर एक जोरदार घूंसा उस राक्षसी पर जमा दिया। हनुमान के हल्के से प्रयास से ही उस दुष्टा का जबड़ा हिल गया। लेकिन उसे स्त्री जानकर फिर भी उनके मन में दया आ गई।

उस लंकापुरी का पूरा मस्तिष्क हिल गया था। उसने हनुमान से प्रभावित होकर कहा—“हे महाबली वानर! आप मेरी सच्ची बात सुनिए—

“मुझे ब्रह्मा ने वरदान दिया था कि जब कोई वानर तुझे अपने पराक्रम से वश में कर ले तो यह समझ लेना कि अब राक्षसों पर भयानक संकट आने वाला है। अतः हे ब्रह्माण शिरोमणि, वीरवर! आपके दर्शनों ने मुझे कृतार्थ कर दिया है। मैं यह जान गई हूं कि अब दुष्ट राजा रावण के अंत का समय आ गया है। उसका विनाश अवश्य होगा।”

उस राक्षसी ने हनुमान को लंका में प्रवेश करने की स्वीकृति दे दी और राम का यह दूत अपने मार्ग की बाधाओं को दूर करता हुआ, अपने लक्ष्य की ओर दृढ़ता हुआ सीता की खोज के निमित्त लंका में प्रवेश कर गया।

हनुमान द्वारा सीता की खोज

राक्षसी से मुक्ति पाकर हनुमान रात में परकोटे के भीतर प्रवेश करके लंकापुरी में पदार्पण कर गए। उन्होंने देखा कि लंका सफेद बादलों के समान सुंदर और विचित्र राक्षस गृहों से प्रकाशवान हो रही थी। वे गृह कमल के आकार के बने हुए कुछ स्वस्तिक चिन्ह से युक्त और कुछ वर्धमान गृह के रूप में दिखाई दिए।

उन गृहों में स्वर्गीय अप्सराओं के समान सुंदरियां अपनी काम वेदना से पीड़ित काम कला में मग्न थीं। यहां कितने ही राक्षस मंत्र जाप में मग्न और कितने ही निशाचर स्वाध्याय मग्न देखे।

नगर के मध्य भाग में हनुमान को रावण के बहुत से गुप्तचर दिखाई दिए इनमें कोई योग की दीक्षा दिए हुए, कोई जटा बढ़ाए और कोई मृग चर्म धारण किए हुए था। मोटे, दुर्बल, लंबे, छोटे भांति-भांति के रूप रंग वाले कुरूप भी और सुंदर भी सभी मार्ग में हनुमान को मिले।

कितने ही राक्षस तीखे शूल और वज्र लिए हुए थे। वे सब के साथ यहां बलवान दिखलाई दे रहे थे। इनके अतिरिक्त हनुमान ने एक लाख रक्षक सेना को राक्षसराज रावण की आज्ञा से सावधान होकर नगर के मध्य भाग की रक्षा में संलग्न देखा। ये सारे सैनिक रावण के अन्तःपुर के अग्रभाग में नियुक्त थे।

इस रक्षक सेना के लिए जो विशाल भवन बना था, उसका फाटक सुवर्ण निर्मित था। इसके देखने के बाद हनुमान ने रावण के राजमहल पर दृष्टिपात किया। यह महल त्रिकूट पर्वत के एक शिखर पर स्थित था, जिसके चारों तरफ गहरी खाई थी और उसमें सफेद कमल खिले हुए थे। बहुत ऊंचे परकोटे से घिरा यह राजभवन स्वर्ग की छटा से युक्त था।

इस महल की रक्षा में सहस्रों पराक्रमी निशाचर लगे हुए थे।

हनुमान ने यहां बहुत से घर देखे। कहीं ऐश्वर्य मद में चूर निशाचर मिले, कहीं मदिरापान में डूबे राक्षस।

वे राक्षस लोग आपस में एक-दूसरे पर आक्षेप करते हुए मतवालों सी बहकी-बहकी बातें कर रहे थे। कुछ तो आपस में लड़-झगड़ रहे थे। कभी-कभी मस्ती में अथवा नशे में ये अपनी छाती पीटते, कभी अपनी प्यारी पत्नियों को खींचकर अपने अंक में भर लेते।

हनुमान ने देखा कि नायिकाएं अपने अंगों में चंदन आदि का अनुलेपन किए थी। कुछ ललनाएं मनोहर मुख वाली मुस्कुराती हुई मिली और कुछ प्रणय कलह से लंबी सांसें खींचती हुई मिलीं।

हनुमान ने यहां कुछ राक्षस उत्कृष्ट बुद्धि वाले श्रद्धाभाव से सम्पन्न, मनोहर रूप वाले भी देखे। हनुमान को यह देखकर प्रसन्नता भी हुई। उसकी नजर में रूप सौन्दर्य की धनी स्त्रियां तो

आई हो, कुछ लजीली और अर्धरात्रि के समय अपने प्रियतम के आलिंगन पाश में बंधी हुई आनन्द मग्न भी मिलीं।

दूसरी बहुत-सी स्त्रियां महलों की छतों पर बैठी मिलीं। यह सब पति की सेवा में तत्पर, धर्मपरायणा, विवाहिता और काम भावना से युक्त थी। हनुमान ने इन सभी को अपने प्रियतम के अंक में सुखपूर्वक बैठे देखा।

कितनी ही कामनियां सुवर्ण रेखा के समान दिखाई दीं, उन्होंने अपनी ओढ़नी उतार दी थी। इन्हीं में पति वियोगिनी बालाएं भी थीं जिनका मुख वियोग की कथा गाथा कह रहा था। लेकिन इनमें कहीं भी उन्हें किसी भी स्त्री में सीता की झलक नहीं मिली।

और इस तरह वह उन्हें दूँढते धीरे-धीरे थकने से लगे।

किन्तु उन्हें तो अपना कार्य करना ही था, यहां आए है तो किसी भी प्रकार सीता की खोज तो करनी ही थी इसलिए उन्होंने अब लंका के सब महल मकानों में घूमना शुरू कर दिया। ये महल भी सुवर्ण परकोटे से घिरे थे, उनकी रक्षा भी राक्षस उसी प्रकार से कर रहे थे।

इस तरह घूमते हुए हनुमान रावण के महल में जा पहुंचे। रावण का यह भवन अनेक प्रकार के रत्नों से व्याप्त था। सब ओर बड़े-बड़े रथों के ठहरने के स्थान बने थे। सब और मुख्य-मुख्य सुंदरियों के लिए विशाल भवन बने हुए थे। यहां की शोभा दिव्य गुणों से सम्पन्न थी। स्वयं रावण का अपना महल अनेक मूल्यवान रत्नों से जटित था।

कुछ देर रावण के महल में विचरण करने के बाद हनुमान दूसरे घरों में जाकर राक्षसों के बगीचों के सभी स्थानों के देखते हुए बिना किसी भय के ऊँची अट्टालिकाओं पर भ्रमण करने लगे।

यहां से कूदते-फांदते वह वीर पराक्रमी रावण के भाई प्रहस्त के घर पहुंचा। वहां से महापार्श्व के महल में, कुम्भकर्ण के महल में और इसी तरह महोदर विरुपाक्ष आदि के भवनों में झांकते, टटोलते हनुमान इन्द्र जीत के महल में पहुंचे। किन्तु वहां उनके वैभव को देखने पर भी उन्हें कहीं सीता का कोई संकेत नहीं मिला। अनेक चित्रशालाएं, क्रीड़ाभवन, रमणीय विलास घर को देखकर देवी जानकी के होने का कोई सूत्र उन्हें अभी तक हाथ नहीं आ रहा था।

हनुमान ने यहां वह अनुपम पुष्पक विमान भी देखा जिसका वर्णन श्रीराम ने किया था और जटायु ने बताया था कि वह दुष्ट रावण उसी पुष्पक विमान पर सीता का हरण करके ले गया।

दिव्य रत्नों से जगमगाता हुआ वह विमान अत्यन्त शोभायमान हों रहा था। सुंदर मुख और मनोहर पंख वाले उस विमान की शोभा बड़ी मनोहारी थी। हनुमान इसे देखकर क्षण भर को विस्मित हुए। विमान की रचना को सौन्दर्य की सीमा में नहीं बांधा जा सकता था। ऐसा लगता था कि विश्वकर्मा ने उसे अनुपम रीति से तैयार किया था।

वास्तव में यह विमान तो वही विमान था जिसे देवताओं ने महाराज कुबेर को दिया था और रावण ने कुबेर से युद्ध करके इसे छीन लिया था।

यहां से आगे बढ़कर हनुमान सीता की खोज में रावण के भवन की अट्टालिकाओं पर चक्कर काटते हुए इधर-उधर भ्रमण करते रहे।

रावण का यह महल उसकी राक्षस जाति की पत्नी और हर कर लाई हुई राज कन्याओं से भरा हुआ था। वे सभी नारियां ओर राज कन्याएं कुबेर, चन्द्रमा और इन्द्र के यहां निवास करती थीं। वे अब रावण के अधीन थीं।

रावण के इस एक योजन लंबे और आधे योजन चौड़े महल के मध्य स्थान में एक दूसरा भवन था, जिसका निर्माण बड़े सुंदर ढंग से किया गया था। ऐसा लगता था मानो वे यहां स्वर्ग लोक में आ गए थे।

इससे आगे वे एक और बहुत बड़ी हथेली में प्रविष्ट हुए। इसमें मणियों की सीढ़ियां बनी हुई थीं। सोने की खिड़कियां और बीच-बीच में हाथी दांत की आकृतियां अंकित थीं।

इस हथेली में बहुमूल्य बिछौने बिछे हुए थे, स्वयं राक्षस रावण इससे निवास करता था। उसे देखकर हनुमान को लगा कि वह किसी विचित्र शाला में आ गया है।

कालीन पर बैठी हुई सहस्रों सुंदर स्त्रियां मधुपान और निद्रा के वशीभूत गाड़ी नींद में सो रही थीं।

इस तरह भ्रमण करते हुए रावण के सारे अन्तःपुर में खोज बीन करते हुए भी जब हनुमान को कहीं सीता नहीं दिखाई दीं तो उन्होंने महलों से बाहर वनों और वाटिकाओं में सीता की खोज को आरम्भ कर दिया।

वे तला मंडपों में, चित्रशालाओं में भी गए पर कहीं सीता के दर्शन नहीं हुए।

क्षणभर को हनुमान को लगा कि कहीं मिथिलेश कुमारी सीता ने प्राण तो नहीं त्याग दिए या इस दुष्ट राक्षस ने उन्हें मार तो नहीं डाला।

वे सोच रहे थे कि सीता का दर्शन न होने से मुझे अपने पुरुषार्थ का फल नहीं प्राप्त होगा। यहां इतना भ्रमण करने पर भी जब यहां मैंने सीता खोज की अवधि, बिना सीता को पाए ही बिता दी है तो अब मैं सुग्रीव के पास क्या मुंह लेकर जाऊंगा। मेरे तो सभी रास्ते ही बंद हो गए।

और जो वानर समुद्र के किनारे मेरी प्रतीक्षा में बैठे होंगे, जब वे मुझसे पूछेंगे तो मैं उन्हें क्या जवाब दूंगा? बूढ़े जामवंत और युवराज अंगद का कैसे सामना कर पाऊंगा? मैंने रावण का सारा अन्तःपुर छान मारा है, उसकी एक-एक स्त्री को देख डाला है किन्तु साध्वी सीता के दर्शन अभी तक नहीं हुए। अतः मुझे तो लगता है कि मेरा सार श्रम व्यर्थ ही चला गया।

रावण के महल में चार अंगुल का भी ऐसा कोई स्थान नहीं बचा था जहां हनुमान ने सीता को नहीं ढूंढा था।

रामचन्द्रजी का हित करने के भाव से कितना श्रम किया हनुमान ने किन्तु वह सब उन्हें अब व्यर्थ लगने लगा।

ऐसा भी तो हो सकता है कि जिस समय रावण उन्हें समुद्र से ऊपर-ऊपर ला रहा हो उस समय जनक दुलारी सीता उसकी कैद से छूटकर समुद्र में गिर गई हों या फिर रावण ने उसे किसी कारागृह में बंद कर रखा हो जहां जाना संभव नहीं हो।

हनुमान सोच रहे थे कि यहां से अगर मैं लौटा भी और राम ने पूछा कि तुम क्या समाचार लाए हो, तो क्या यह कहा जा सकता है कि मैं सीता के दर्शन नहीं कर सका? यह सुनकर क्या दोनों भाई जीवित रह पायेंगे? क्या उनकी मृत्यु का समाचार सुनकर भरत भी अपने प्राण नहीं त्याग देंगे? क्या शत्रुघ्न यह कष्ट झेल पायेंगे? अपने चारों पुत्रों को मरा जानकर क्या माताएं जीवित रह पायेंगी? और तो और क्या सुग्रीव भी अपने प्राण नहीं त्याग देंगे? और इस पर तो रानी तारा भी अपने प्राण त्याग देगी और फिर माता और पिता के मरण को जानकर क्या अंगद जीवित रह पायेंगे?

यह सोच-सोच कर हनुमान परेशान हो उठे। कितने बड़े विनाश का सामना करना पड़ेगा। उनके अकेले के यह कह देने मात्र से कि सीता के दर्शन नहीं हो सके। क्या दो कुल विनाश के गर्त में नहीं चले जाएंगे?

अगर मुझे देवी सीता के बारे में कोई सूत्र नहीं मिलता था मैं उनका पता नहीं लगा पाता तो निश्चय ही मैं किष्किन्धा नहीं जाऊंगा और बिना मिथलेश कुमारी के दर्शन किए सुग्रीव को ही अपना मुंह नहीं दिखा पाऊंगा क्योंकि यदि मैं नहीं गया तो कम से कम वे धर्मात्मा महारथी बंध मेरे आने की आशा तो लगाए रखेंगे और जीवित तो रहेंगे।

जानकी नहीं भी मिली तो भी मैं यहां वानप्रस्थी होकर जो भी फल मूल मिलेगा उसी से अपना जीवन चलाऊंगा और निर्वाह करूंगा या फिर समुद्र के किनारे अपनी चिता बनाकर अग्नि में प्रवेश कर लूंगा।

अगर जानकी के दर्शन नहीं हुए तो सत्य ही मैं जल समाधि ले लूंगा।

इस प्रकार से अनिष्ट की शंका से व्यथित हनुमान सहसा उठ खड़े हुए और अशोक वाटिका की ओर चल दिए।

यही वह अशोक वाटिका है, इसमें बड़े-बड़े वृक्ष हैं। अभी मैंने यहां तो सीता को ढूंढा ही नहीं, चलकर यहां देखता हूं और वे आगे बढ़ गए। उन्होंने अपना शरीर अत्यन्त छोटा कर लिया और फिर धीरे-धीरे बिना आहट किए वे उस वाटिका में प्रविष्ट हुए।

यह विचित्र वाटिका सोने और चांदी के समान वर्ण वाले वृक्षों वाले वातावरण से सज्जित थी। नाना प्रकार के पक्षी वहां कलरव कर रहे थे। जिससे यह वाटिका गूंज रही थी। हनुमान ने उसके भीतर प्रवेश कर पहले उसका निरीक्षण किया। उन्होंने देखा, भांति-भांति के पक्षी और पशु वहां विचरण कर रहे थे। फलों और फूलों से लदे हुए वृक्ष समूची वाटिका को सुगंधित कर रहे थे।

असल में वह वाटिका ऐसी थी जहां जाने से हर समय लोगों के मन में प्रसन्नता होती थी।

मृग और पक्षी वहां के सुरम्य वातावरण में मदमस्त हो उठते थे। मतवाले मोरों का कलनाद जहां निरन्तर गूंजता था। इस वाटिका में सती साध्वी सीता की खोज करते हुए वानर वीर हनुमान ने घोंसले में सोए हुए पक्षियों को जगा दिया।

वह उस समय सम्पूर्ण दिशाओं में दौड़ते और वृक्षों के समूह में घूमते हुए हनुमान को देखकर अनुभव करने लगे मानो आज वाटिका में ऋतुराज बसत वानर वेश में विचरण रहा था। वृक्षों में झड़कर गिरे फूलों से शोभायमान वहां की धरती फूलों से सजी नई दुल्हन के समान शोभा पाने लगी।

हनुमान के द्वारा कंपित ये वृक्ष विचलित हो उठे। पक्षी वहां से उड़ उड़कर जाने लगे।

हनुमान ने उस वाटिका में जगह-जगह भिन्न आकारों की बावड़ियां देखीं जो उत्तम जल से भरी हुईं और मणियुक्त सीढ़ियों से युक्त थीं। उनके खिले हुए कमल, हंस, सारस और पपीहों के जोड़े सारे वातावरण को रमणी बना रहे थे। वहीं हनुमान ने पत्थर की गुफाएं देखीं और विशालकाय पर्वत भी, जिसके अंचल से बहती हुई नदी मानो यौवन के मोड़ पर उछाल खाती मधुर संगीत बजा रही हो।

आगे बढ़ते हुए हनुमान ने अशोक वृक्ष देखा। उनके मन में विचार आया कि यूं तो रावण बड़ा दुरात्मा है किन्तु उसकी यह वाटिका बड़ी अमूल्य है। यदि आज रानी सीता यहां हुईं तो वे अवश्य ही यहां आएंगी। यह सोचकर हनुमान उसी वृक्ष की घनी डाल पर विश्राम करने के ख्याल से बैठ गए।

अशोक वृक्ष पर बैठे हुए हनुमान अपने चारों ओर के उस रमणीय वन प्रदेश को देखते हुए सीता को ढूंढ़ रहे थे।

कल्पवृक्ष की लताओं और वृक्षों से सुशोभित दिव्य गंध और रस से युक्त वह भूनंदन वन के समान मधुमय लग रही थी।

पवन पुत्र हनुमान ने उस वृक्ष पर बैठे-बैठे ही वहां से अनेक रमणीय चित्र देखें, शोभा देखी। यह अशोकवन कुबेर के चैत्ररथ के समान शोभायुक्त था।

इधर-उधर दृष्टि दौड़ते हुए हनुमान ने दूर एक गोलाकार मंदिर देखा और उस मंदिर को देखते हुए अचानक उनकी दृष्टि वहां चबूतरे पर पड़ी जो एक वृक्ष का चबूतरा था। वह भी अशोक था।

मलिन वस्त्र धारण किए वह सुंदरी राक्षसियों से घिरी बैठी थी किन्तु वह स्वयं राक्षसी नहीं थी। उपवास करने के कारण वह अत्यन्त दुर्बल और दीन-हीन दिखलाई दे रही थी। और बार सिसक रही थी। ऐसा लग रहा था मानो शुक्ल पक्ष के प्रारम्भ में चन्द्रमा की भांति वह कुश हो रही हो। धुंधली सी स्मृति के आधार पर कुछ-कुछ पहचाने जाने वाले रूप से ऐसा लग तो रहा था कि अवश्य ही यह सीता है।

एक ही पीले रंग के पुराने रेशमी वस्त्र से अपने शरीर को ढके वह देवी मलिन अलंकार

शून्य हुई कमलों से रहित पुष्कारिणी के समान दिखलाई दे रही थी। शोक और चिन्ता में मग्न वह दुखियारी सुख भोगने की आयु में भी दुख सन्तप्त लग रही थी।

इस युवती को देखकर हनुमान को लगा, हो न हो, यही सीता है।

उन्हें याद आया जब रावण सीता का हरण करके ले जा रहा था तो उस दिन जिस रूप में उनका दर्शन हुआ था, यह कल्याणी नारी भी वैसी ही दिखलाई दे रही है। यद्यपि उस रूप पर अब ग्रहण लग गया है। अब वह एक नियम पराणा तापसी के समान भूमि पर बैठी थी। वह लंबी सांस खींचती थी तो ऐसा लगता था मानो वह हवा के झोंके को सहन नहीं कर पाएगी और एक सूखी शाख की तरह टूट कर गिर जाएगी।

मलिन मुख वाली वह देवी राक्षसियों के बीच उसी प्रकार लग रही थी मानो दांतों के बीच में जीभ आ गई हो।

इस दशा में उस देवी को देखकर हनुमान ने बड़े कष्ट से उन्हें पहचाना कि यही सीता है। श्रीराम ने उसके अंगों में जिन-जिन आभूषणों के होने की चर्चा की थी, हनुमान ने गौर से देखा कि वे आभूषण अभी भी उसके अंगों की शोभा बढ़ा रहे थे। कुंडल और नोकीले कर्णफूल, हाथ के कंगन अभी भी विद्यमान थे। यद्यपि बहुत दिनों से पहने गए होने के कारण वे कुछ काले पड़ गए थे फिर भी उनका आकार-प्रकार पहचानने योग्य था।

हनुमान ने सोचा, जिन आभूषणों का वर्ण श्रीराम ने किया था, मुझे लगता है कि ये आभूषण तो वही हैं और फिर जो आभूषण इन्हें मार्ग में पहचान के लिए गिरा दिए थे, वे तो उनके शरीर पर नहीं थे लेकिन जो गिराए नहीं थे, वे तो यहीं दिखाई दे रहे हैं।

हनुमान को लगा और उन्होंने यह ध्यान किया जो सुंदर पीला वस्त्र और आभूषण वानरों ने पर्वत पर से उठाकर दिखाए थे और जिन्हें श्रीराम ने पहचानकर देवी सीता को बताया था, यदि वह सही है तो जो वस्त्र इस समय सीता ने पहन रखे हैं, पुराने होने पर भी उनका पीला रंग अभी नहीं उतरा है।

अब हनुमान को निश्चय हो गया कि अवश्य ही यह देवी भगवान श्रीराम की प्राणप्रिया जानकी ही हैं। यही वे सीता हैं जिनके लिए श्रीराम इतने व्यथित हैं।

जैसा अलौकिक रूप श्रीराम का है और जैसी मनोहर रूप शैली तथा अंग प्रत्यंग की सुधड़ता इन देवी सीता में है, इससे तो लगता है कि सीता उन्हीं के योग्य पत्नी हैं।

और फिर ऐसे रमणीय मनोहारी तथा दिव्य वातावरण में जो लंका में दिखलाई दे रहा है। सारे सुख विद्यमान होने पर भी इस स्त्री के अतिरिक्त कोई भी लेशमात्र भी रंज में नहीं मिला। इसका दुख अवश्य जानना होगा और मालूम करना होगा और यदि यह सीता है तो निश्चय ही मेरा श्रम सार्थक हो गया है।

कुछ देर तक हनुमान सोच विचार करते रहे और यकायक सीता की दशा देखकर उनकी आंखों में आंसू आ गए। जब राम की पत्नी होकर सीता भी यदि दुख से इस प्रकार आतुर हो

रही हैं तो यह कहना पड़ेगा कि काल का उल्लंघन करना सभी के लिए कठिन है। इनका शील स्वभाव, अवस्था और बर्ताव भी राम के समान ही महान है। यह अवश्य ही सीता हैं।

यद्यपि रावण ने इन्हें बहुत कष्ट दिए हैं फिर भी यह अपने शील, सदाचार और सतीत्व से युक्त हैं। राम अवश्य ही धन्य हैं जिन्हें मिथिला नरेश महाराज जनक की पुत्री सीता पत्नी के रूप में प्राप्त हुई है। और इस दशा में सीता अभी भी अपने जीवन को धारण किए हुए हैं। उन्हें एक मात्र आशा यही है कि राम आयेंगे और उन्हें दुष्ट राक्षस की कारागार से मुक्त करा ले जायेंगे।

यही सोचते हुए हनुमान अशोक वृक्ष पर बैठे रात्रि के दूसरे पहर की प्रतीक्षा करने लगे।

हनुमान का सीता दर्शन

धीरे-धीरे चन्द्रमा आकाश में अपनी चांदनी फैलाने लगा। हनुमान ने उस चांदनी में जब सीता को देखा तो जल में अधिक बोज़ के कारण दबी हुई नौका की भांति वह उन्हें शोक के भार से झुकी हुई दिखाई पड़ी।

हनुमान ने देखा कि अभी भी सीता के पास अनेक राक्षसी स्त्रियां पहरेदार की तरह बैठी थीं। वे सभी आकृति में बड़ी भयानक और कुरूप थीं। उनके निकले हुए दांत और हाथ में तेज तलवार देखकर ऐसा लगता था मानो साक्षात् यमराज सीता के आस-पास मंडरा रहे हों। बड़े-बड़े ललाट, बाहर निकला पेट, लंबे मोटे ढलके हुए स्तन, बड़े-बड़े होंठ, कुल मिलाकर ये सभी राक्षसियां बिगड़े शरीर वाली, काले पीले रंग की क्रूर स्त्रियां थीं। इनकी नासिका बड़ी थी। वे सभी बारी-बारी से सीता के आस-पास चक्कर लगा रही थीं।

रावण की कैद में पड़ी हुई सीता इन सबके आतंक से मुक्त अपने ही दुख में नीची गर्दन किए भूमि निहार रही थीं। उनकी आंखों में डर, पति से बिछुड़ने का था।

अवसर की तलाश में हनुमान मौन बैठे थे तभी उन्हें ब्रह्म राक्षसों के घर में वेद पाठ की ध्वनि सुनाई दी। इन मंगल वाद्यों की ध्वनि ने महाबाहु रावण को जगा दिया और वह काम आसक्त होकर अपने दल के साथ अशोक वाटिका में आ गया। उसके पीछे लगभग एक सौ सुंदरियां थीं, जो सभी भांति-भांति के आकर्षक वस्त्र पहने थीं।

काम और मद से युक्त रावण सीता में मन लगाए अशोक वाटिका की तरफ आ रहा था।

पत्तों के झुरमुट से हनुमान ने देखा कि वह मतवाला सीता के समीप आ गया।

रावण को अपने समीप आते देख सीता और सचेत हो गई। जब रावण ने उनकी ओर देखा तो क्षणभर को ऐसा लगा मानो उनका शरीर सूखता जा रहा था।

रावण ने सीता को संबोधित करते हुए कहा—“हे सीते! मैं तुमसे प्रेम करता हूँ। तुम अत्यन्त मोहक और सुंदर हो, मुझे देखकर तुम जिस प्रकार सलज्ज हो जाती हो ऐसा लगता है कि तुम्हारे मन का डर अभी गया नहीं है। यहां तुम्हारे लिए किसी प्रकार का कोई भय नहीं है, केवल मैं ही यहां आ सकता हूँ।”

“तुम्हारा मुझसे डरने का कोई कारण नहीं है क्योंकि मैंने कोई अधर्म नहीं किया। पराई स्त्रियों को बलपूर्वक अपना लेना राक्षसों का सदा से धर्म रहा है लेकिन फिर भी मैं तुम्हारी इच्छा के विपरीत तुम्हें कभी नहीं अपनाऊंगा, जब तक कि तुम साथ नहीं दोगी तब तक तुम्हारा स्पर्श भी नहीं करूंगा।”

“तुम जो उस वनवासी राम के लिए एक वेणी धारण करके, नीचे पृथ्वी पर सोकर, मैले वस्त्र पहने, उपवास करती हुई अपना जीवन बिता रही हो, यह तुम्हारे योग्य नहीं है।”

और इसी प्रकार रावण बहुत देर तक सीता से अपने प्रेम का प्रदर्शन करते हुए प्रेमदान की

याचना करता रहा।

असह्य होने पर सीता ने कहा—“दुष्ट निशाचर! तुम पापी हो। तुमने एक सती स्त्री को छल से ब्राह्मण रूप धारण करके हर लिया है। तुमने मेरे आतिथ्य का अपमान किया है। इस अपराध का दंड तुम्हें अपने कुल का नाश करते हुए भोगना होगा। जब भी कोई पापाचारी मारा जाता है तो अपने कुकर्मों से ही मारा है।”

“तुम नहीं जानते कि तुमने अपने पैरों में कितनी गहरी कुल्हाड़ी मारी है। समय जाने दो, श्रीराम मेरी पुकार को अवश्य सुनेंगे और वह आकर तुम्हारी जीवन लीला समाप्त करके मुझे ले जायेंगे।”

रावण को सीता की ये बातें चुभ गईं। उसने कहा—“जिस प्रकार एक राजा के सम्मुख मेरी बंदिनी होकर भी तुमने यह दुस्साहस किया है, तुम्हें इसके बदले अवश्य ही प्राणदंड मिलना चाहिए। मैंने तुम्हें दो महीने का समय दिया है यदि तुमने इसमें स्वयं को मेरे प्रति समर्पित नहीं किया तो मुझे बलात तुम्हें शैया शायिनी बनाना होगा।”

“दुष्ट! वह तेरी चिता होगी। अनार्य! तेरी यह दृष्टि भस्म हो जाएगी। श्रीराम की आज्ञा नहीं अन्यथा मैं तुझे अपने तेज से भस्म कर देती।”

“भला तेरी क्या शक्ति कि तू मुझे पंचवटी से हर कर ले आता। यह तो निस्संदेह विधाता ने तेरे वध के लिए मेरे हरण को माध्यम बनाया है।”

“कौन किसका माध्यम बनता है, यह तो समय बताएगा। अभी मैं तुमको अवधि की याद दिलाने आया हूँ।” और इस तरह वह दुष्ट क्रोध में फुफकारता हुआ घायल सर्प की तरह लौट गया।

हनुमान का मत सही निकला। यही देवी सीता हैं।

रावण के लौट जाने के बाद राक्षसियों ने अनेक प्रकार से सीता को यह समझाने का प्रयास किया, डराया धमकाया भी और मृत्युदंड का भी भय दिखलाया कि वह किसी प्रकार रावण की शैया पर जाने के लिए तैयार हो जाए। लेकिन वह तो एकनिष्ठ पतिव्रता थी। वह तो ऐसे नीच समर्पण से बेहतर मृत्यु का वरण समझती थी। अतः उन राक्षसियों के सारे प्रयास सदा की भांति फिर विफल हो गए।

लेकिन जनक नंदिनी सीता को रावण के आने ने अधिक विचलित कर दिया। वह सोचने लगीं कि कितना कठोर है मेरा हृदय जो इतनी बड़ी विपत्ति में भी अभी तक फट नहीं सका।

रावण को चाहने की बात तो बहुत दूर, वह तो अपने पैर के अंगूठे से भी उसका स्पर्श नहीं कर सकती। उसके मन से आया कि इस यातना को सहने से तो अच्छा है कि मृत्यु को स्वीकार कर लिया जाए।

धीरे-धीरे सब राक्षसियां अपने-अपने दायित्व में व्यस्त हो गईं। सीता के पास केवल त्रिजटा रह गई।

त्रिजटा ही एकमात्र ऐसी राक्षसी थी जिसे सीता से सही अर्थ में सहानुभूति थी। सीता को इसने स्त्रीवत स्नेह दिया। सीता भी उसको मां रूप में ही देखने लगीं।

तभी सीता की बायीं बांह में कुछ रोमांच हुआ और सहसा कांपने लगीं। उन्हें क्षणभर को लगा मानो कोई शुभ समाचार मिलने वाला है। धीरे-धीरे वहां एकान्त छा गया। यह अच्छा अवसर था, जब हनुमान अपना संदेश सीता को पहुंचा सकते थे। लेकिन हनुमान के मन में एक प्रश्न बार-बार उठ रहा था कि वह सीता के सम्मुख किस प्रकार अपनी बात कहने के लिए उपस्थित हों ताकि वे उसे अपना हितैषी समझकर उसका विश्वास करते हुए, राम का संदेश सुन लें और अपना संदेश राम के लिए दे दें। क्योंकि यदि इस रात्रि के बीतते-बीतते मैं सीता को राम का संदेश नहीं दे पाता हूं तो लगता है कि प्रातःकाल ये अपना जीवन समाप्त कर देगी और ये मेरी तमाम सिद्धि को अकारथ कर देगा।

यही सोचते हुए सीता के आस-पास, इधर-उधर चहलकदमी करती हुई राक्षसियों के बीच हनुमान सोच रहे थे कि किस भाषा का वह प्रयोग करें कि जिससे सीता मुझसे बिना डरे मेरी बात सुन लें क्योंकि यदि कोई गड़बड़ हो जाती है और रावण मुझे बंदी बना लेता है तो रघुनाथ के कार्य को कोई दूसरा पूरा कर पाएगा, ऐसा मुझे नहीं लगता।

इस प्रकार बहुत सोचते विचारते हुये राम कथा का वर्णन धीमे-धीमे शब्दों में वहीं अशोक वृक्ष की शाखा पर बैठे-बैठे ही प्रारम्भ कर दिया।

उन्होंने कहा—“अयोध्या के महाराज, इक्ष्वाकु वंश के पुण्यात्मा राजा हुए हैं। वे बड़े अहिंसा प्रिय, दयालु और चक्रवर्ती सम्राट थे। उनके चार पुत्र हैं—राम, पिता के लाडले बड़े पुत्र, धनुर्धारियों में श्रेष्ठ, शस्त्र विद्या विशारद और धर्म के रक्षक अपने पिता की सत्य प्रतिज्ञा को पूरा करते हुए वे अपनी विमाता के द्वारा मांगे गए वरदान के फलस्वरूप छोटे भाई भरत के लिए राज्य छोड़कर स्वयं अपनी पत्नी और भाई लक्ष्मण के साथ वन में चले आए थे।”

“वन में राम महर्षियों और तपस्वियों के यज्ञ की रक्षा करते हुए अनेक आतंकवादी राक्षसों का संहार किया।”

“जन स्थान में अपनी बहन शूर्पणखा के अपमान और भाई खर-दूषण के साथ चौदह हजार राक्षसों की सेना का संहार देखकर अभिमानी रावण ने जनक नंदिनी सीता का अपहरण कर लिया।”

“पहले तो दुष्ट राक्षस ने मायावी मृग के रूप में मारीच के द्वारा रामचन्द्र जी को धोखे से उनकी कुटिया से दूर कर दिया और बाद में जब वह मृग राम के बाण से घायल हुआ तो उसके मुख से लक्ष्मण शब्द का उच्चारण कराकर उनकी पत्नी सीता के मन में यह भाव जगा किया राम अवश्य ही कहीं संकट में हैं और सीता ने इसी भय से प्रभावित होकर लक्ष्मण को राम की सेवा में भेज दिया। लक्ष्मण जाना नहीं चाहते थे लेकिन सीता ने अपनी पति भक्ति के भाव में लक्ष्मण के सामने मर्यादा का प्रश्न खड़ा कर दिया। बाध्य होकर लक्ष्मण को जाना पड़ा।”

रावण तो इसी अवसर की तलाश में था। वह ब्राह्मण वेश में सीता की कुटिया में भिक्षा लेने

गया और फिर अपने असली रूप में आकर उसे बलात् हर कर ले आया।

“वृद्ध जटायु ने उसका विरोध भी किया लेकिन एक पक्षी राक्षस का मुकाबला कहां कर सकता था। आखिरकार वह अपने प्राणों की बाजी तो लगा गया पर सीता को नहीं छुड़ा सका। वह बेचारी रोती-बिलखती चलते हुए अपने वस्त्र का एक टुकड़ा और कुछ आभूषण ऋष्यमुख पर्वत के ऊपर से गुजरते हुए छोड़ती चली गई। लौटने पर राम को सीता नहीं मिली, खाली वीरान पंचवटी मिली और मिले सीता के घिसटे हुए पैरों के निशान।”

“दुखी राम ने जंगल-जंगल भटकते हुए सीता की खोज करनी आरम्भ की। सुग्रीव नामक वानर से मित्रता की और बाली का वध करके सुग्रीव को वानरों का राजा बना दिया। इसके बाद हजारों वानर सीता का पता लगाने के लिए चारों दिशाओं में फैल गए।?”

“सम्पाति के कहने से सौ योजन समुद्र को लांघकर एक वानर यहां भी उस देवी सीता की खोज में आ गया और अशोक वृक्ष पर बैठा हुआ विरहतप्ता सीता की दीन दशा देखकर रो रहा है।”

सीता ने जब यह सुना तो उन्हें बड़ा विस्मय हुआ। उन्होंने अपनी गर्दन उठाकर अशोक वृक्ष की ओर देखा।

सीता को अपनी ओर दृष्टि दौड़ाते हुए देखकर हनुमान ने हाथ जोड़कर उनको प्रणाम किया और तुरंत राम की दी हुई मुद्रिका सीता के पास नीचे फेंक दी।

अपने प्रिय श्रीराम की मुद्रिका को सम्मुख आया जानकर सीता ने उसे उमंग भरे मन से उठाया, निहारा और आंखों से लगा लिया। आज कितने दिनों बाद पहली बार उसे लगा कि उसका प्रिय उसके सम्मुख है।

एक बार तो सीता को यह लगा कि कहीं वह स्वप्न तो नहीं देख रही और यह सोचकर उसकी आंखों में आंसू आ गए। वानर अब भी पेड़ की डाल पर बैठा हुआ उनको निहार रहा था।

बहुत देर विचार करने के बाद उन्होंने पाया कि यदि यह स्वप्न है तो बहुत बुरा स्वप्न है। कहीं मेरे प्राणनाथ, देवर लक्ष्मण या पिता का कोई अमंगल तो नहीं हो गया।

नहीं, यह स्वप्न नहीं हो सकता क्योंकि जो वानर मेरे सामने बैठा है वह तो साक्षात् वानर रूप में ही है, मुझसे बात कर रहा है। इसने सम्पूर्ण राम कथा सुनाई है।

सीता को असमंजस में देखकर हनुमान अशोक वृक्ष से नीचे कूद पड़े और प्रणाम करते हुए सीता से कहा—“हे देवी! आपकी आंखों से जो आंसू गिर रहे हैं मुझे लगता है कि आप बहुत दुखी हैं। आप इस तरह यहां इस वृक्ष के सहारे जिस प्रकार शोकमग्न बैठी हैं, मैं आपका परिचय चाहता हूँ।”

“हे कपिश्रेष्ठ! इस भूमंडल के श्रेष्ठ राजाओं में प्रधान महाराज दशरथ की पुत्रवधू, मिथिला के राजा जनक की पुत्री और परम बुद्धिमान श्रीराम की धर्मपत्नी सीता हूँ। तुमने यह जो मुद्रिका अभी-अभी डाली है, मैं इसी से पहचान गई थी कि कोई मेरे पति के पास से मेरा समाचार लेने

आया है।”

“यहां मैं दुष्ट रावण की बंदिनी बनी हुई अपना संकटमय जीवन व्यतीत कर रही हूं।”

“हे देवी! मैं राम का दूत पवनपुत्र हनुमान हूं और आपके लिए श्रीराम का संदेश लाया हूं कि अब आपके संकट के दिन लगभग समाप्त हो गए हैं। आप यह जान लीजिए, अब भगवान श्रीराम शीघ्र ही अपनी संपूर्ण सेना के साथ दुष्ट रावण पर चढ़ाई करके, उसका वध करके आपको ले जायेंगे। उन्होंने और आपके प्रिय देवर लक्ष्मण ने भी आपकी कुशल कामना की है।”

“वीरवर! मैंने लक्ष्मण का अपमान किया था। उस जैसे भाई पर अपने मोह के कारण संदेह कर बैठी। शायद मेरे लिए यह संकट उसी का दुष्फल है।”

“लेकिन यदि मनुष्य जीवित रहे तो उसे सौ वर्ष बाद भी आनन्द प्राप्त होता ही है। यही कारण है कि इस कारागार में भी तुम्हारे द्वारा अपने पति का कुशल समाचार पाकर मैं जिस सुख का अनुभव कर रही हूं, वह अकथनीय है।”

किन्तु क्षण भर बाद हनुमान को अपने समीप आते देखकर सीता के मन में अकस्मात एक संशय जाग उठा—“अगर यह दुष्ट रावण की माया हुई तो?”

और मन में यह आते ही सीता स्वयं को उस क्षण के लिए धिक्कारने लगी, जब उन्होंने अपने मन की बात हनुमान से कही थी और यह विचार आते ही उन्होंने हनुमान को बार-बार वंदना करते हुए देखकर लम्बी सांस खींचते हुए कहा—“हे अपरिचित पुरुष! यदि तुम स्वयं मायावी रावण हो और मायामय शरीर में प्रवेश करके मुझे छल रहे हो तो तुम्हारे लिए यह अच्छी बात नहीं है। एक बार तुम पहले भी संन्यासी के रूप में मुझे छल चुके हो। मैं समझ रही हूं कि तुम वही रावण हो। मैं तो उपवास करते-करते दुर्बल हो गई हूं और स्वयं दुखी रहती हूं फिर भी यदि तुम मुझे संताप देने आए हो तो हे वानर रूपधारी निशाचर! तुम मेरे शाप के भागी बनोगे और यदि तुम सत्य ही भगवान राम के दूत हो तो तुम्हारा कल्याण हो, मैं तुमसे पूछती हूं—तुम राम के गुणों का वर्णन करो।”

“हे देवी! आपने संदेह में ही सही, मुझ पर जो उपकार किया है, मैं आपका चिर ऋणी रहूंगा। प्रभु के गुण की महिमा इतनी अपरम्पार है कि उसका गुणवान जितना करो, उतना ही पूज्य वाला होता है। तो हे देवी! मृग रूपधारी निशाचर द्वारा श्री रघुनाथ जी को आश्रम से दूर हटाकर जिसने सूने आश्रम में पहुंचकर आपका अपहरण किया है, उसे उस पाप का जो फल मिलने वाला है, आप उसे अपनी आंखों से देखेंगी। श्रीराम जब अपने अग्नि समान तेजस्वी बाण छोड़कर रावण के प्राण हरेंगे तो उसे ज्ञात होगा कि किसी पुण्यशीला सती का अपमान करने का क्या दुष्फल होता है।”

“हे देवी! मैं उन्हीं का भेजा हुआ दूत हूं और श्रीराम ने आपके वियोग जनित दुख से पीड़ित होकर मुझे आपके पास आपकी कुशल लेने के लिए भेजा है।”

“वृक्ष पर बैठे हुए मैंने जिस राम का कथा का पारायण किया था, मालूम पड़ता है कि आप उस समय अपने दुख से घिरी श्रीराम के ध्यान में ही डूबी हुई थीं, अन्यथा आपको संदेह नहीं होता।”

“लेकिन हे कपि! तुम्हारा श्रीराम से मिलन कैसे हुआ? क्योंकि मेरे सामने तो तुम कभी राम के सम्पर्क में आए नहीं।”

“हे देवी! हमारा राम से मिलन भी आप ही के कारण हुआ। आपको तो शायद ज्ञात नहीं किन्तु जब आप भगवान श्रीराम को अपनी कुटिया में नहीं मिलीं तो उस समय आपके वियोग में विलाप करते हुए उनकी दशा बहुत दयनीय हो गई थी।”

“राम जैसा धीर पुरुष, जो सारे ब्रह्माण्ड को अपने तीन पग में नापने की क्षमता रखता हो, वह एक नारी के वियोग में प्राण त्यागने की स्थिति में आ जाए तो निश्चय ही वह नारी कितनी महान होगी, यह उनके दुख से प्रकट हो रहा था।”

“हे विदेह कुमारी! भगवान रामचन्द्र ने नेत्र प्रफुल्ल कमल दल के समान सुन्दर हैं और जिस प्रकार सूर्य के अस्त होने पर कमल आभाहीन हो जाता है आपके वियोग में वह श्रीहीन हो रहे हैं। उनका मुख पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान मनोहर है लेकिन वह चन्द्रमा रावण रूपी निशाचर के द्वारा ग्रहण का शिकार हो गया है।”

“हे देवी! जो पुरुष तेज में सूर्य के समान, क्षमा में पृथ्वी के समान, बुद्धि में बृहस्पति और यश में इन्द्र के समान हैं। जो सम्पूर्ण जीव जगत के रक्षक हैं, शत्रुओं को संताप देने वाले सदाचार और धर्म के मूर्तिमान पुरुष हैं, जिनका अवतरण ही लोक में धर्म की मर्यादाओं को बांधकर उनका पालन करना है। वे सर्वत्र भक्तिभाव से पूजे जाते हैं। मैं उनका कहां तक गुणगान करूं?”

“राजनीति में पूर्ण निष्णात, ब्राह्मणों के उपासक, ज्ञानवान, शीलवाने, विनम्र और भक्तों के प्रिय, जो श्यामल कांति वाले हैं। उनके उदर और गले में तीन रेखाएं हैं, तलवों के मध्य भाग, पैरों की रेखाएं और स्तनों के अग्रभाग घिसे हुए हैं। स्वस्तक में तीन भ्रमर हैं।”

“उनके नेत्र, मुख विवर, मुखमंडल, जिह्वा, होंठ, तालु, स्तन, नख हाथ और पैर ये दस अंग कमल के समान हैं। छाती, मस्तक, ललाट, गला, भुजाएं, कंधे, नाभि, चरण और पीठ और कान, ये दस अंग विशाल हैं। पार्श्व भाग, उदर, वक्षस्थल, नासिका, कंधे और ललाट, ये छः अंग ऊंचे हैं। श्री रघुनाथ पूर्व, मध्यान्ह और अपरान्ह, इन तीनों कालों द्वारा धर्म, अर्थ और काम का अनुष्ठान करते हैं। उनके भाई सुमित्रा कुमार लक्ष्मण भी बड़े तेजस्वी हैं।”

“आपके वियोग में घूमते हुए जब ये दोनों भाई आपकी खोज में ऋष्यमुख पर्वत की दिशा में आए तो हमारे महाराज सुग्रीव ने इन दोनों तपस्वियों को देखकर भय का अनुभव किया।”

“सुग्रीव अपने बड़े भाई बाली से भयभीत थे क्योंकि उसने इनकी एक छोटी-सी भूल पर उसे न केवल राज्य से हीन कर दिया बल्कि उसकी पत्नी तक को छीन लिया।”

“श्रीराम को इस प्रकार देखकर सुग्रीव को यह लगा कि कहीं ये बाली के गुप्तचर न हों। अतः इनका सही परिचय जानने के लिए बाली ने मुझे इनके पास भेजा।”

“वास्तव में मैं वायुदेव का औरस पुत्र और सुमेरू पर्वत के महाराज केसरी का क्षेत्रज पुत्र हूँ। हमारा वानर साम्राज्य पूरे देश में फैला हुआ है। जब मेरे पिता ने यह जाना कि ऋष्यराज पुत्र बाली ने युवराज सुग्रीव को राज्यहीन कर दिया है तो उन्होंने मुझे सुग्रीव की सहायतार्थ भेजा। मैं तब से महाराज सुग्रीव के साथ ही हूँ।”

महाराज सुग्रीव के संशय को जानकर मैं भगवान श्रीराम की शरण में आया और जब मुझे वह वास्तविकता ज्ञात हो गई कि ये विजातीय पुरुष नहीं हैं बल्कि ये स्वयं भी पत्नीविहीन और राज्यविहीन हैं। इन्हें भी अपनी विमाता के हठ के कारण राज्य छोड़ने के लिए बाध्य होना पड़ा और दुष्ट राक्षस रावण इनकी अनुपस्थिति में वन से इनकी पत्नी को चुरा कर ले गया है तो सुग्रीव और राम की पीड़ा समानधर्मा हो गई। मैं इन दोनों तपस्वियों को सुग्रीव के पास ले आया और इसी आधार पर दोनों में मित्रता हुई। यह तो मेरा सौभाग्य है कि मुझे भगवान श्रीराम की सेवा करने का अवसर मिला।

“सुग्रीव से मित्रता होने के बाद अपने वचन का पालन करते हुए रघुकुल शिरोमणि श्रीराम ने एक ही बाण से सात साल वृक्षों को बेधते हुए अब वह बाण पाताल लोक भेज दिया तो सुग्रीव को विश्वास हो गया कि श्रीराम अवश्य ही उनके कष्ट का निवारण कर सकते हैं।”

“श्रीराम ने बाली का वध करके सुग्रीव को किष्किन्धा नरेश के पद पर प्रतिष्ठित किया और बाली के ज्येष्ठ पुत्र अंगद को युवराज बना दिया।”

“अब बारी सुग्रीव की थी लेकिन वर्षा ऋतु आने के कारण चार मास तक आपकी खोज का कार्यक्रम प्रारम्भ नहीं हो सका क्योंकि जैसे ही वर्षा ऋतु समाप्त हुई, एक महीने की अवधि देते हुए महाराज सुग्रीव ने देश भर के वानरों के महावीर दलों को आपकी खोज में भेज दिया।”

“मुझे दक्षिण दिशा का दायित्व मिला।”

“सामने भीषण समुद्र देखकर हमें अपनी सीमा समाप्त होती दिखाई दी, पर यात्रा तो अभी बाकी थी।”

“हमारे श्रेष्ठ श्रीजामवन्त ने मुझे मेरे उस बल का स्मरण कराया जिसे बाल्यकाल में ऋषियों के शाप के कारण मैं भूल चुका था और यह कृपा श्रीराम की ही है कि वहां से सौ योजन दूरी का समुद्र फलांगकर मैं आप तक आ पहुंचा हूँ।”

“हे देवी! आप अन्यथा संशय न करें, मैं निश्चय ही श्रीराम का दूत हूँ। आप यदि कहें तो मैं अपना हृदय चीरकर दिखा सकता हूँ।”

“हां, एक बात और जो मुझे स्मरण आती है और मैं इस संदर्भ में भूल गया था—दुष्ट रावण जब आपको हर कर ले जा रहा था तो मार्ग में गिद्धराज जटायु ने आपकी आर्त पुकार सुनकर उस पर आक्रमण किया था। एक बार तो गिद्धराज ने रावण को मूर्च्छित भी कर दिया था लेकिन

क्योंकि गिद्धराज बूढ़े हो गए थे इसलिए अकेले एक राक्षस का सामना कहां तक करते। दुष्ट रावण ने उनके पर ही काट दिए थे।”

“हे देवी! ये गिद्धराज श्रीराम को आपकी खोज करते हुए मार्ग में घायल अवस्था में मिले। उन्होंने ही प्राण त्यागते समय यह बताया था कि आपका हरण लंका के राजा रावण ने किया है।”

“और जब हम आपकी खोज करते हुए दक्षिण प्रदेश में महासागर तट पर आए तो जटायु के बड़े भाई वृद्ध सम्पाति ने हमें यह वृत्तान्त सुनाया कि जहां दुष्ट रावण जानकी जी को लेकर गया है। वह लंका यहां से सौ योजन दूर समुद्र के बीच में स्थित है।”

“जब हमने उसे जटायु के मरण का वृत्तान्त सुनाया तो वह बड़ा दुखी हुआ और उसने तत्काल प्राण त्याग दिए।”

“सम्पाति के द्वारा संकेत पाने पर ही मैं यहां आपके पास आपकी शरण में, आपकी खोज लेता हुआ आ पहुंचा हूं।”

“हे देवी! यह सही है कि मैं इच्छानुसार रूप धारण कर सकता हूं लेकिन मैं आपके प्रिय पति राम का ही दूत हूं।”

हनुमान से इस प्रकार विश्वसनीय बातें जानने पर सीता को यह लगने लगा कि संभव है, यह सत्य ही कह रहा हो और राम का दूत ही हो।

“हे देवी! अब मेरे पास केवल एकमात्र प्रमाण है, वह मुद्रिका है, जो मैंने आपको दी थी। मैं मायावी हो सकता हूं लेकिन वह मुद्रिका नहीं। इसे श्रीराम ने चलते समय मुझे निशानी के रूप में दिया था।”

सीता ने उस मुद्रिका को एक बार फिर से निहारा और अब वे सोचने लगीं कि नाहक ही मैंने इस सत्यनिष्ठ दूत पर संदेह किया। अपने दुख में मैं यह बिलकुल ही भूल गई कि इसने मुझे सर्वप्रथम मुद्रिका ही दी थी।

“हे वानर श्रेष्ठ! तुमने मुझे प्रियतम का संदेश देकर बहुत प्रसन्न किया है, मेरे मन को संतोष हुआ है। तुम पराक्रमी, शक्तिशाली और बहुत बुद्धिमान हो। तुम तो अकेले ही इतने बड़े समुद्र को लांघकर शत्रु की नगरी में प्रवेश पा गए। निश्चय ही मैं तुम्हें कोई साधारण वानर नहीं समझती।”

“हे देवी! भावुकता में आकर आप जिन गुणों को मेरा समझकर मुझे श्रेय दे रही हैं, वे मेरे नहीं, वह तो मुझ पर श्रीराम की कृपा है।”

“तुम श्रीराम के इतने प्रशंसक हो तो मैं निश्चय ही तुमसे बातचीत कर सकती हूं। मैं जानती हूं कि श्रीराम ऐसे किसी व्यक्ति को मेरे पास नहीं भेज सकते जिसके पराक्रम और शील स्वभाव का पता न हो।”

“तुमने मुझे श्रीराम और लक्ष्मण की कुशलता का जो समाचार दिया है, यह मेरे डूबते प्राणों को सहारा देने के लिए एक औषधि के रूप में लग रहा है।”

“मैं जानती हूँ कि ये दोनों भाई रावण को दण्ड देने की शक्ति रखते हैं। वे अब तक भी चुप नहीं बैठे होंगे, मैं यह भी जानती हूँ। लेकिन अभी शायद मेरे दुखों का अन्त नहीं हुआ। यही सोचकर मैं सन्तोष कर लेती हूँ लेकिन तुम आ गए हो तो मुझे लग रहा है कि श्रीराम मेरे बारे में अभी भी उतने ही चिंतित हैं।”

“आपने ठीक जाना देवी। राम बलिष्ठ हैं और रावण को परास्त करने में समर्थ भी किन्तु एक राज्य का मुकाबला एक विशाल सेना से ही किया जा सकता है इसलिए सेना का निर्माण करना बहुत आवश्यक था।”

“श्रीराम की बाली के मित्रता का प्रयोजन भी यही है कि समस्त वानर और भालू सेना श्रीराम के हित में लड़ सके।”

“हे हनुमान! यह तो बताओ कि क्या श्रीराम को अयोध्या के समाचार मिलते रहते हैं? और जब राम यहां आक्रमण करेंगे तो क्या वे भरत की अक्षौहिणी सेना को आमंत्रित करेंगे?”

“आप घबराइए नहीं देवी! वानरों की सेना ही रावण के लिए भारी पड़ेगी और फिर आप तो जानती हैं, आपके देवर लक्ष्मण अनेक शास्त्रों के ज्ञाता हैं। उनके सामने तो स्वयं रावण भी नहीं ठहर सकता।”

“हे देवी! हमारे वानरराज सुग्रीव, जो अपने नखों से प्रहार करते हैं, वे दुष्ट पापी रावण का मुंह नोच खायेंगे। मैं तो आपको यही विश्वास दिलाता हूँ।”

“क्या श्रीराम को यह पता है कि मैं यहां लंका में हूँ?”

“नहीं, यदि उन्हें ज्ञात होता तो हम उत्तर, पूर्व और पश्चिम में आपकी खोज के लिए वानरों का दल क्यों भेजते? यह तो जब हम सागर के तट पर पहुंचे तो महाराज जटायु के बड़े भाई सम्पाति से यह ज्ञात हुआ कि आपको रावण लंका में उठाकर ले गया है। इसलिए जब मैं यहां से लौटकर जाऊंगा तो श्रीराम मेरी बात सुनकर वानर और भालुओं की विशाल सेना लेकर तुरन्त वहां से चल देंगे और इस असीमित और विराट महासागर को स्तब्ध करके, इस पर सेतू बनाकर लंका पहुंचेंगे।”

फिर अपनी भुजाओं को कसमसाते हुए हनुमान ने कहा—

“आप देखना देवी! रावण को मारकर वे इस लंका को राक्षसों से सूना कर देंगे।”

“आज तुमने यह उत्साहजनक बान करके बहुत दिनों के बाद मुझे सुख पहुंचाया है हनुमान!”

“देवी! आप देखना, जब श्रीराम लंका पर चढ़ाई करेंगे तो साक्षात् मृत्यु भी यदि विघ्न बनकर उनके सामने आई तो परास्त होकर लौट जाएगी। और इस प्रसवण गिरि के शिखर पर

श्रीराम देवराज इन्द्र की तरह ऐरावत पर बैठे आपको दर्शन देंगे।”

“आप तो यह जान लीजिए कि वे सिर्फ आपके बारे में ही सोचते हैं। उन्हें आपकी चिंता के कारण नींद नहीं आती और कभी आंख भी लग जाती है तो सीता का स्वर निकालते हुए जाग पड़ते हैं।”

“हे देवी! श्रीराम सदैव आपके लिए ही दुखी रहते हैं।”

हनुमान से यह सुनकर सीता का अपना दुख तो कम हो गया किन्तु अब वे श्रीराम के दुख से चिंतित हो गईं और बोलीं—

“हे हनुमान! तुमने मुझे श्रीराम के बारे में समाचार देकर एक तरफ अवश्य ही बड़ा सुख दिया है लेकिन दूसरी तरफ मेरे प्रति उनके दुख को बताकर मुझे ऐसा लग रहा है मानो विष मिला अमृत पिला दिया हो। अब जब मुझे यह ज्ञात हो गया है कि मेरे पति मेरे विरोग की रस्सी में बंधे छटपटा रहे हैं तो मेरे मन को प्रत्येक कण में स्पन्दन होने लगा है। मैं विचलित हो रही हूँ। श्रीराम को देखने का उत्साह बढ़ गया है और उस क्षण की प्रतीक्षा करनी भारी हो रही है जब श्रीराम राक्षसों का वध करके रावण का संहार करके, मुझे यहां से इस दुष्ट की कारागार से मुक्त करायेंगे।”

“मेरा तो यही कहना है कि तुम उनसे जाकर कहना कि वे शीघ्रता करें। अब वक्त पूरा होने में दो माह शेष हैं। निर्दयी रावण ने मेरे जीवन की अवधि जो निश्चित की है, उसमें इतना ही समय बाकी है।”

“रावण के छोटे भाई विभीषण ने तो मेरा बहुत पक्ष लिया और रावण को बार-बार समझाया कि वह मुझे मुक्त करके राम के हाथों में सौंप दे और उनसे अनावश्यक बैर न ले। किन्तु दुष्ट अहंकारी रावण ने अपने उस धर्मात्मा भाई की बात भी नहीं मानी।”

“विभीषण की पत्नी सरमा ने स्वयं अपनी पुत्री कला को मेरे पास भेजा था, उसी ने मुझे यह रहस्य बतलाया।”

“हे हनुमान! इस कारागार में भी मैंने कई बार यह अनुभव किया है कि कुछ लोग मेरे हितैषी हैं, वे राम की शक्ति को पहचानते हैं।”

“रावण का ही एक कार्यकर्ता मंत्री अबिंध्य नाम का राक्षस है। यह बड़ा ही विद्वान, सुशील और धर्मात्मा है। वृद्ध होने के कारण रावण इसका सम्मान भी करता है।”

“अबिंध्य ने रावण से यह तक कह दिया कि हे रावण! सीता का हरण तुम्हारे और तुम्हारी जाति के लिए विनाश का कारण बनेगा। श्रीराम के हाथों से राक्षसों के विनाश का समय आ पहुंचा है। उचित यही है कि क्षमायाचना करते हुए सम्मानपूर्वक सीता को लौटा दिया जाए। पर रावण ने उसकी बात भी नहीं मानी।”

“आप सत्य कह रही हैं देवी! तेजवान तपस्वियों और अपने धर्म पर चलने वाले दृढ़, व्रतियों के लक्ष्य में कोई शक्ति बाधक नहीं होती। श्रीराम और आप ऐसे ही दृढ़ व्रती हैं।”

और यह कहते हुए हनुमान ने सीता जी की ओर देखा, उनकी आंखों में राम की विरह व्याकुल दशा जानकर आंसू आ गए थे।

“हे देवी! आप धैर्य धारण करें। आप अवधि की बात करती हैं। मेरी बात सुनिए—श्रीराम शीघ्र ही विशाल सेना के साथ लंका पर चढ़ाई कर देंगे और यदि आप आज्ञा दें तो मैं अभी आपको इस दुख से मुक्ति दिला सकता हूँ। आप मेरी पीठ पर बैठ जाइए, मैं आपको साथ लेकर समुद्र लांघकर श्रीराम के पास पहुंचाता हूँ। मैं अकेला इस दुष्ट रावण की लंका को भस्मभूत करने की क्षमता रखता हूँ।”

“हे मिथिलेश कुमारी! श्रीराम दक्षिण में प्रस्रवण गिरि पर रहते हैं। मैं उनके पास अभी आपको पहुंचाए देता हूँ। आप मेरी पीठ पर बैठिए। पलक झपकते ही आप श्रीराम के सम्मुख होंगी। जिस मार्ग से आप लंका आई हैं, उसी मार्ग से आपको वापिस ले जाऊंगा।”

हनुमान की यह उत्साहजनक बात सुनकर सीता का मन रोमांचित हो उठा और वे बोलीं—

“हे हनुमान! तुम्हारा यह दुस्साहस, तुम्हारी चपलता मुझे अच्छी लग रही है। तुम मुझे श्रीराम के पास पहुंचा दोगे, इसमें मुझे लेशमात्र भी संशय नहीं है, लेकिन मेरा तुम्हारे साथ जाना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं है। वायुवेग से तुम्हारी गति मुझे मूर्छित कर सकती है। मैं तुम्हारी पीठ से गिर भी सकती हूँ और यदि समुद्र में गिरकर जल जन्तुओं का आहार बन गई तो श्रीराम की दशा की कल्पना कर सकते हो।”

“और यह तो तुमने सोचा ही नहीं कि जब मुझे तुम्हारे साथ इस प्रकार जाते हुए रावण और उसके पक्ष के लोग देखेंगे तो वे तुम्हारा पीछा नहीं करेंगे क्या? तुम्हारे पास तो कोई हथियार भी नहीं है।”

“और जब तुम राक्षसों से युद्ध करोगे तो भय से पीड़ित होकर मैं तुम्हारी पीठ से अवश्य गिर जाऊंगी। अतः हे वानर श्रेष्ठ! तुम अपने इस अतिरिक्त उत्साह को छोड़कर केवल इतना ही करो कि राम को यहां शीघ्र भेजने का प्रबंध करो ताकि वे राक्षसों सहित रावण का वध करके मुझे यहां से ले जाएं। यही मेरी मुक्ति का एकमात्र सरल उपाय है।”

“हे देवी! मैं जान गया, आप अबला होने के कारण मेरी पीठ पर बैठकर यह सौ योजन समुद्र पार करने में असमर्थ हैं।”

“एक बात यह भी है हनुमान! कि पति भक्ति की ओर दृष्टि रखकर मैं श्रीराम के सिवा किसी दूसरे पुरुष के शरीर का स्वेच्छा से स्पर्श नहीं कर सकती। रावण तो मुझे बलात हरकर लाया था, उस समय मैं असमर्थ थी लेकिन तुम जब मुझे ले जाओगे तो उस समय मैं असमर्थ नहीं हूँ। यह मेरे पतिव्रत धर्म पर एक दोष होगा।”

“हे देवी! आपने जो यह स्पर्श वाली बात कही है, यह अवश्य ही विचारणीय है। आप निश्चय जानिए श्रीराम अवश्य यहां शीघ्र आयेंगे किन्तु आप कम से कम मुझे कोई ऐसी पहचान तो दें जिससे श्रीराम को यह विश्वास दिला सकूँ कि मैं आपसे मिलकर श्रीराम का

समाचार आपको देकर और आपकी दशा से परिचित होकर यहां से लौट रहा हूं।”

“हे हनुमान! तुम मेरे प्रियतम से यह कहना—”

“नाथ! चित्रकूट पर्वत के उत्तर पूर्व वाले भाग पर जो मंदाकिनी नदी बहती है, जहां, फल, मूल और जल की बहुतायत है, उस सिद्धों द्वारा सेवित प्रदेश में, तापस आश्रम में जब मैं वास करती थी, उन्हीं दिनों नाना प्रकार के फूलों की सुगंध से वासित उस आश्रम के उपवनों में जल विहार करके भीगे हुए आए आप मेरी गोद में बैठ गए थे। इसी समय एक मांस लोलुप कौआ आकर मुझ पर चोंच मारने लगा। मैंने एक ढेले से उसे हटाने की चेष्टा भी की पर वह मूर्ख जिद्दी नहीं माना।”

“मैं उस पक्षी पर बहुत कुपित थी। अतः अपने लंहगे को दृढ़तापूर्वक कसने के लिए नाड़ा खींचने लगी, उस समय मेरा वह वस्त्र कमर से कुछ नीचे खिसक गया और तब आपने मुझे इस दशा में देखकर मेरी हंसी उड़ाई थी। पहले तो मैं कुपित हुई, फिर लज्जित हो गई। इतने में ही भक्ष्य लोलुप उस कौए ने चोंच मार कर मुझे क्षत-विक्षत कर दिया। मैं उसी अवस्था में आपके पास आई।”

“आप वहां बैठे हुए थे। मैं उस कौए की हरकत से तंग आ गई थी। अतः थककर आपकी गोद में आ बैठी। मुझे क्रोध आ रहा था। आपने मुझे सान्त्वना दी। उस दिन मैं थकने के कारण बहुत देर तक आपकी गोद में सोती रही फिर जब आपकी बारी आई तो आप मेरी गोद में सो गए। तब वह कौआ फिर आया। मैं सोकर जगने के बाद आपकी गोद से उठकर बैठी ही थी कि उस कौए ने मेरी छाती में चोंच मार दी और वहां से रक्त की बूंदें गिरने लगीं। एक बूंद सोते हुए श्रीराम, आपके मुख पर गिर पड़ी।”

“मेरी छाती का यह घाव देखकर कुपित हुए श्रीराम आप रोष से भर गए और जब उस कौए पर दृष्टि गई तो चटाई से एक कुश निकालकर, ब्रह्मास्त्र मंत्र से अभिमंत्रित करके वह कौए की ओर छोड़ दिया। उसकी इस दशा में मैं किसी ने कोई सहायता नहीं की। अंत में वह शरण पाने के लिए आप ही के चरणों में आया।”

“हे हनुमान! श्रीराम को बताते हुए यह कहना कि उन्हीं के अस्त्र से उस कौए की दाहिनी आंख नष्ट हुई। इस प्रकार अपना दायां नेत्र देकर वह कौआ अपने प्राण बचाकर भाग गया।”

“हे हनुमान! स्वामी से कहना कि उन्होंने मेरे लिए साधारण अपराध करने वाले कौए पर भी जब ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया था तो फिर जो दुष्ट मुझे हरकर लाया है, उसे आप कैसे क्षमा कर सकते हैं? जिसके नाथ श्रीराम हैं, वह सीता अनाथ कैसे दिखाई देती है।”

इस तरह सीता को विरह व्याकुल दशा में आंसू भरे नेत्रों से देखते हुए हनुमान ने कहा—“हे देवी! मुझे आपके दर्शन हुए, मैं श्रीराम को आपका समाचार दूंगा। अब आप शोक न करें। कुछ ही समय में आप इन दुखों का अंत देखेंगीं।”

और इस प्रकार हनुमान से धीरज भरे शब्द सुनते हुए देवी सीता ने उनको कपड़े में बंधी

दिव्य चूड़ामणि देते हुए कहा—“हे हनुमान! यह श्रीराम को दे देना।”

हनुमान ने उसे अपनी उंगली में डाल लिया और अब वे सीता की परिक्रमा करके लौटने की तैयारी करने लगे।

सीता ने जिस मणि को अब तक श्रीराम की स्मृति के रूप में संभाल कर रखा हुआ था, वह अब मुद्रिका के आने के बाद राम को देते हुए उन्हें अपार प्रसन्नता हुई। कम से कम इस मणि से राम यह तो जान ही लेंगे कि हनुमान निश्चय ही मुझसे मिलकर जा रहे हैं।

इतने समय तक उन्हें मेरा कोई समाचार नहीं मिला था। अब जब हनुमान के लौटने पर उन्हें समाचार मिलेगा तो उनके इस सुख की कल्पना से वे स्वयं रोमांचित होने लगीं। कुछ क्षण को मानो उनके आंसू थम गए। वे फिर से अपने आपको सनाथ समझने लगीं।

हनुमान द्वारा लंका दहन

सीताजी से चूड़ामणि लेकर हनुमान अपने कार्य में पूरी सफलता का अनुभव कर रहे थे किन्तु वे यह भी सोच रहे थे कि इसमें शायद एक अंश बाकी रह गया है। जब यहां आए हैं तो शत्रु की शक्ति का पता भी लगा लेना चाहिए। इसलिए उन्होंने सोचा कि यह कार्य चार प्रकार से हो सकता है—साम, दाम, दंड और भेद। इसमें केवल दंड का ही प्रयोग उचित लग रहा है।

वह सोच रहे थे कि राक्षसों के प्रति काम नीति निरर्थक है। धन की इनके पास कोई कमी नहीं है। बल के अभिमान में ये चूर हैं। अतः भेद नीति भी निष्फल रहेगी, केवल दंड नीति से ही इनकी शक्ति का पता लगाया जा सकता है। इसमें पराक्रम ही एकमात्र उपाय है क्योंकि यदि युद्ध में राक्षसों के मुख्य-मुख्य वीर जाएं तो ये लोग स्वयं को कुछ असहाय महसूस करेंगे।

समस्या थी, राक्षसों के साथ इस समय युद्ध की स्थिति कैसे बने, कैसे रावण का सामना हो ? क्योंकि इस निर्दयी रावण का यह सुंदर वन आनन्द देने वाला और मनोरम है।

यह विचार मन में आते ही हनुमान ने सोचा जिस प्रकार आग सूखे वन को जला डालती है उसी प्रकार मैं भी इस उपवन का विध्वंस कर डालूंगा। यह देखकर तो रावण अवश्य ही मुझे पर कुपित होगा और ये लोग मुझे पकड़कर उसके सामने लग जायेंगे।

रावण न तो मेरी गति का सामना कर सकता है और न मेरे पराक्रम का। मैं इन सबकी सेना को मारकर रावण का अभिमान चूर करके समुद्र के रास्ते किष्किन्धा भाग जाऊंगा। यह सोचकर हनुमान कुद्ध हो गए और फिर धीरे से आकर देवी सीता से कहा—

“हे देवी! मैं यहां आया हूं, आप मेरे साथ लौट नहीं रहीं तो राम के दूत के रूप में यदि मैं रावण को अपना आना प्रकट कर दूं और उसे राम की शक्ति के बारे में आभास दे दूं तो आपको कोई आपत्ति तो नहीं होगी ?”

“मैं तुम्हारा अर्थ नहीं समझी वानर !”

“हे देवी! इतनी लंबी यात्रा करके मुझे बहुत भूख लग आई है। इसलिए मैं चाहता हूं कि रावण की इस सुंदर वाटिका में जो रसीले फल लगे हुए हैं, मैं इनका आहार ग्रहण करूं।”

“हां, इसमें तुम स्वतंत्र हो, जो चाहो फल खाओ।”

सीता की अनुमति पाकर हनुमान ने वाटिका में प्रवेश करके रसीले फलों का स्वाद चखना प्रारम्भ कर दिया।

पहले फल खाए फिर उनको फेंकना प्रारम्भ किया और बाद में उन वृक्षों को जड़ से उखाड़ दिया। थोड़ी ही देर में हनुमान ने वृक्षों और लताओं से भरे-पूरे उस अशोक वन को उजाड़ डाला। जलाशय टूटे हुए पेड़ों से भर गए।

जो अशोक वन अभी कुछ देर पहले अपनी सुंदरता में देववन के समान शोभायमान हो रहा था अब वह एक श्मशान घाट हो गया था। इस दृश्य को देखकर वहां के जन्तु आर्तनाद करने लगे, चित्रशालाएं धड़ाधड़ गिरने लगीं और डर से भयभीत राक्षस स्त्रियां और सैनिक इधर-उधर जान बचाकर भागने लगे।

जब लंका निवासियों ने हनुमान द्वारा किए इस उत्पात के बारे में सुना तो उन्हें लगा कि यह तो एक बड़ा अपशकुन है।

वे आपस में बातचीत करते हुए इधर-उधर भागने लगे।

सीता की रक्षा के लिए विकराल रूप वाली राक्षसियों की निद्रा टूट गई। जब उन्होंने देखा कि यह तो कोई राक्षसों से भी भयानक दानव आ गया है तो घबराकर उन्होंने सीता से पूछा—“हे देवी! यह कौन है? यहां क्यों आया है? इसने तुम्हारे साथ बातचीत की थी तो क्या तुम उसे जानती हो?”

“मैं क्या जानूं? यह भी तुम राक्षसों की माया है। कौन जाने यह तुम्हें सता रहा है या मुझे डराने के लिए इस वन का विध्वंस कर रहा है। ये अपनी इच्छानुसार रूप धारण करने वाला कोई राक्षस ही होगा।”

डरी हुई एक राक्षसी बोली—“यह कोई राक्षस नहीं हो सकता।”

सीता की ये बातें सुनकर कुछ भाग खड़ी हुई और कुछ रावण को समाचार देने चली गई।

रावण के दरबार में एक अजीब भय व्याप्त गया। अशोक वाटिका में एक वानर आया है जिसका शरीर बड़ा भयंकर है, उसने सीता से बातचीत की और सीता उसके बारे में कुछ भी नहीं बता रहीं।

“अवश्य ही यह कुबेर या इन्द्र का दूत है या इसे राम ने भेजा है।”

“महाराज! उस वानर ने हमारे सारे वन को उजाड़ दिया है।”

“महाराज! सारे पशु-पक्षी उसके भय से इधर-उधर भाग गए हैं।”

“महाराज! हमारे सुंदर निर्मल जल वाले सरोवर उखड़े हुए पेड़ों से अट गए हैं।”

“महाराज! हमारी रक्षा कीजिएगा, वह हमें भी मार रहा है।”

क्रोध में भुनभुनाते हुए रावण ने कहा—“बड़ी लज्जा की बात है। चारों तरफ से आप लोग यह समाचार दे रहे हैं कि एक वानर आ गया और हमारे अशोक वन को उजाड़ रहा है। तुम सबसे एक वानर पर नियंत्रण नहीं हो सका। अगर शक्ति नहीं रही तो चूड़ियां पहनकर महलों में क्यों नहीं बैठ जाते?”

“क्षमा करें महाराज! जिसने सीता से वार्तालाप किया है और उस वन को उजाड़ दिया, वह वानर नहीं भयानक दैत्य है।”

“जाओ, उस नीच को बंदी बनाकर लाओ।” और यह सुनते ही अस्सी हजार किंकर राक्षस उस वानर को पकड़ने के लिए दौड़ गए।

ये सभी भयानक रूप वाले महाबली थे लेकिन हनुमान के पास जाकर ये ऐसे चटचटाकर झुलस कर गिर पड़े मानो पतंगे आग पर टूटे हों। इनके सारे हथियार और सारे वार हनुमान ने लौटाकर इन्हीं के प्राण ले लिए। और जब अपनी मृत्यु को सामने देखकर भागे तो उनमें से कुछ ने रावण के दरबार में गुहार की—“महाराज! किंकर राक्षस मारे गए हैं।”

रावण के लिए यह समाचार अनपेक्षित था। ऐसा दुर्द्धष वीर, इसको मारने के लिए हमें अपनी शक्ति का प्रयोग करना पड़ेगा। क्या हमारी सेना और हमारे वीर इतने अशक्त हो गए हैं?

रावण अभी सोच ही रहा था कि तभी एक सैनिक ने आकर समाचार दिया—“महाराज! उस वानर ने हमारे कुल देवता के स्थान चैत्र प्रासाद को खंडित कर दिया है।”

अब तो रावण भुनभुना उठा। “आखिर यह है कौन?”

तभी एक सैनिक ने कहा—“महाराज! वह भगवान राम की जय बोल रहा है, महाराज सुग्रीव की जय बोल रहा है, वीर लक्ष्मण की जय बोल रहा है और कहता है मैं रामचन्द्र जी का दूत हूँ, उनका दास हूँ। जब मैं हजारों वृक्षों और पत्थरों से प्रहार करूँगा तो एक रावण तो क्या, हजारों रावण भी मेरा मुकाबला नहीं कर सकते। मैं तुम्हारे देखते ही देखते लंका को तहस-नहस करके सीता को लेकर चला जाऊँगा। महाराज! उसने बड़ा विकट रूप धारण कर रखा है।”

रावण ने उस वानर को बंदी बनाने के लिए अपने वीर भाई प्रहस्त के पुत्र जम्बूमाली को भेजा लेकिन हनुमान के सामने इस वीर की भी वही गति हुई जो किंकरों की हुई थी। उसने देखा कि हनुमान फाटक के छज्जे पर बड़ी क्रोधित मुद्रा में खड़े हैं।

जम्बूमाली को तो यह भी समझ नहीं पड़ा कि वह उस पर किस तरह आक्रमण करें क्योंकि हनुमान की स्थिति ऐसी थी कि वह कभी भी, कहीं से भी कूदकर उसकी गर्दन तोड़ सकता था। फिर भी जैसे ही उसने अपने तीखे बाण से हनुमान के मुख पर आक्रमण किया, कुपित हनुमान ने एक बड़ी चट्टान को वेग से उसके ऊपर फेंक दिया। दोनों काफी तेज युद्ध हुआ लेकिन हनुमान के कोप का वह राक्षस अधिक देर तक सामना नहीं कर सका और कटे हुए पेड़ की तरह भूमि पर गिर गया।

महाबली प्रहस्त के पुत्र जम्बूमाली के मारे जाने पर रावण क्रोध से आगबबूला हो गया और उसने अपने मंत्री के पुत्र को उस वानर को बांध कर लाने के लिए भेजा।

हनुमान ने उनमें से किसी को थप्पड़ से, किसी को पैरों से कुचलकर तथा किसी को घूसों से मार डाला।

मंत्री पुत्रों के मारे जाने पर रावण ने अपने सेनापतियों को हनुमान को पकड़कर लाने की अनुमति दी और यह कहा—“मुझे लगता है, वह कोई साधारण वानर नहीं है इसलिए तुम सबको

बड़ी सावधानी से उसे काबू में करना होगा। बाली, सुग्रीव, महाबली जामवन्त आदि वानरों और भालुओं के नाम मैं सुन चुका हूँ, यह हनुमान नाम मेरे लिए नया है। यह तो कोई मायावी जीव लगता है। अतः इसके साथ बड़ी सतर्कता से काम लेना है।”

रावण के इस प्रकार संकेत पाकर वे पांचों सेनापति हनुमान को पकड़ने के लिए आगे बढ़ गए।

दुर्धर ने हनुमान के मस्तक पर पांच बाण मारे। उस चोट से बौखला कर हनुमान ने आकाश की ओर उछाल मार दी। फिर भी जब बाण उनका पीछा नहीं छोड़ पाए तो हनुमान दुर्धर के रथ पर कूद पड़े।

इस वेग को दुर्धर नहीं सहन कर सका और धड़ाम से पृथ्वी पर प्राण हीन होकर गिर पड़ा।

दुर्धर के बाद यूपक्ष, विरूपाक्ष क्रोध में उन पर टूट पड़े लेकिन हनुमान ने एक साल वृक्ष को उखाड़ कर उन पर दे मारा और दोनों वीर धराशायी हो गए।

प्रघस और भासकण की भी यही दशा हुई।

रावण के लिए यह समाचार और भी चौंकाने वाला था और जब उन्होंने पूरा विवरण सुना तो ऐसा लगने लगा मानो देवराज इन्द्र स्वयं आकर असुरों का नाश कर रहे हों। राक्षसों की लाशों से सारा वन अट गया। अब रावण ने एक दृष्टि अपने वीर पुत्र अक्षयकुमार पर डाली।

प्रातःकालीन सूर्य के समान कान्तिमान रावण पुत्र अक्षयकुमार, पिता का आशीर्वाद लेकर अग्नि के समान आग बरसाता हुआ हनुमान को काबू में करने के लिए चल दिया।

हनुमान की शक्ति को पहचानता हुआ वह वीर उस पर बाण वर्षा करने लगा।

यह देखकर हनुमान भी क्रोधित हो उठे और गर्जना करते हुए इधर-उधर हलचल करने लगे। और कुछ ही देर में उन्होंने रावण पुत्र अक्षय कुमार के रथ को तोड़ दिया, घोड़े को मार दिया।

यह देखकर जब घबराया हुआ अक्षयकुमार अपनी तलवार लेकर धरती पर आ गया तो वायुवेग से हनुमान ने उसे एक हाथ से पकड़कर इतनी जोर से घुमाया कि पृथ्वी पर गिरकर उसकी भुजा, जांघ, कमर और छाती के टुकड़े-टुकड़े हो गए, आंखें निकलकर बाहर आ गईं, खून की धारा बहने लगी।

पुत्र के इस प्रकार मृत्यु को प्राप्त होने के समाचार से रावण भयभीत हो उठा। उसे लगा वास्तव में यह तो राक्षसों से भी अधिक मायावी कोई भयावह जन्तु है। अवश्य ही इसने वानर का रूप बना रखा है लेकिन यह किसी दिव्य देवता की माया है।

अब रावण के पास अपने बड़े पुत्र इन्द्रजीत के अलावा तरकश में कोई तीर नहीं बचा था जिसकी शक्ति को आजमाने के लिए वह उसे वहां भेजता। अतः रावण ने बड़ी घबराई हुई दशा में इन्द्रजीत पर दृष्टि डाली।

मेघनाद ने पिता का संकेत समझ लिया। मानो रावण कह रहे थे—

“बेटा! तुमने ब्रह्मा की आराधना करके जो विपुल अस्त्र राशि प्राप्त की है आज सौभाग्य से उसके प्रदर्शन का अवसर आ गया है। तुम स्वयं समर्थ हो, तुमसे इन्द्र जैसे देवराज भी भयभीत हैं। अब ऐसा लगता है कि तुम्हारे सिवाय कोई दूसरा ऐसा नहीं, जो इस राक्षस पर काबू पा सके।”

ऐसा सोचते हुए मेघनाद ने अपने पिता रावण से विनम्र होकर कहा—“आप निश्चय जानिए, मैं अभी उस दुष्ट को बंदी बनाकर आपके सम्मुख प्रस्तुत करता हूँ।” और यह कहते हुए अपने दिव्य रथ पर बैठकर मेघनाद विद्युत की गड़गड़ाहट के समान टंकार करता हुआ आगे बढ़ गया।

रथ की घरघराहट, मृदंग, भेरी आदि बाजों के शब्द और धनुष की टंकार सुनकर हनुमान ऊपर उछल कर बैठ गए।

हनुमान ने इन्द्रजीत को बहुत बुरी तरह छका दिया।

मेघनाद कितना ही प्रयास करके अपने अमोध बाण उन पर फेंकता पर वे तुरंत ही निरस्त्र होकर वापिस लौट आते।

निराश मेघनाद ने अपने धनुष पर ब्रह्मा के दिए हुए अस्त्र का संधान किया और महाबली हनुमान को ब्रह्म पाश में बांध लिया।

हनुमान चाहते तो उस ब्रह्मपाश को काट सकते थे लेकिन उन्होंने ब्रह्माजी का अनादर नहीं किया और जानते थे कि यह भी उनका अनुग्रह है। वे उसमें स्वतः ही बंध गए। उन्हें स्मरण हो गया कि—

ब्रह्मा ने उन्हें वरदान दिया था कि मेरा अस्त्र तुम्हें एक ही मुहूर्त में बंधन से मुक्त कर देगा।

और यह सोचते हुए वे मुस्कुरा पड़े—

मूर्ख मेघनाद ने यह जानकर मुझे इस बंधन में बांधा है कि लोक गुरु ब्रह्मा के प्रभाव से मुझमें इस अस्त्र के बंधन से छुटकारा पाने की सामर्थ्य नहीं है।

और हनुमान मेघनाद की शक्ति को नापने के भाव से उस अस्त्र बंधन का अनुसरण करने के लिए मन ही मन तैयार हो गए।

वह जानते थे कि इसमें बंध जाने पर भी ब्रह्मा, इन्द्र और वायु उनकी रक्षा करने वाले हैं अतः कोई भय की बात नहीं। साथ ही यह लाभ भी है कि बंदी रूप में ही सही, दुष्ट रावण के दर्शन करने का अवसर अवश्य मिल जाएगा।

इसीलिए हनुमान सोच विचार कर इसके लिए तैयार हो गए और मेघनाद हनुमान की शक्ति का गलत मूल्यांकन करके उन्हें अपने काबू में करके बांधकर रावण के सम्मुख ले चलने के लिए तैयार हो गया।

जब मेघनाद के साथ आए राक्षसों ने देखा कि यह हनुमान तो निश्चेष्ट हो गया है तो वे उसे

सताने लगे। राक्षसों ने उसे वृक्षों के वल्कल, बटी सुतली से और रस्सी से बांधना शुरू कर दिया। वह यह सब कुछ अपनी इच्छा से स्वीकार कर रहे थे।

वल्कल रस्से से बंधने पर हनुमान ब्रह्मास्त्र बंधन से मुक्त हो गए क्योंकि उस अस्त्र का बंधन किसी दूसरे बंधन के साथ नहीं रहता।

जब इन्द्रजीत ने देखा कि हनुमान दिव्य बंधन से मुक्त हो गया है तो उन्हें बड़ी चिंता हुई। इन राक्षसों ने उसका सारा किया-कराया चौपट कर दिया। उन्होंने मंत्र शक्ति पर विचार ही नहीं किया और मंत्र शक्ति एक बार व्यर्थ हो जाने पर पुनः दूसरी बार प्रयुक्त नहीं की जा सकती।

मेघनाद इसी दशा में उनको रावण के सम्मुख ले आया।

वानर को देखते ही सब ओर से यही आवाज आने लगी—“मार डालो इस दुष्ट को, इसे मार डालो। इसने हमारा इतना सुन्दर वन नष्ट कर डाला है, कितने ही तेजस्वी वीर मार डाले हैं।”

रावण ने जब उसे देखा तो उसकी आंखें क्रोध से लाल हो उठीं।

“रे वानर! बता तू कौन है? तूने इस नगरी में आने का साहस कैसे किया? क्या तुझे तेरी मृत्यु खींच लाई है? जो हमारे सुंदर उपवन को नष्ट करते हुए तुझे भय का अनुभव नहीं हुआ।”

“हे महाराज! मैं वानरराज सुग्रीव के पास से उनका दूत होकर आया हूँ।”

हनुमान देख रहे थे, रावण के चेहरे पर एक भाव आ रहा था और एक जा रहा था। उसकी दशा बड़ी विचित्र थी, वह क्रोधित भी था और कहीं भयभीत भी।

और रावण सोच रहा था—भगवान शंकर के नन्दी ने शायद साक्षात् एक वानर के रूप में अवतार ग्रहण कर लिया है।

रावण के संदेहवाहक के द्वारा जब प्रयोजन की बात आई तो हनुमान ने कहा—“मैं जन्म से वानर हूँ और रावण से मिलने के उद्देश्य से ही मैंने इस वन को उजाड़ा है। मैं न इन्द्र का दूत हूँ, न यम का और न कुबेर का। न वरुण से मेरी मित्रता है। मैंने तुम्हारे राक्षसों का वध अपनी प्राणरक्षा के लिए किया है।”

“मुझे देवता अथवा असुर कोई भी किसी से नहीं बांध सकता। ब्रह्मा ने मुझे यह वरदान दिया है लेकिन हे दसकंधर! मैं केवल तुम्हारे दर्शनों का अभिलाषी ब्रह्मा के अस्त्र से बंधा चला गया। मैं उन श्रीराम का दूत हूँ जिनकी पत्नी का हरण तुमने छल से किया है।”

“हे रावण! मैं महाराज सुग्रीव का संदेशा तुम्हारे पास लाया हूँ। वे तुम्हारे भाई हैं क्योंकि बाली ने तुम्हारी प्राण रक्षा की थी। मेरा नाम हनुमान है। मैं वायुदेव का औरस पुत्र हूँ। देवी सीता का पता लगाने के लिए और तुमसे मिलने के लिए यह सौ योजन विस्तार वाला समुद्र लांघकर मैं यहां आया हूँ। यहीं तुम्हारी अशोक वाटिका में मैंने देवी सीता के दर्शन किए।”

“शायद तुम्हें ज्ञात नहीं, जब मैंने लंका में प्रवेश किया तो देवी लंका मुझे मार्ग में मिली।

उन्होंने मुझे रोका, और अंत में उन पर विजय पाकर मैं तुम्हारे भवनों, अट्टालिकाओं, पर्वतों, वनों को लांघता हुआ, तुम्हारे रंगमहलों में मदिरा के मद में मदमस्त राक्षसों और राक्षसनियों के सहवास और रंगमहल के आन्तरिक चित्र देख चुका हूँ। तुम्हारे स्वयं के रंगमहल में तुम्हें मदिरा के नशे में बेसुध लेटा देख चुका हूँ।”

“देवी मन्दोदरी के महल में तुम्हें एक हिंस्र पशु के रूप में बेसुध खरटि लेते देख चुका हूँ और तुम्हें मेरे आने का अनुमान तक नहीं हुआ।”

“हे रावण! यह शक्ति उन्हीं आराध्य श्रीराम की है जिसकी कृपा से मैं यह दुर्धर कार्य कर सका।”

रावण हतप्रभ था। इसने तो उसके सारे गुप्तचर विभाग को अयोग्य सिद्ध कर दिया। इसके आने का पता तक नहीं चल सका।

“तुम पते की बात कर रहे हो, हे राजन! तीनों लोकों में शायद ही कोई प्राणी श्रीराम को विमुख करके सुख से रह सके। यदि तुम अपना भला चाहते हो तो मेरी बात सुनो।”

“श्रीराम को उनकी देवी जानकी सम्मानपूर्वक वापिस लौटा दो। मैंने तो जानकी का दर्शन कर लिया है। उनकी अवस्था जान ली है। अब यह तुम्हारा कर्तव्य है कि तपस्या करके जो फल तुमने पाया है, उसे अपने अहंकार के कारण नष्ट मत करो।”

“और सुनो—सुग्रीव और रामचन्द्र न देवता हैं न यक्ष और न राक्षस। वे मनुष्य हैं और तुम अपनी मृत्यु का कारण जानते हो, तुमने वरदान लेते समय अपने आपको मनुष्य से अवध्य होने के लिए वरदान नहीं मांगा था। इसलिए तुम्हारे वध का कारण मनुष्य ही होगा।”

“शायद तुम नहीं जानते—जो पुरुष प्रबल अधर्म के फल से बंधा हुआ है, उसे धर्म का फल नहीं मिलता और तुमने जो धर्म-कर्म किया था, उसका पूरा फल तुम पा चुके हो। अब तो सीता रूपी हरण का अधर्म का फल पाना ही तुम्हें शेष है। हे निशाचर राज! अब यह निर्णय तुम पर है कि तुम धर्म का आचरण करके अपने लिए पुण्य का रास्ता प्रशस्त करते हो अथवा मृत्यु को प्राप्त करते हो और तर्क का मार्ग अपनाते हो।”

रावण पर मानो कोई माया शक्ति काबू किए हुए थी जो उसने इस वानर का इतना अनर्गल प्रलाप सहा।

फिर कुछ क्षण बाद रावण ने क्रोध में अपने सेवकों को आज्ञा दी—

“देखते क्या हो, वध कर डालो इस वानर का।”

“लेकिन यह धर्म और न्याय के विरुद्ध है राजन!” विभीषण ने रावण को समझाते हुए कहा, “और फिर यह दूत है, राजनीति के अनुसार दूत अवध्य होता है।”

और फिर विनम्र स्वर में विभीषण ने कहा—“हे राक्षसराज! क्षमा कीजिए, क्रोध को त्यागिए, आप जैसे वीर के लिए एक दूत को मारना शोभा नहीं देता।”

“यह दूत है या कोई और लेकिन यह शत्रु है, पापी है, अपराधी है और पापियों का वध करने में कोई पाप नहीं होता।”

“यह ठीक है इसमें कोई संदेह नहीं कि यह शत्रु है, इसने अपराध किया है लेकिन फिर भी दूत है और ऐसे दूत के लिए आप इसे दंड दे सकते हैं लेकिन वह मृत्युदंड नहीं होगा।”

यह सुनकर रावण ने परामर्श करने पर वह निश्चय किया कि इसकी पूंछ में आग लगा दी जाए क्योंकि वानरों को अपनी पूंछ बड़ी प्यारी होती है।

रावण का आदेश पाते ही राक्षसों ने हनुमान की पूंछ में तेल भीगा हुआ कपड़ा बांधना शुरू कर दिया।

जब हनुमान की पूंछ में कपड़ा लपेटा जाने लगा तो हनुमान ने अपने आकार को बड़ा कर लिया और पूंछ को बढ़ाना शुरू कर दिया।

वानर की पूंछ लंबी होती चली गई और राक्षस उस पर कपड़ा लगाते-लगाते थक गए।

जब हनुमान की पूंछ में आग लगा दी गई तो वे अपनी पूंछ से ही राक्षसों को पीटने लगे। और फिर देखते ही देखते रावण के दरबार से उछलते हुए बाहर आ गए। वे तो इन राक्षसों की शक्ति का अंदाजा लगाने के लिए उछलकूद कर रहे थे और उन्हें छका रहे थे।

एक अकेले वानर ने ही जब उन्हें इस प्रकार छका दिया तो फिर इन वानरों की सेना से ये राक्षस कैसे मुकाबला कर पायेंगे। वे सोच रहे थे।

राक्षस लोग हनुमान को बांधे हुए लंका में घुमा रहे थे और हनुमान मौज में लंका पुरी को देखते हुए आगे बढ़ रहे थे। वहां की गलियां, सड़कें, घर द्वार, चौराहे, जो उन्होंने पहले रात में देखे थे, वे अब दिन में देख रहे थे।

जब राक्षसियों ने देवी सीता को यह समाचार दिया कि हनुमान की पूंछ में आग लगा दी गई है और उन्हें लंकापुरी में घुमाया जा रहा है तो सीता मन ही मन दुखी होकर अग्निदेव से निवेदन करने लगी—

“हे देव! यदि आपके मन में मेरी तपस्या का कोई भी भाव है और यदि श्रीराम के मन में मेरे प्रति थोड़ी-सी दया है और मेरा सौभाग्य शेष है तो हे अग्नि! तुम शीतल हो जाओ।”

इधर सीता ने यह निवेदन किया, उधर हनुमान सोचने लगे—यह आग इतनी प्रज्वलित होने पर भी मुझे जला क्यों नहीं रही? इतनी विशाल ज्वालाएं उठ रही हैं, ऐसा लग रहा है कि मेरी पूंछ के अग्रभाग में बर्फ का ढेर रख दिया गया है। यह सोचते हुए हनुमान ने श्रीराम और सीता का ध्यान किया और अचानक उछलते हुए वे सभी बन्धन तोड़ डाले जो राक्षसों ने उन पर लगा रखे थे। अब वे पवनपुत्र पर्वत शिखर के समान नगर द्वार पर पहुंचे। यहां वे फिर से क्षण भर में बहुत छोटे और पतले हो गए। अपने सारे बंधनों को निकाल फेंका और अब वृहद आकार में होकर अपने सारे रक्षकों को मार गिराया।

उनसे छूटे हुए हनुमान अब लंका की अट्टालिकाओं, वृक्षों, लताओं और प्रसादों के ऊपर से गुजरने लगे। उन्होंने दुर्ग का भी विध्वंस कर डाला।

लंका के महलों पर पहुंचकर एक घर से दूसरे घर होते वे अपनी जली हुई पूंछ के साथ राजभवनों में निर्भय विचरने लगे।

देखते-देखते सारी लंका आग से झुलस उठी।

हनुमान ने पहले प्रहस्त के महल को जलाया और फिर महापार्व के महल को भी काल अग्नि की भेंट चढ़ा दिया। मेघनाद, रावण, कुम्भकर्ण, ध्वजग्रीव, लोमष, कुम्भ-निकुम्भ, नरान्तक, देवान्तक आदि सभी के महलों को जलाकर राख कर डाला।

हवा का सहारा पाकर यह आग भयानक रूप लेकर बढ़ने लगी।

ऐसा लगने लगा मानो वानर के रूप में साक्षात् अग्निदेव आ गए हों।

कुछ राक्षसियों के सारे अंग आग की लपेट में आ गए, वे बाल बिखरे अट्टालिकाओं से नीचे गिरने लगीं।

जैसे आग सूखी लकड़ी और तिनकों को जलाने पर भी तृप्त नहीं होती उसी प्रकार हनुमान बड़े-बड़े राक्षसों का वध करने पर भी तृप्त नहीं होते थे।

ऐसा लग रहा था जैसे भगवान रुद्र ने त्रिपुर को दग्ध किया था उसी प्रकार हनुमान ने लंका को पूरा जला दिया।

अब आग बढ़ती हुई लंका के पर्वत शिखरों पर दिखलाई देने लगी। हवा का सहारा पाकर आग की लपटें आकाश को छू रही थीं। और वहां के निवासी हाय यह क्या हुआ, कहते हुए फूट-फूटकर रो रहे थे।

हनुमान ने लंकापुरी को ब्रह्मा के क्रोध से नष्ट हुई पृथ्वी के समान देखा और फिर मन ही मन श्रीराम का स्मरण किया।

आकाश में देवों ने वायुदेव हनुमान का स्तवन किया।

अब वानर वीर हनुमान ने जब देखा कि सारी लंकापुरी जल रही है तो उन्हें सीता के दग्ध होने की चिंता हो आई और यह पछतावा भी हुआ कि हाय मैंने लंका को जलाते समय यह विस्मित कैसे कर दिया कि अभी सीता भी यही हैं और फिर वह पश्चाताप करते हुए अपनी ही जलाई आग में कूद पड़ने को तैयार हो गए।

फिर अकस्मात् उन्हें यह ध्यान आया कि जो अपने ही तेज से सुरक्षित है, आग उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकती। श्रीराम का प्रभाव और विदेह-नंदिनी सीता के पुण्य से ही यह दाहक आग मुझे नष्ट नहीं कर सकती है। यह ध्यान आते ही हनुमान को थोड़ा सन्तोष हुआ।

वह सोचने लगे—जिनके प्रभाव से अग्नि मेरी पूंछ नहीं जला सकी, वह सीता को क्या जलाएगी? क्योंकि तपस्या, सत्य भाषण और पति भक्ति के कारण सीता ही स्वयं आग को

जला सकने में समर्थ है।

तभी हनुमान ने नीचे महात्मा चारणों के मुख से यह बात सुनी—“कितने आश्चर्य की बात है? नगर, कोटर, पर्वत, कंदराएं, अटारियां महल सभी जलकर राख हो गए पर सीता पर आंच नहीं आई।”

यह सुनकर हनुमान को सन्तोष हुआ और फिर जब वे लौटकर अशोक वृक्ष के नीचे बैठी सीता के पास पहुंचे तो कहने लगे—

“सौभाग्य की बात है देवी! इस समय मैं आपको सकुशल देख रहा हूं। अब मैं श्रीराम के पास वापिस लौटूंगा।”

“क्या यह नहीं हो सकता कि एक दिन और ठहर जाओ। पता नहीं तुम्हारे जाने के बाद मेरे प्राण बचेंगे या नहीं। मैं मानसिक शोक से दिन पर दिन दुर्बल होती जा रही हूं। अब तुम आए हो तो तुम्हारे जाने की बात सुनकर मेरा मन और दुखी होने लगा है।”

“हे देवी! आप निश्चित रहें, हमारी सेना के नायक स्वयं सुग्रीव हैं जो आपके उद्धार की शपथ ले चुके हैं। आप विश्वास रखें, बहुत जल्दी ही हम लंका पर आक्रमण करके आपको मुक्त करायेंगे। मैंने अपनी इस उछलकूद में सब राक्षसों का बल तोल लिया है। अब श्रीराम को यह सुखद समाचार देने का अवसर आ गया है। आप आशीर्वाद दें ताकि मैं उन्हें भी दुख के अपार सागर से आपके समाचार रूप में नौका का आलम्बन देकर उबार सकूं।”

सीता से विदा होकर हनुमान फिर पर्वत शिखर पर आ गए।

एक पैर से उस पर्वत को दबाकर तेजी से उछले। पर्वत के दबने से वह टूटकर बिखरता हुआ तत्काल धरती में धंस गया। वृक्ष इस प्रकार पृथ्वी पर गिरे मानो वज्रपात हो गया हो।

हनुमान द्वारा राम को सीता-संदेश

हनुमान पंखधारी पर्वत के समान आने प्रबल वेग से आकाश रूपी समुद्र को पार गए।

सिंहनाद करते हुए मैनाक का स्पर्श करके वे हनुमान महेन्द्र गिरि पर्वत पर जोर से गर्जना करके अपने आने का समाचार देकर कूद पड़े।

हनुमान की गर्जना से सुस्त और उदास बैठे और समाचार की उत्कट इच्छा के लिए वानर दल में चेतना की लहर दौड़ गई।

हनुमान का मुख-मंडल देखकर यह स्पष्ट हो गया था कि वे अपने उद्देश्य में सफल होकर लौटे हैं।

जामवन्त, अंगद, नल-नील के साथ समस्त वानर दल उनके सम्मुख पहुंचने के लिए तेजी से बढ़ चला।

हनुमान ने जामवन्त आदि वृद्ध गुरुजनों और कुमार अंगद को प्रणाम करते हुए पहला वाक्य कहा—

“मुझे सीता देवी के दर्शन हो गए।”

वानर दल के लिए तो यह समाचार अत्यन्त प्रसन्नता देने वाला था। वे सभी लोग उछलकूद मचाने लगे। लेकिन हनुमान अंगद को अपने साथ लिए महेन्द्र गिरि पर्वत पर भ्रमण करते हुए उनसे बोले—“हे युवराज! जनक नंदिनी सीता का लंका में अशोक वन में वास करती हैं। वहीं मैंने उनके जनक नंदिनी सीता लंका में अशोक वन में वास करती है। वहीं मैंने उनके दर्शन किए। उपवास के कारण वे बहुत दुर्बल हो गई हैं और श्रीराम के वियोग में उनके चेहरे की कान्ति मलिन पड़ गई है।”

यह समाचार निश्चय ही वानरों को उत्साही करने वाला था।

अंगद ने हनुमान के इस उत्साह को देखकर कहा—“हे वानर श्रेष्ठ! इस विशाल समुद्र को लांघकर तुमने यह सिद्ध कर दिया है कि तुम्हारे समान अन्य कोई पराक्रमी इस धरती पर नहीं है। श्रीराम के प्रति तुम्हारी भक्ति अब्दुत है और यह सौभाग्य भी तुम्हें प्राप्त हुआ है कि तुम ही सीता के दर्शन प्राप्त करके उनकी कुशल लेकर आए हो।”

जामवन्त के पूछने पर हनुमान ने देवी सीता की खोज का सारा विवरण उन्हें सुनाया। अब उनके सामने सबसे पहला लक्ष्य यही था कि जैसे भी हो शीघ्र ही यह समाचार श्रीराम को दिया जाए।

“हे कपिवरो ! श्रीराम का उद्योग और सुग्रीव का उत्साह सफल हुआ। सीता का उत्तम शील स्वभाव देखकर मेरा मन अत्यन्त प्रसन्न हो गया। जिस नारी का शील स्वभाव सीता के समान होगा, वह यदि कुपित हो जाए तो तीनों लोकों को भस्म कर सकती है। यह समाचार मैंने आपको दे दिया है। अब सीता के साथ ही श्रीराम और लक्ष्मण का दर्शन करें। यही न्यायसंगत

लगता है।”

“राक्षसगणों सहित समस्त लंकापुरी का विध्वंस करने ओर महाबली राक्षस को मार डालने के लिए अकेला मैं पर्याप्त हूँ।”

हनुमान के इस उत्साह को देखकर जामवन्त ने कहा—“हमारा कर्तव्य अब यही है कि पहले यह समाचार श्रीराम को दिया जाए और फिर उसके बाद जैसा उनका आदेश हो, वैसा पालन किया जाए।”

यह निश्चय करके तभी वानर दल के वीर महेन्द्र गिरि पर्वत से उछलते-कूदते चले पड़े। हनुमान के इस अपूर्व और साहसिक कर्म से सभी लोग प्रसन्न थे। उनकी उपलब्धि पर वे हर्षित थे और सभी के मन में वह उत्साह था कि श्रीराम को यह समाचार शीघ्र दे दिया जाए ताकि राम द्वारा रावण का पराभव हो और देवी सीता बंधन मुक्त हो जाएं।

वह सोचते हुए उछलते-कूदते ये लोग एक सुन्दर वन में जा पहुंचे। यह मधुवन था। महाराज सुग्रीव का यह मधुवन सर्वथा सुरक्षित था और सुग्रीव के मामा दधिमुख सुग्रीव का यह मधुवन सर्वथा सुरक्षित था और सुग्रीव के मामा दधिमुख इसकी रक्षा करते थे।

इस वन में पहुंचकर रसीले फलों को देखकर वानरों का मन ललचा उठा और उन्होंने युवराज से कहा—“यदि आपकी आज्ञा हो तो सीता देवी की खोज की प्रसन्नता को फल खाकर एक उत्सव के रूप में मनाया जाए।”

अंगद ने विजय के रस में शीघ्र ही यह आज्ञा दे दी।

फिर क्या था, प्रचण्ड वेग वाले वानर कूदते फांदते वृक्षों की बड़ी-बड़ी चोटियों तक पहुंच गए। फल-मूल आदि का भक्षण करने लगे।

दधिमुख ने जब इस प्रकार एक सुन्दर, सुरम्य, नन्दन वन के समान शोभा वालो मधुवन को इस उद्वण्ड वानरों द्वारा इस प्रकार नष्ट होते देखा तो वह क्रोध से कांप उठा। उसने वृद्ध वानर वीरों पर क्रोध करते हुए कहा—“आपको लज्जा आनी चाहिए। आपने राज्य आज्ञा का उल्लंघन किया है। इस सुन्दर वन को इस प्रकार उजाड़ने की आज्ञा नहीं है।”

यह सुनकर वानरों ने क्षुब्ध होकर वन रक्षक पर ही आक्रमण कर दिया और अब तो हनुमान ने भी उनसे कहा—“आप लोग किसी प्रकार की चिंता न करें, जितने फल खाए जा सकते हैं, खा लें। तुम्हारे विरोधियों को मैं रोकूंगा।”

प्रसन्न होकर अंगद ने भी कहा—“हनुमान इस समय एक असिद्ध कार्य सिद्ध करके लोटे हैं इसलिए इनकी न मानने योग्य बात भी मानी जानी चाहिए।”

फिर क्या था, वानरों का उत्साह और बढ़ गया।

उस वन में दधिमुख के जो सेवक मधु की रक्षा में नियुक्त थे, वे सब परास्त हुए रोते-पीटते दधिमुख के पास जाकर गुहार करने लगे। हनुमान का यह उत्साह देखकर वे सब लोग भयभीत

थे।

दधिमुख ने एक विशाल वृक्ष हाथ में लेकर हनुमान के दल पर धावा बोल दिया तो हनुमान भी अपने प्रबल वेग से उन पर टूट पड़े। अंगद ने दधिमुख को दोनों हाथों से पकड़ लिया और मधु पीकर मदान्ध हुए अंगद यह भी भूल गए कि यह उनके नाना है और पृथ्वी पर टक्कर उन्हें रगड़ने लगे।

किसी तरह स्वयं को बचाकर दधिमुख एकान्त में आकर अपने सेवकों से बोले—“हमें इसकी शिकायत महाराज सुग्रीव से करनी होगी। राज्याज्ञा का उल्लंघन करने वाले ये राजद्रोही वानर अवश्य ही मद में अपनी मृत्यु को भूल बैठे हैं।”

और इस प्रकार दुखी दधिमुख पलक मारते ही उस स्थान पर पहुंच गए जहां वानर राज सुग्रीव राम और लक्ष्मण के साथ विराजमान थे।

दधिमुख ने सिर पर अंजलि बांधे उनके चरणों में मस्तक झुकाते हुए प्रणाम करते हुए कहा—“रक्षा कीजिए महाराज! रक्षा कीजिए।”

“उठो, उठो मामाजी! आप मेरे पैरों पर कैसे पड़े हो? कहिए मधु वन में सब कुशल तो है?”

“नहीं महाराज! आपके अभिमानी हनुमान के दल ने आज आपके पुरखों के द्वारा सुरक्षित मधुवन को अपने मद में तहस-नहस कर दिया है। हनुमान आदि वानरों ने उसमें लुटपाट मचानी आरम्भ कर दी। हमारे वन रक्षकों ने उन्हें रोका तो उन्हें भी मार डाला। वे फलों को खा ही नहीं रहे बल्कि नष्ट भी कर रहे हैं। उन्होंने भयानक आतंक मचा दिया है। महाराज!”

दधिमुख अभी कह ही रहे थे कि लक्ष्मण ने आकर पूछा—“क्यों महाराज! यह वन रक्षक यहां किसलिए आया है? और दुखी होकर “क्या संकेत दे रहा है?”

“आर्य लक्ष्मण! इसका कथन है कि हनुमान और अंगद आदि वानरों ने सुन्दर मधुवन का सारा मधु खा पी लिया है। मुझे तो ऐसा लगता है कि उन्होंने अपने कार्य में सिद्धि पाने के बाद ही मधुवन पर आक्रमण किया है क्योंकि यदि कार्य सिद्ध नहीं होता तो वे ऐसा साहस नहीं कर पाते।”

“ये दधिमुख मेरे ही द्वारा इस वन की रक्षा के लिए नियुक्त किए गए हैं। मुझे लगता है कि यह काम हनुमान के अतिरिक्त और किसी का नहीं है। उन्होंने ही सीता का दर्शन किया है। जिस दल के नेता जामवन्त और महाबली अंगद हों, अधिष्ठाता हनुमान हों, उस दल को असफलता मिले, यह तो संभव नहीं है।”

“हे लक्ष्मण! मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि हम अपने लक्ष्य में सफल हो गए हैं। हनुमान का दल दक्षिण से अवश्य ही सीता का पता लगाकर लौटा है। उन्होंने उस मधुवन को नष्ट किया है, जिसे पददलित करना सामान्य अवस्था में किसी के लिए भी संभव नहीं।”

और यह कहते हुए सुग्रीव ने कहा—“हे मामा! उन वानरों ने मेरे मधुवन का जो उपभोग

किया है, मैं उससे बहुत प्रसन्न हूँ। अब तुम जाकर उस मधुवन का पुनः सुधार करो और हनुमान आदि वानरों को यहां शीघ्र भेज दो।”

मधुवन लौटने पर दधिमुख का व्यवहार देखकर अंगद आदि के आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

हाथ जोड़े दधिमुख उनके पास गए।

“हे वानरराज! आप क्रोध न करें, आप लोग दूर से थके आए हैं। इच्छानुकूल फल खाइए और मधु पीजिए। वह आपकी ही सम्पत्ति है। आप तो हमारे युवराज और इस वन के स्वामी हैं। आपके महाराज सुग्रीव ने मुझे आपके आतिथ्य का दायित्व सौंपते हुए कहा है कि मैं आपको पूरी तरह संतुष्ट करके यहां लौटने का संदेश दूँ।”

यह सुनकर अंगद और हनुमान सहित सभी वानर प्रसन्न मन श्रीराम सुग्रीव के पास चलने के लिए आकाश में उड़ चले।

अंगद और हनुमान आगे थे और उनके पीछे-पीछे वानरों का विशाल दल।

आकाश मार्ग से हनुमान को आते देख सुग्रीव ने श्रीराम से कहा—“हे राम! आपका कल्याण हो। लीजिए, आपके आदेशानुसार वह घड़ी आ गई है, जब आपकी सीता के बारे में पूरा समाचार प्राप्त हो जाएगा। देखिए सामने से आते हुए हनुमान और अंगद की प्रसन्न मुख मुद्रा यह संकेत दे रही है कि वे कार्य सिद्धि करके लौट रहे हैं। उनके मुख पर विजय का उल्लास है।”

अभी राम ऊपर मुख करके उन्हें देखने का मन बना ही रहे थे कि सामने अंगद और हनुमान के साथ समस्त वानर दल हाथ जोड़े सेवक को भांति आकर खड़ा हो गया।

जय श्रीराम! जय जानकी देवी! के उद्घोष के साथ वानरों के तुमुलनाद से सारा आकाश गुंजायमान हो गया।

हनुमान ने श्रीराम के चरणों में प्रणाम करते हुए कहा—

“हे राम! देवी सीता सकुशल हैं। मैंने उनका दर्शन कर लिया है। आपकी अनुपस्थिति में पतिव्रत धर्म का कठोर पालन करती हुई वह देवी आपके दर्शनों की उत्कंठा में अभी तक जीवित है।”

हनुमान के शब्द—सीता जीवित है—राम के लिए इस समय ऐसे अमृत वचन के समान लगे मानो किसी प्राणहीन व्यक्ति की अंतिम घड़ी में किसी ने उसकी जीभ पर अमृत की बूंद रख दी हो। और उल्लास में राम ने हनुमान को ऊपर उठाकर अपने गले से लगाते हुए कहा—“हे सखा! हे प्रिय! हे बंधु! मैं तुम्हारा चिरकाल तक ऋणी रहूँगा। तुमने मेरे लिए यह जो असंभव कार्य संभव करके दिखाया है, युगों-युगों तक तुम्हारी यह पताका इस पृथ्वी पर फहराती रहेगी। अब तुम विस्तार से मुझे जानकी का समाचार दो हनुमान!”

अब विश्रान्ति पाकर राम प्रसवण गिरि शिखर पर अंगद, सुग्रीव आदि के साथ चलते हुए

एक शिला पर बैठ गए और हनुमान ने उन्हें वह सारा समाचार कह सुनाया।

“सीता देवी रावण के अन्तःपुर में दिव्य अशोक वाटिका में, अशोक वृक्ष के नीचे अपने इस विरह काल को बिता रही हैं। अनेक राक्षसियों के घिरी होकर भी वह एक त्रिजटा नाम की राक्षसी की ममता के आंचल में सुरक्षित हैं।”

“हे राम! आपके प्रति उनका विशेष अनुराग हो उन्हें अभी तक जीवित रखे हुए हैं। जिस समय मैं सीता जी के समीप पहुंचा और अभी यह अनुमान ही लगा रहा था कि हो न हो श्रीराम की प्रिया जानकी यही है, मैं उस समय वृक्ष की चोटी पर पत्तों के झुरमुट में स्वयं को छिपाए हुए था कि तभी अपने दल द्वारा सुरक्षित रावण सीता के पास आया और उन्हें यह चेतावनी दी कि यदि दो मास के भीतर उन्होंने रावण के सम्मुख आत्मसमर्पण नहीं किया, उसकी अर्धांगिनी बनना स्वीकार नहीं किया तो इसीलिए हमें जो कुछ भी करना है, इन दो मास के भीतर ही करना होगा। वैसे वे अभी तक कुशल और सुरक्षित हैं।”

“मैं जानता हूं हनुमान! सीता की व्यथा को पहचानता हूं लेकिन तुम यह बताओ कि वे मेरे बारे में क्या कह रही थीं?”

“हे राम! देवी सीता नित्यप्रति हर क्षण आप ही के ध्यान में अपना जीवन व्यतीत कर रही है।”

“लेकिन तुम वहां पहुंचे कैसे?”

“सौ योजन वाला समुद्र पार करके।”

“इतना बड़ा समुद्र तुमने पार कर लिया?”

“हां महाराज! आपकी कृपा से।”

“मार्ग में कोई बाधा नहीं आई?”

“अवश्य आई महाराज! लेकिन सहायक भी मिले।”

“वह कैसे?”

“सागर ने मेरे विश्राम के लिए मैनाक पर्वत को निर्देश दिया और मैनाक पर्वत मुझे आश्रय देने के लिए ऊंचा उठ गया। किन्तु मैं रुका नहीं।”

“और फिर?”

“इसके बाद हे महाराज! सुरसा राक्षसी ने मुझे बाधा पहुंचाई।”

“राक्षसी ने?”

“हां महाराज! लेकिन यह देवताओं ने मेरी परीक्षा लेने के लिए किया था।”

“फिर?”

“मैं अपने शरीर को जितना बड़ा करता गया, वह अपने मुख को उतना ही बड़ा करती गई

क्योंकि उसकी वह प्रतिज्ञा थी कि मैं बिना उसके मुख में प्रवेश किए आगे नहीं बढ़ सकता।”

“फिर तुम आगे कैसे बढ़े?”

“मैंने तुरंत अपने शरीर को छोटा करके उसके मुख में भ्रमण करके उसे बता दिया कि मैं उसके मुख में घूम आया हूँ।”

“वह मुझे आशीर्वाद देते हुए चली गई और मैं सीधे त्रिकूट पर्वत पर पहुंच गया।”

“यह कहां है?”

“लंका में यह पर्वत वह थल भाग है जो समुद्र के किनारे पर पड़ता है। इसी पर बसी हुई है लंका।”

“फिर तुमने लंका में प्रवेश कैसे किया?”

“पहले वहां वन प्रदेश में घूमते हुए प्रवेश मार्ग ढूंढा लेकिन जैसे ही मैं द्वार पर पहुंचा, मुझे लंका अधिष्ठात्री देवी साक्षात् मिली। उसने मुक्त होता हुआ जब मैं आगे बढ़ा तो उस समय दिन का काल था अतः मैं पेड़ों और झुरमुटों में छिपता हुआ बहुत छोटे आकार में अपने को छिपाए रहा।”

“फिर?”

“रात्रि में मैंने ढूंढ मचानी शुरू की। सब तरफ देखता हुआ, महलों, अटारियों में देखता हुआ लंका के सारे राजमहल में खोजता हुआ जब मैं निराश हो गया तो अकस्मात् एक मंदिर के पास पहुंचा।”

“मुझे आश्चर्य हुआ, लंका में भी मंदिर! वही अशोक वृक्ष के नीचे मैंने एक मलिनमना, दुखियारी, स्त्री को देखा जिसके आसपास राक्षसनिया तलवार लिए पहरा दे रही थीं। कूदते-फांदते स्वयं को छिपाते जब मैं उसी वृक्ष पर पहुंच गया जिसके नीचे देवी सीता बैठी थीं तो मैंने ध्यान से देखा, वह साड़ी का टुकड़ा, जो उन्होंने गिराया था, निश्चय ही उसी साड़ी का टुकड़ा था जो उस समय वे पहने हुई थीं। मैला होने पर भी उसका पीलापन शेष था।”

“तब ही अपने दल के साथ रावण वहां आया। उन्होंने सीता को अपना बनाने के लिए धमकी दी और सीता की दृढ़ता देखकर दो महीने की अवधि में स्वयं निर्णय कर लेने का आदेश देकर वह दुष्ट चला गया।”

“मेरे सामने समस्या थी कि मैं उन्हें अपना परिचय कैसे दूं। कहीं मुझे देखकर वह डर गई और शोर मचा दिया, तब तो गड़बड़ हो जाएगी। तब मैंने धीरे-धीरे राम कथा का प्रारम्भ कर दिया।”

“मैंने देखा, जैसे-जैसे रामकथा उनके कर्णपटल से टकराती गई, वैसे-वैसे उनके मुख की कान्ति और अधिक मुखर होती गई और समय आदि पर एकान्त देखकर मैंने आपकी मुद्रिका उनके सामने डाल दी। मुद्रिका ने सीताजी के सारे संताप हर लिए।”

“तो उस समय उनके मुख पर प्रसन्नता लौट आई थी?”

“हां भगवन! किन्तु जब मैंने उन्हें अपना परिचय दिया तो कुछ क्षण के लिए उनके मन में यह संदेह उपजा कि जो रावण मायावी मृग से उनका अपहरण कर सकता है वह मायावी वानर बनकर, मायावी मुद्रिका प्रस्तुत करके उन्हें छल भी तो सकता है। किन्तु आपके प्रताप से मैंने उन्हें विश्वास दिलाया और तब उन्हें लगा कि निश्चय ही उनके दुख के दिन अब समाप्त होने वाले हैं।”

“उन्होंने कोई संदेश भेजा?” राम ने आतुरता से पूछा।

“हां भगवान! यह लीजिए।”

और यह कहते हुए हनुमान ने श्रीराम को सीता जी द्वारा दिया गया वह चूड़ामणि प्रस्तुत कर दिया।

चूड़ामणि को देखकर राम उसे छाती में लगाकर रोने लगे। लक्ष्मण भी भाई की यह दशा देखकर आतुर हो गए और उनकी आंखों से भी आंसू आ गए।

राम-लक्ष्मण को इस प्रकार व्याकुल दशा में देखकर न केवल सुग्रीव बल्कि समाचार लाने वाले स्वयं हनुमान, अंगद, जामवन्त यहां तक कि सभी वानर अश्रुपूरित नेत्रों से रोने लगे।

हनुमान से राम ने कहा—“हे मित्र! जैसे वत्सला गाय अपने बछड़े के स्नेह से स्तनों से दूध झरने लगती है उसी प्रकार इस मणि को देखकर आज मेरा मन भी द्रवीभूत हो रहा है। यह मणि विवाह के समय महाराज जनक ने वैदेही को दी थी और जनक को देवताओं द्वारा पूरित यह मणि स्वयं देवराज इन्द्र ने दी थी। इस मणि को देखकर मुझे वैदेही के साथ-साथ महाराज जनक भी स्मरण आ रहे हैं। यह मणि सदा सीता के सीमन्त पर शोभा पाती थी। तुमने मुझे यह मणि देकर यह आभास दिला दिया है माना सीता मुझे मिल गई है।”

और यह कहते हुए राम कुछ क्षण के लिए मूर्छित से हो गए।

लक्ष्मण यह देखकर और अधिक व्याकुल हो गए।

राम का संकट यह था कि यदि रावण द्वारा दी गई अवधि तक वे विजय नहीं प्राप्त करते तो वैदेही को प्राप्त नहीं कर सकेंगे।

इस तरह विह्वल हुए राम ने हनुमान से कहा—“प्रिय हनुमान! तुम मुझे स्पष्ट बताओ, वैदेही ने तुम्हें मेरे लिए क्या संदेश दिया है?”

“हे राम! वैदेही ने कहा है, आप उस काग की घटना का स्मरण करें, जिसने चित्रकूट पर्वत पर उन्हें अत्यन्त कष्ट दिया था और जिस तरह से उसने उनके स्तन के मध्य भाग में चौंच मारी थी, हे देव! आपने कुपित होकर उस कौए को कठोर दंड देने के लिए अपनी चटाई में से एक कुश निकालकर, उसे ब्रह्मास्त्र से अभिमंत्रित करके, उस कौए को लक्ष्य करके मारा था, वह कौआ उस ब्रह्ममंत्रित कुश से जान बचाता हुआ देवलोक तक दौड़ गया, उसने तीनों लोकों के

चक्कर काटे, सब जगह गुहार की, रक्षा के लिए याचना की लेकिन उसे कोई रक्षक नहीं मिला।”

“तब वह सब तरफ से निराश होकर आपकी शरण में आया था।”

“अपनी शरण में आए उस कौए को वध योग्य होने पर भी आपने उसकी रक्षा की और ब्रह्मास्त्र क्योंकि व्यर्थ नहीं जा सकता था इसलिए उसकी दाहिनी आंख फोड़ डाली।”

“हे राम! यह प्रसंग बताते हुए देवी सीता ने संदेश भिजवाया है कि अस्त्र वैताओं में श्रेष्ठ परम शक्तिशाली होने पर भी आप राक्षसों पर अपने अस्त्र का प्रयोग क्यों नहीं कर रहे जबकि आप अतुल बल पराक्रम से संयुक्त हैं।”

उन्होंने कहा है—“हे राम! यदि मेरे प्रति आपका कुछ भी अनुराग है, आदर है तो आप शीघ्र ही अपने तीखे बाणों से रणभूमि में रावण को मारकर मेरी रक्षा करें।”

और फिर लक्ष्मण की ओर इंगित करते हुए हनुमान ने कहा—

“हे वीर! अपने भाई की आज्ञा लेकर शत्रुओं को संताप देने वाले रघुकुल तिलक! क्या आप मेरे अपराध को अभी तक क्षमा नहीं कर पाए?”

बड़े आर्द्र शब्दों में देवी ने कहा है—

“हे प्रिय लक्ष्मण! मैंने तुम जैसे सत्यनिष्ठ, धर्मव्रती की निष्ठा पर अपनी भावुकता की मोहान्धता में संदेह किया था, मैं उसका दुष्फल बहुत भोग चुकी हूँ। हे भाई! अब तो मुझे इस कारागार से मुक्ति दिलाओ।”

अपनी उंगलियों को अंगूठे से दबाकर भींचते हुए लक्ष्मण ने मस्तक पर चोट करते हुए कहा—

“क्षमा करो भाभी! क्षमा करा। वह सब माया का प्रपंच था। न दोष तुम्हारा था, न मेरा, न श्रीराम का। यह समय हम तीनों पर संकट का था जिसे हमें ही झेलना है। यह ठीक है कि मैं मारीच की माया को पहचान गया था। श्रीराम तो मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, जानकर भी आमंत्रण को स्वीकार नहीं कर सके और तुम्हारी इच्छा के आगे झुक गए लेकिन यह सब माया का प्रभाव था।”

“नहीं देवी! नहीं, मेरे लिए आज भी आप मां तुल्य सम्माननीय हैं। मेरे मन में ऐसा कोई भाव नहीं जो क्षोभ का कारण बने। मुझे पश्चाताप है।”

“हे लक्ष्मण! देवी सीता ने जिस प्रकार रुदन भरे कंठ से वह वृत्त मुझे सुनाया था, मेरा रोम-रोम खड़ा हो गया था मानो साक्षात् विरह व्याकुल देवी आत्मा स्वीकार में पश्चाताप कर रही हों।”

लक्ष्मण को इस तरह व्यथित देखकर राम ने स्नेह से उसके कंधे पर हाथ रखते हुए कहा—“प्रिय! तुम क्यों क्लेश का अनुभव कर रहे हो? देवी सीता का संदेश हमें मिल चुका है।

अब शीघ्र ही हम उनके कष्ट का निवारण करेंगे।”

राम और लक्ष्मण ने मानो संकल्प लिया हो।

तभी हनुमान ने कहा—“हे देव! यह संदेश देते हुए देवी सीता ने मुझे यह मणि प्रदान की है, जो मैंने आपको दी है। मेरे लौटने का समाचार उन्हें अत्यन्त व्याकुलता अनुभव हुई लेकिन क्योंकि मुझे आपकी दशा का ज्ञान था इसलिए मैं उन्हें सान्त्वना देता हुआ शीघ्र यहाँ आने के लिए प्रस्थान कर गया।”

और इसके बाद हनुमान ने श्रीराम को प्रसन्न करने के लिए बताया—

“हे राम! जब मैं देवी सीता से यह सारा वृत्त और चर्चा कर चुका तो यात्रा की थकान का अनुभव करते हुए मैंने उनसे आज्ञा मांगी।”

“क्या आज्ञा मांगी?”

“कि मैं इन फलों का स्वाद चख लूँ जिसके इर्द-गिर्द ये दुष्ट राक्षस घूमते हुए आपको त्रस्त करते हैं और साथ ही मेरे मन में यह भाव भी था कि यहाँ आया हूँ तो रावण को यह आभास तो करा दूँ कि मैं श्रीराम का दूत हूँ।”

“क्षमा करें देव! देवी सीता की खोज में सफलता प्राप्त करने के बाद मेरे मन का वानर हावी हो गया और मैंने कुछ फल खाए, कुछ बिखेरे, कुछ कच्चे, अधकच्चे तोड़े और गिराए और जब मैं तृप्त हो गया तो मैंने उनको जड़ से उखाड़ दिया। सारा अशोक वन ध्वस्त हो गया और जब रावण के चाकरों को यह ज्ञात हुआ कि यहाँ कोई हलचल हो रही है तो भयभीत रक्षक दौड़े हुए रावण के पास गए और उन्हें यह सूचित किया कि कोई दैत्याकार वानर लंका के नंदन वन का विध्वंस कर रहा है।”

“रावण ने जब यह सुना तो उसकी भृकुटि तन गई। उसने किंकरों की अस्सी हजार सेना, प्रहस्त पुत्र जम्बूमाली की सेना को मेरे को काबू में करने के लिए भेजा और मैंने आपके आशीर्वाद से उन सबको मौत के घाट उतार दिया। उसके बाद उस दुष्ट रावण ने अपने मंत्री पुत्रों को भेजा, मैंने उनको भी मार डाला।”

“रावण ने जब यह सुना तो वह क्रोध में भुनभुना उठा। उसने अपने पंच वरिष्ठ सेनापतियों को मुझे पाठ पढ़ाने के लिए भेजा। एक-एक सेनापति को मैंने बांह पकड़कर ऐसा घुमाया, ऐसा घुमाया कि सिर कहीं पड़ा, धड़ कहीं पड़ा।”

अब तो रावण के क्रोध का ठिकाना न रहा। उसने भरी सभा में अपने बलिष्ठ अक्षय कुमार को मेरे लिए प्राणघाती बनाकर भेजा। मैंने उसे भी छका दिया और कुछ ही देर में मारकर गिरा दिया।

“हे श्रीराम! अपने पुत्र के वियोग में वह रावण बिना पानी की मछली की तरह तड़प उठा। उसके क्रोध की कोई सीमा नहीं रही। तब उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र इन्द्रजीत को निहारा। इन्द्रजीत ब्रह्मास्त्र पंडित जब मेरे आया तो उसने मुझ पर किसी भी तरह काबू न पाते देख ब्रह्म बंध से

मुझको बांध लिया।”

“हे देव! मैं चाहता तो एक ही क्षण में उस ब्रह्म बंध से मुक्त हो सकता था, यह ब्रह्मा का मुझे आशीर्वाद था कि मैं किसी बंधन में नहीं बंध सकता हूं। किन्तु मेरे मन में यह उत्कंठा पैदा हुई कि मैं रावण से मिलकर जाऊंगा ताकि वह जान ले कि उस राम के सेवक में इतना बल है तो राम में कितना होगा।”

“हे प्रभु! मैं उस ब्रह्म बंध में बंधा बिलकुल निश्चेष्ट हो गया। इन्द्रजीत के साथ आए राक्षसों ने मुझे निश्चेष्ट देखकर रस्सियों से बांध लिया।”

“ब्रह्म बंध कोई और बंधन स्वीकार नहीं करता। तो फिर तुम उस ब्रह्म बंध से मुक्त हो गए होंगे?”

“हां प्रभु! और जब मेघनाद ने यह जाना तो वह निराश हो गया।”

जब मैं रावण के सामने पहुंचा तो मैंने उसे आपके बल का वास्ता देकर बहुत समझाया। वह तो मुझे प्राण दंड देने को तैयार था। “?”

“फिर क्या हुआ?”

“वहां भी आपका एक भक्त मिल गया।”

राम ने आश्चर्य से पूछा—“मेरा भक्त?”

“हां प्रभु! आपका भक्त विभीषण। वह रावण का छोटा भाई है। बस लंका में अकेला धर्मात्मा वही है।”

“उसने तुम्हारा पक्ष कैसे लिया?”

“नीति का वास्ता देकर। क्योंकि राजनीति कहती है, दूत अवध्य है।”

“तो फिर क्या हुआ?”

“हे प्रभु! उन्होंने मेरी पूंछ में कपड़ा लपेटकर आग लगा दी। लेकिन जब वे कपड़ा लपेट रहे थे तो मैंने अपना आकार बड़ा कर लिया और मेरी विशाल पूंछ में वे कपड़ा लपेटते-लपेटते थक गये। इस जली पूंछ को लेकर मैं अपने आकार को छोटा करके उन राक्षसों के साथ राजसभा से बाहर आया। पहले उन्होंने मुझे पूरे नगर में घुमाया।”

“मैंने जान बूझकर ऐसा होने दिया क्योंकि दिन में मैंने लंका नहीं देखी थी इसलिए मैं चाहता था कि इस लंका को पूरी तरह दिन में देख लूं और जब मैं अंतिम तोरण द्वार आया तो प्रभु मैंने फिर से अपना बड़ा किया और उन राक्षसों के देखते-देखते मैं उछलकर नगर कोट पर पहुंच गया। वहां से कूदते-फांदते लंका के सारे राजमहल, भवन, तिवारे, अट्टालिकाएं, नगर की बड़ी-बड़ी इमारतें सब जलाकर राख कर दीं।”

“तुम्हें अपनी पूंछ के जलने का अनुभव नहीं हुआ?”

“हे प्रभु! यह भी देवी सीता का चमत्कार है। उन्हें जब यह ज्ञात हुआ कि मेरी पूंछ में आग लगाई जा रही है तो उन्होंने अग्निदेव से शीतल रहने की प्रार्थना की और यह कहा—”

“यदि श्रीराम के मन में मेरे प्रति तनिक भी भाव है तो हे अग्नि तुम हनुमान को शीतलता प्रदान करो। हे प्रभु! मुझ पर अग्नि का कोई प्रभाव नहीं हुआ और लंका के गली, चौराहे अग्नि की लपटों से दहक उठे।”

“अचानक मुझे यह ध्यान आया कि मैंने तो यह बड़ा पाप कर दिया।”

“क्यों? क्या पाप हो गया?”

“महाराज! मुझे यह तो ध्यान ही नहीं रहा कि लंका में अशोक वाटिका भी है। यदि देवी सीता को कुछ हो गया तो मैंने तो अपने हाथों से अपनी विजय को पराजय में बदल दिया।”

“तब फिर मैं भागा हुआ अशोक वन पहुंचा और मुझे संतोष हुआ कि देवी सीता सुरक्षित थीं। अशोक वन का वह अशोक वृक्ष आग के प्रभाव से मुक्त था।”

“हे प्रभु! बस इसके बाद मैंने देवी सीता से विदा ली और मैं आपकी सेवा में उपस्थित हो गया हूं। अब आप ऐसा यत्न कीजिये ताकि शीघ्र ही वे इस पीड़ा से मुक्त हो सकें।”

राम ने एक बार फिर हनुमान को गले लगाते हुए कहा—

“तुमने रावण को हमारी शक्ति का परिचय देकर चिंताग्रस्त तो कर ही दिया है। अब हम शीघ्र ही लंका पर अपने अभियान का प्रारम्भ करेंगे।”

वानरों की सहायता से सेतु-बंधन

सभी ने प्रसन्न हृदय से हनुमान के द्वारा दिए गए इस कार्य की सराहना की। यह कार्य इनके अतिरिक्त शायद ही कोई और कर पाता। देवता, दानव, यक्ष, गंधर्व, नाग और राक्षस इनमें से किसी के लिए भी जिस पर आक्रमण करना असंभव है, जो रावण के द्वारा भली-भांति सुरक्षित हैं, उस लंकापुरी में अपने बल के भरोसे प्रवेश करके कौन ऐसा है जो जीवन निकल सकता है। यह केवल हनुमान के बल और पराक्रम का ही प्रमाण है।

“वास्तव में हनुमान ने समुद्र लंघन करते हुए अपने पराक्रम से सीता की खोज करके सुग्रीव के एक सच्चे सेवक की भूमिका निभाई है। हनुमान ने एक काम में नियुक्त होकर उसके साथ दूसरे अन्य कार्य को भी पूरा करके अपने ही नहीं बल्कि अपने स्वामी के गौरव को भी वृद्धि की।”

“उन्होंने अपने आपको दूसरों की दृष्टि में छोटा नहीं बनने दिया और सुग्रीव को भी पूर्णतया संतुष्ट किया। जिस व्यक्ति को ऐसा प्रिय सहायक मिल जाए, वह कितना सौभाग्यशाली है।”

राम के द्वारा कहे ये शब्द हनुमान के राम पर अंकित हो गए।

लेकिन जब इसमें आने काम और दुरूह था।

समस्या थी, विराट समूह को किस प्रकार समूची सेना सहित पार किया जाए? लेकिन इसके लिए पहले उस समुद्र के पास पहुंचने की बात थी।

यह सोचते हुए सभी वानर वीर सुग्रीव के नेतृत्व में श्रीराम और लक्ष्मण के साथ इस विषय पर विचारमग्न हो गए कि समुद्र पर किस प्रकार हेतु बांधा जाए ताकि राक्षस रावण की लंकापुरी को ध्वस्त करने में सफलता पा सके। क्योंकि बिना पुल के सारी सेना का लंका पहुंचना किसी भी प्रकार संभव नहीं था।

वैसे स्वयं श्रीराम अपनी तपस्या से पुल बांधक और समुद्र को सुखा कर सब प्रकार से लांघ जाने में समर्थ थे। अतः राम ने कहा—

“हे वानर वीर हनुमान! तुम हमें यह बताओ कि लंका में दुर्गों की क्या स्थिति है? रावण की सेना का परिमाण, लंका की रक्षा के उपाय और राक्षसों के भवन, इन सबको तुमने देखा है।”

राम से यह जानने की इच्छा देखकर हनुमान ने श्रीराम को यह बताया कि लंकापुरी के चारों दिशाओं में चार बड़े विशाल दरवाजे हैं, जिन पर बड़े यंत्र लगे हैं। ये तीर और पत्थरों के गोले बरसाते हैं। इन दरवाजों पर ऐसी लंबी गदाएं हैं जो आग बरसाती हैं। पुरी के चारों ओर बहुत ऊंचा परकोटा है और परकोटे के अगाध गहरी खाइयां हैं और दरवाजे के सामने बने लकड़ी के पुल से ही इनको पार किया जा सकता है।

“शत्रु की सेना आने पर ये पुल गिरा दिए जाते हैं और सारी सेना खाई में गिर जाती है।”

“हे राम! रावण युद्ध के लिए उत्सुक है और शक्तिशाली भी। वह कभी क्षुब्ध नहीं होता। लंका पर चढ़ाई करने के लिए कोई सीधा आधार नहीं है। बड़ी दुर्गम और भयावनी पुरी है यह। इसके चारों ओर नदी, पर्वत, वन और कृत्रिम चार प्रकार के दुर्ग हैं। यहां जाने के लिए नाव का मार्ग भी नहीं है।”

“पर्वत के शिखर पर बसी यह पुरी दूर से देखने पर देवपुरी के समान दिखलाई पड़ती है। पूर्व द्वार पर दस जार राक्षस रक्षा के लिए नियुक्त हैं। दक्षिण द्वार पर चतुरंगिनी सेना के साथ एक लाख राक्षस बसे हुए हैं। पश्चिम द्वार पर सम्पूर्ण अस्त्रों के ज्ञाता दस लाख राक्षस तैनात हैं। और उत्तर द्वार पर दस करोड़ राक्षस-रथी और घुड़सवार रक्षक के रूप में तैयार हैं। लंका के मध्य भाग में छावनी में भी एक करोड़ से अधिक राक्षस तैयार हैं।”

“हे महामना! आपके आशीर्वाच से मैंने उन सब लकड़ी के पुलों को तोड़ डाला है। खाइयां पाट दी हैं, लंकापुरी को जला दिया है और यहां तक कि विशालकाय राक्षस सेना के एक चौथाई भाग को नष्ट कर दिया है। मेरा निश्चय है कि यदि हम किसी प्रकार सेना सहित एक बार समुद्र पार कर लें तो फिर आप वानरों के द्वारा लंका को नष्ट हुआ जान लीजिए।”

हनुमान, सुग्रीव आदि से इस प्रकार विचार विमर्श करते हुए राम ने कहा—

“इसी मुहूर्त में प्रस्थान की तैयारी की जाए। सुर्यदेव दिन के मध्य भाग में पहुंच चुके हैं। यह दोपहर के समय अभिजित मुहूर्त है। यही विजय मुहूर्त है और विजय यात्रा के लिए इसी को उत्तम माना गया है।”

“उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र आज है और कल चन्द्रमा का हस्त नक्षत्र से योग होगा। अतः हे सुग्रीव! हमें आज ही सेना के साथ यात्रा प्रारम्भ करनी है। यदि हमने इस नक्षत्र में यात्रा प्रारम्भ कर दी तो निश्चय ही हम रावण का वध करके सीता को मुक्त करा लेंगे।”

राम का आदेश पाते ही अत्यन्त शीघ्र निर्णय लेने वाले सुग्रीव ने सेना को प्रस्थान का आदेश दिया।

यह विशाल सेना उछलती-कूदती आगे बढ़ती हुई, नदी-नाले पर्वत पार करती हुई महेन्द्र पर्वत के समीपवर्ती समुद्र तट पर जा पहुंची।

अब इनके सामने उत्ताल लहरों वाला विराट सागर हिलोरें ले रहा था। समुद्र को देखकर राम ओर अधिक विचलित हो उठे।

हलचल रावण की सेना में भी मची हुई थी। हनुमान के सारे क्रिया-कलाप से वे सभी आतंकित थे। एक तरफ उसके सेनापति और अन्य परामर्शदाता युद्ध के लिए उत्साहित होकर स्थितियों में तनाव उभर रहे थे तो दूसरी तरफ स्वयं रावण का छोटा भाई विभीषण उन्हें इस बात को समझाने में प्रयत्नशील था कि सीता को वापिस लौटा दिया जाए। किन्तु रावण का अहम इसे कब स्वीकार कर सकता था। युद्ध को इन आवाजों के बीच विभीषण को संधि की आवाज

दबकर रह गई। यहां तक कि स्वयं मेघनाद भी विभीषण का उपहास करके अपमान करने से नहीं चुका।

विपत्ति काल में जब अपने ही अपनों का विश्वास नहीं करते तो संकट और गहरा जाता है। रावण के साथ भी यही हुआ।

रावण का पुत्र मेघनाद और अनेक महारथियों, सेनापतियों की उस सभा में अपने विचार रखने वाला विभीषण कमजोर पड़ गया।

रावण ने उस अपने प्रिय छोटे भाई को अपमानित करके राज्य से निकल जाने का आदेश दे दिया।

विभीषण—“विनाशकाले विपरीत बुद्धि” कहता हुआ राज्य की सीमाओं से पार समुद्र के किनारे सेतुबंधन की प्रतीक्षा करते राम से आ मिला।

जिसका सहारा कोई नहीं होता, राम उसका सहारा होते है। इसलिए सुग्रीव आदि के संशय का निवारण करते हुए राम ने विभीषण को न केवल शरण दी बल्कि सबके सामने समुद्र की रेत और जल से तिलक करते हुए विभीषण को लंका के राजा के रूप में संबोधित किया और कहा—

“हे आर्यश्रेष्ठ! लंका पर विजय पाने पर जिस प्रकार बाली वध करके मैंने सुग्रीव को किष्कन्धा का राजा बनाया है उसी प्रकार तुम भी रावण वध के बाद लंकापति के सिंहासन पर अवश्य ही आरूढ़ किए जाओगे।”

विभीषण के द्वारा भी राम को लंका की शक्ति के बारे में काफी समाचार प्राप्त हुए। अब एक ही उपाय था कि शीघ्र ही सेतुबंधन सफल हो ओर लंका के लिए प्रस्थान किया जाए।

जब तीन दिन तक तपस्या करने पर भी राम की कोई हल निकलने नहीं दिखाई दिया तो उन्होंने अपने धनुष की प्रत्यंचा खींचकर समुद्र को सुखाने के लिए अपना मन बनाया और भयंकर प्रभाव के बाण छोड़े।

बाणों के आघात से उसमें रहने वाले जलचर थर्रा उठे। एक हलचल मच गई समुद्र में। इन लहरों के विकराल रूप से वहां निवास करने वाले नाग और राक्षस घबरा गए।

राम ने क्रोध में भरकर कहा—“हे महासागर! आज मैं पाताल सहित तुझे सुखा डालूंगा। तेरी दशा ऐसी हो जाएगी कि वे वानर लोग पैदल चलकर तेरे उस पार पहुंच जायेंगे।”

और ऐसा कहते हुए जब राम ने ब्रह्मादंड के समान भयंकर बाण भी ब्रह्मास्त्र से अभिमंत्रित करके अपने धनुष पर चढ़ाया तो क्षणभर के लिए सारे संसार पर अंधकार छा गया। ऐसा लगा कि जैसे साक्षात् प्रलयकाल उपस्थित हो रहा हो।

इस विकट स्थिति को जानकर समुद्र के बीच से स्वयं मूर्तिमान सागर ने प्रकट होकर श्रीराम से कहा—“हे सौम्य! आप मुझ पर कृपा करें। मैं आपको ऐसा उपाय बताऊंगा जिससे पुल

बन सके।”

“लेकिन मेरे इस अमोघ बाण का क्या होगा ?”

“हे राम! मेरे उत्तर की ओर द्रमकुल्य नाम से विख्यात बड़ा पवित्र देश है वहां आभीर जाति के लोग बड़े दुष्ट कर्मी और पापी हैं। आप अपने इस बाण को उत्तर ही फेंक दें तो वह स्थल मरूभूमि नाम से प्रसिद्ध हो जाएगा।”

समुद्र के अनुनय-विनय पर राम ने ऐसा ही किया और समुद्र ने उन्हें पुल बनाने की विधि का संकेत समझा दिया कि यदि विश्वकर्मा का पुल तल, जो कि शिल्कपना से निपुण है, यह मेरे ऊपर पुल का निर्माण करे तो मैं उस पुल को धारण करूंगा।

फिर क्या था, नल के प्रयत्नों से कुछ ही समय में सभी वानरों ने मिल कर एक विशाल सौ योजन लंबे, दसयोजन चौड़े पुल का निर्माण कर दिया।

पुल तैयार होने पर अपने साथियों के साथ विभीषण गदा हाथ में लेकर आगे-आगे बढ़े और समुद्र के दूसरे तट पर खड़े हो गए। राम हनुमान के कंधे पर, लक्ष्मण अंगद के पीठ पर सवार, सारी सेना उछलती कूदती समुद्र के पार हो गई।

लंका में पहला दिन

विशाल पाट वाला वह समुद्र पार करने के बाद श्रीराम ने वह रात जब सुबेल पर्वत पर ही बिताई। प्रातः वहीं से उन्होंने लंका के वन उपवन भी देखे वे बड़े ही चौरस और शांत, सुन्दर, विशाल, ओर विस्तृत थे। तथा देखने में अत्यन्त रमणीय जान पड़ते थे। उन्हें देखकर उन वानरों को बड़ा आश्चर्य हुआ। चम्पा अशोक वमूल, शाल और ताल वृक्षों से व्याप्त अर्जुन, नीम, खिले हुए हितवन, तिलक, कनेर, तथा पाटल आदि नाना प्रकार के दिव्य वृक्षों से युक्त थी। इन वृक्षों के अग्रभाग में फूल खिले थे। यह शोभा इन्द्र को अमरावती से भी अधिक सुन्दर दिखलाई पड़ रही थी।

ऐसा लग रहा था जैसे मनुष्य आभूषण धारण करता है उसी प्रकार यहां के वृक्ष सुगंधित फूल ओर अत्यन्त रसीले फल धारण किये थे।

चैत्ररथ वन और नन्दन वन के समान यहां का मनोरम वन था। वृक्षों की डालियों पर भ्रमर सृजायमान थे। कोयल की कुहुक सुनाई पड़ रही थी। सब ओर सारस की स्वर लहरी छायी थी।

इस प्रकार शोभा से भ्रमित कुछ वानर तो उन वनों में ही घुस गए। ये सभी वानर इच्छारूप धारण करने वाले थे। अतः इन्हें किसी भी प्रकार का भय या संशय तो था ही नहीं।

गर्जनाद करते, उछलते कूदते वे वानर पक्षियों को डराते, मृगों और हाथियों को सताते, लंका को कम्पित करते हुए वन में इधर-उधर दौड़ते हुए लंका दर्शन करने लगे।

त्रिकूट पर्वत, जिस पर लंका बसी थी, उसका एक शिखर बहुत ऊंचा था। ऐसा लगता था मानो आकाश को छू रहा हो। उससे चारों तरफ पीले रंग के फूल खिले थे। जिससे वह सोने का सा जान पड़ता था।

लोग तो उस त्रिकूट पर चढ़ने की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। उसका विस्तार ही सौ योजन लम्बा था, पक्षी भी उसकी चोटी तक नहीं पहुंच सकते थे।

रावण को लंका त्रिकूट के उसी शिखर पर बसी थी। यह लंका भी दस योजन चौड़ी और बीस योजन लम्बी थी। इस लंकापुरी में रावण का सहस्रों खम्भों से अलंकृत चैत्य प्रासाद था। वह सुबेल पर्वत से देखने पर कैलाश के शिखर के समान लग रहा था। मानो आकाश को माप रहा हो।

राक्षस रावण का यह चैत्य प्रासाद लंकापुरी की शोभा था। कई सौ राक्षस पूरी तरह सुरक्षा साधनों से सज्जित होकर इसकी रक्षा करते थे।

यह शोभा निहारते हुए राम लक्ष्मण, महाराज सुग्रीव, हनुमान आदि को साथ लिए इस सुबेल पर्वत शिखर पर चढ़ गए।

यहां दो घड़ी ठहर कर दसों दिशाओं की ओर दृष्टिपात करते हुए राम ने त्रिकूट पर्वत के रमणीय शिखर पर बसी वह लंकापुरी देखी।

“तुम तो इसे साक्षात् अपनी आंखों से देख आए हो कपिवर!” राम ने हनुमान से कहा।

“हां, श्रीमान! यहीं रावण के महल के बीचों-बीच यह विमान रखा है। जिस पर चढ़कर वह दुष्ट रावण देवी सीता को हर कर ले गया था और हे राम! उसका यह परकोटा चारों तरफ से एक दुर्ग की तरह सुरक्षित है।”

अभी राम हनुमान से लंका के बारे में बात कर ही रहे थे कि वहां से उनकी गोपुर की छत पर वह दुर्जय राक्षस खड़ा दिखाई दे गया।

“देखिए श्रीराम! आप जिसे स्मरण कर रहे थे, वह जो सामने बैठा है, काले बादलों के समान दिखलाई देने वाला, जिसके वस्त्रों पर सोने का काम है और ऐरावत हाथी के दांतों से चोट खाने के कारण इसकी छाती पर घाव का निशान हो गया है, वह राक्षसराज रावण, वह सामने बैठा है।”

चौककर सुग्रीव ने कहा! “अच्छा तो यह है वह राक्षस?”

उन्होंने सबने देखा, उसके सिर पर विजय छत्र शोभा दे रहा था। शरीर पर रक्त चंदन लगा हुआ था।

सब लोग देख रहे थे—उनके लिए यह अजूबा था। इसी पर विजय पाने के लिए ही तो उन्होंने इतने विशाल समुद्र पर सेतु बनाकर यहां तक आने का श्रम किया है।

हनुमान अभी राम को रावण के बारे में बता ही रहे थे कि अकस्मात् सुग्रीव खड़े हो गए।

कोई उनके मन के भाव को नहीं पहचान पाया।

इससे पहले कि हनुमान उनके क्रोध को देखते हुए उन्हें कुछ कहते या रोकते, क्रोध के वेग से बेकाबू अपने शारीरिक और मानसिक बल से प्रेरित हुए सुग्रीव ने सुबेल के शिखर से गोपुर की छत पर छलांग लगा दी।

अचानक सुग्रीव को न पाकर जहां इधर राम चिंतित हुए, वहां गोपुर की छत पर शान्त क्षणों में प्रकृति की शोभा निहारता रावण, अकस्मात् अपने परकोटे में प्रविष्ट इन वानरों को देखकर हैरत में रह गया।

चिंघाड़ते हुए रावण ने कहा—“अरे तू कौन है? बंदर! यहां कैसे आया।”

सुग्रीव ने अपने क्रोध को वश में करते हुए कहा—“मेरा परिचय मुझे मेरी भुजाएं देंगी दुष्ट!”

और यह कहते ही सुग्रीव ने जब श्रीराम पुकारा और ताबड़ तोड़ वह रावण से गुंथ गया।

रावण ने अचानक इस तरह अप्रत्याशित रूप से अपने ऊपर झपटते हुए उसे देखा तो वह स्वयं को पीछे भी नहीं हटा सका।

सुग्रीव ने उसे इतना अवसर ही कहां दिया।

और जो चाटुकार राक्षस रावण के पास उसकी सेना में और सुरक्षा में खड़े थे, वे देखते रह गए।

सुग्रीव ने बंदर की तरह रावण के सिर पर बैठकर उसकी गर्दन को इधर-उधर हिलाते हुए उसे खूब छकाया।

सुग्रीव का अर्थ होता है—सुन्दर कंठ वाला। वह जानते हुए रावण ने कहा—

“अरे दुष्ट! जब तक तू मेरे सामने नहीं आया था, तभी तक सुग्रीव था, ठहर, मैं अभी तेरी गरदन तोड़ता हूँ।”

“पहले तू अपनी गरदन तो बचा ले दुष्ट!”

रावण भी तंग हो रहा था क्योंकि सुग्रीव उसकी गरदन पर बैठा था लेकिन फिर भी प्रयास करते हुए रावण ने दोनों हाथों को ऊपर उठाकर उसकी पूँछ खींचनी प्रारम्भ कर दी।

रावण ने अपने दोनों भुजाओं से उठाकर उसे जैसे ही फर्श पर गिराने का प्रयास किया तैसे ही सुग्रीव ने कलाबाजी खाकर रावण को ही फर्श पर गिरा दिया। और इस तरह दोनों आपस में गुंथ गए।

रावण को यह आशा नहीं थी कि एक छोटा-सा बंदर उसे इस प्रकार छका देगा। लेकिन आखिर वह इस वानर की चुनौती के सामने स्वयं को कमजोर नहीं सिद्ध करना चाहता था इसलिए मुष्टि प्रहार से सुग्रीव पर चोट करनी शुरू कर दी।

दरअसल दोनों ही बलवान थे। अतः घूँसे, थप्पड़, कोहनी, पंजे से एक-दूसरे पर बार करते युद्ध करने लगे।

दोनों के शरीर पसीने से तर और खूनीखून हो गए। दोनों ही एक दूसरे को पकड़े बंधे होने के कारण निश्चेष्ट हो गए थे।

गोपुर के चबूतरे पर बहुत देर तक भारी मल्ल युद्ध करके, भयानक वेग वाले ये दोनों वीर उछलते, एक-दूसरे को कुदाते, लुढ़कते, दाँव पेंच चलते हुए उस चबूतरे की मुंडेर पर आ गए।

और एक दूसरे को दबाकर ये दोनों योद्धा ही जगह का ध्यान भूले किले के परकोटे और खाई के बीच में गिर गए।

ये दोनों जिस प्रकार आपस में गुंथे हुए थे, जब उसी दशा में गिरे तो कुछ देर तो उसी तरह आलिंगनबद्ध पड़े रहे। इसके बाद उछलकर-छिटककर खड़े हो गए। अब तो रावण भी क्रोध में भुनभुनाने लगा।

दोनों को लड़ते हुए देखकर कोई भी कह सकता था कि दोनों ही कसरती जवान हैं। युद्ध की शिक्षा ओर बल से सम्पन्न ।

एक-दूसरे से गुंथे हुए दोनों अपने कसबल दिखा रहे थे। तभी सुग्रीव ने रावण की टांग में टांग फंसाकर उसे कलामुंडी दिखाई। मतवाले हाथियों के समान सुग्रीव और महाराज के समान

रावण एक-दूसरे के दांव को रोकते हुए बहुत देर तक पैतरे बदलते रहे।

कई बार वे परस्पर भिड़े। उनको देखकर ऐसा लगता था मानो दो विलाव अपने शिकार को पकड़ने के लिए एक-दूसरे से भिड़ गए थे। कभी पैर से आगे बढ़कर चक्कर काटते हुए सुग्रीव चारिमंडल आक्रमण करता था तो रावण दोनों पैरों से घुमाकर मंडलाकार दशा में करणमंडल आक्रमण करता था और इस क्रिया को बार-बार दोहराता हुआ वह सुग्रीव पर काबू पाने का प्रयास करता था।

कभी तिरछी चाल से चलकर, कभी टेढ़ी चाल से दाएं-बाएं घुमकर, कभी अपने स्थान से हटकर शत्रु के प्रहार को निरस्त्र करते, कभी बदले में स्वयं दांव-पेंच का प्रयोग करके शत्रु के आक्रमण से बचते।

कभी एक खड़ा रहता, दूसरा बच जाता और उसके चारों ओर दौड़ लगाता। कभी दोनों एक-दूसरे के सम्मुख दौड़कर आक्रमण करते, कभी झुककर या मेंढक की भांति उछलकर चलते, कभी लड़ते हुए भी एक हो जगह खड़े रहते। कभी पैर से प्रहार करके मुंह नीचे किए एक-दूसरे पर टूट पड़ते।

इस प्रकार मल्ल युद्ध की कला में परम प्रवीण वानर राज सुग्रीव मंडलाकार बिचरते हुए अपने प्रतिद्वन्दी रावण को छका रहे थे।

अब रावण ने देखा कि सुग्रीव तो उन पर भारी पड़ा रहा है और इस तरह मल्ल युद्ध से तो उस पर काबू नहीं पाया जा सकता तो रावण ने मायाशक्ति से काम लेने का विचार किया।

सुग्रीव के साथ इस मल्ल युद्ध में जब रावण धरती पर गिरा था तो उसके मुकुट वहां से उछलकर हवा में लहराते हुए नीचे गिर पड़े थे और उन मुकुटों को देखकर जो बंदर सेना सुबेल पर्वत पर विचरण कर रही थी, वह घबरा उठी। ये दिन में आकाश से तारे कैसे टूट रहे हैं क्योंकि मणिजड़ित मुकुट जब भूमि पर गिरे तो उनके हीरे-जवाहरलाल, मोती आदि छिटककर इधर-उधर जा पड़े। उनकी चमक नक्षत्रों से कम नहीं थी।

इधर ये वानर उन मुकुटों से गेंद की तरह अपना मनोरंजन कर रहे थे तो हनुमान ने उन्हें बताया—

“अरे मूर्खों! ये आकाश से टूटे हुए तारे नहीं हैं, सुग्रीव और रावण के युद्ध में रावण के सिर से गिरे उसके मुकुट के हीरे मोती हैं।”

हनुमान ने यह मुकुट श्रीराम को दिखाया।

उधर दूसरी ओर जब वानरराज सुग्रीव ने रावण को अपनी माया शक्ति काम में लेने की मुद्रा में देखा तो वे ताड़ गए।

वे प्रसन्न थे कि उन्होंने रावण की शक्ति को झिंझोड़कर रख दिया है।

रावण का इरादा भांपते हुए सुग्रीव ने तुरन्त गोपुर से सुबेल पर्वत के लिए छलांग लगा दी।

उनके मुखमंडल पर विजय का उल्लास था। उनकी रुकावट रावण की चिंता की देखकर दूर हो गई थी।

सुग्रीव रावण को चकमा देकर भाग खड़े हुए।

सुग्रीव जिस प्रकार सुबेल पर्वत पर खड़े हुए अचानक क्रोधित होकर गोपुर पहुंचे थे, उसी प्रकार गोपुर से रावण को चकमा देकर वे फिर से सुबेल पर्वत पर आ गए।

जिन्हें संग्राम में कीर्ति प्राप्त हुई थी, वे वानरराज, सूर्य पुत्र सुग्रीव, निशाचर पति रावण को युद्ध में थकाकर आकाश मार्ग से वानरों की सेना के बीच श्रीराम के पास आ गए।

श्रीराम ने युद्ध के घावों से चिन्हित सुग्रीव को देखकर पहले तो गले से लगाया और फिर बोले—“तुमने यह क्या किया सुग्रीव! बिना मेरी सलाह लिए यह दुस्साहसपूर्ण कार्य कर डाला।”

“हे प्रिय! अब मैं सीता को तो खो चुका हूं। अभी उसे पुनः प्रातः नहीं किया। यदि तुम जैसा मित्र भी मुझसे छूट गया तो मैं कैसे जी पाऊंगा? तुमने कभी सोचा है।”

“हे वीर! तुमने यह साहस करके मुझे, लक्ष्मण को, हनुमान और विभीषण को संकट में डाल दिया था।”

“क्षमा चाहता हूं भगवन! किन्तु मैं रावण को अपने सम्मुख देखकर अपने क्रोध पर नियंत्रण नहीं कर सका। भला यह कैसे हो सकता है कि वह दुष्ट हमारे सामने, हमारा अपराधी, और सुख से रह सके?”

तभी सुग्रीव की दृष्टि उन मुकुटों पर गई, जो श्रीराम के चरणों में रखे थे।

सुग्रीव ने एक मुकुट अपने हाथ में उठाते हुए कहा—

“अरे! दुष्ट रावण के मुकुट भी प्रभु की शरण में आ गए।”

सुग्रीव ने राम के चरणों में झुकते हुए कहा—“अपने अधूरे कर्म के लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूं श्रीराम! और अपनी असफलता पर मुझे क्षोभ है कि मैं लेने तो गया था रावण के मुकुट सहित सिर को लेकिन सिर नहीं ला पाया, केवल मुकुट ही आ सके है।”

“आप आशीर्वाद दे श्रीराम! शीघ्र ही जो सिर इस मुकुटों को धारण करते हैं, वह भी आपकी सेवा में प्रस्तुत कर दिए जायेंगे।”

“मैं तुम्हारी शक्ति से परिचित हूं सुग्रीव! लेकिन मेरी एक बात ध्यान से सुन लो। अब तुम फिर कभी ऐसा दुस्साहस न करना। यदि तुम्हें कुछ हो गया तो मैं सीता, भरत, लक्ष्मण छोटे भाई शत्रुघ्न और अपने इस शरीर को भी लेकर क्या करूंगा?”

और फिर भावुक होकर राम ने कहा—

“हे प्रियवर! मैं तुम्हारे बल, पराक्रम के बारे में पूरी तरह आश्वस्त हूं लेकिन फिर भी जब तक तुम यहां लौटकर नहीं आए थे, मैं यह निश्चय कर चुका था कि यदि तुम्हें कुछ हो गया तो

मैं युद्ध में पुत्रों, सेना और वाहनों सहित रावण का वध करके लंका के राज्य पर विभीषण का अभिषेक कर दूंगा और अयोध्या का राज्य भरत को देकर अपना शरीर त्याग दूंगा।”

राम ने जब यह कहा तो सुग्रीव उनके चरणों में बैठ गए और बोले—

“हे राम! मुझे क्षमा करें। मैंने प्रतिशोध में अपने भाई का वध कराया लेकिन जब वह प्राण त्याग रहा था तो मुझे कुछ क्षण के लिए लगा कि मैंने बहुत बड़ा अपराध किया है और मेरे जीने का अब कोई अर्थ नहीं है। लेकिन आज आपसे यह सुनकर मित्र के साथ-साथ मुझे आपके रूप में अपना हितैषी वही भाई मिला है। मुझे आपके स्नेह में बाली का वही स्नेह झलक रहा है।”

और फिर राम के हाथ में हाथ देकर सुग्रीव ने कहा—“क्षमा कर है श्रीराम! मैं आपको फिर कभी यह शिकायत नहीं होने दूंगा। लेकिन एक बात से तो आप प्रसन्न होंगे।”

“मैं जानता हूँ, तुम कहना चाहते हो कि तुमने रावण को आतंकित कर दिया है। अरे जब मेरे एक महानायक ने ही रावण की लंका जला दी थी और तुम उसके घर में घुसकर, उसे परास्त करके, उसे मुकुटविहीन बना आए तो तो तुमने तो उसकी रातों की नींद उचाट दी दे सुग्रीव! यह तो प्रसन्नता का विषय है ही। मुझे तुम पर गर्व है सुग्रीव!”

इस प्रकार सुग्रीव का अभिनंदन करके श्रीराम ने लक्ष्मण को आदेश दिया—

“हे लक्ष्मण! अब हमें अपनी सेना की व्यवस्था रचना कर देनी चाहिए।”

वे सोच ही रहे थे कि तभी अचानक आंधी चलने लगी, पृथ्वी कांपने लगी, पर्वत शिखर हिलने लगे, दिशाएं डोलने लगीं, चारों तरफ बादल छा गए। देखते ही देखते मूसलाधार वर्षा होने लगी।

तभी लक्ष्मण ने पूछा—“यह किस बात का संकेत है प्रभू?”

“हे लक्ष्मण! यह सत भयानक युद्ध के संकेत है। इससे यह सूचित होता है कि वानरों और राक्षसों द्वारा चलाए गए शिलाखंडों, शूलों और खंगों से यह धरती पट जाएगी और यहां रक्त मांस की कीच जम जाएगी। मैं जानता हूँ कि रावण के द्वारा रक्षित यह लंका शत्रुओं के लिए दुर्जय है। तथापि हम शीघ्र ही वानरों की सेना सहित लंका पर आक्रमण करेंगे।”

लक्ष्मण से ऐसा कहते हुए वे महाबली श्रीराम तत्काल उस पर्वत से नीचे उतर आए।

सुग्रीव की सहायता से कपिराज को उस विशाल सेना को सुसज्जित करके श्रीराम ने ज्योतिशास्त्र के शुभ समय से उसे युद्ध के लिए कूच करने की आज्ञा दी। और लंकापुरी की ओर विशाल सेना के साथ आगे बढ़ गए।

उस समय उनके पीछे लक्ष्मण, विभीषण, सुग्रीव, हनुमान, जामवन्त, अंगद और नल-नील भी उनका अनुसरण करते हुए चल रहे थे। इनके पीछे रीछों और वानरों की विशाल सेना भी जिन्होंने शत्रुओं को आगे बढ़ने से रोकने के लिए सैकड़ों पर्वत शिखर और बड़े-बड़े वृक्ष हाथ में उठा रखे थे।

गदाधारी हनुमान सबके बीच में चलते हुए अपनी अलग छवि से शोभायमान थे।

इस प्रकार शत्रुओं का दमन करने वाले दोनों ही भाई राम और लक्ष्मण थोड़ी देर में ही लंकापुरी पहुंच गए।

वह पुरी रमणीय ध्वजा पताकाओं से सुशोभित थी। अनेक उद्यान और वन वहां की शोभा बढ़ा रहे थे। उसके चारों ओर बड़ा ऊंचा और अब्दुत परकोटा था। उस परकोटे से मिला हुआ ही नगर का मुख्य द्वार था।

इन परकोटों के कारण ही लंका में पहुंचना किसी के लिए भी संभव नहीं था। यद्यपि ऐसे सुरक्षित लंका पर आक्रमण करना देवताओं के लिए भी कठिन था तो भी श्रीराम की आज्ञा से प्रेरित होकर वानर यथास्थान रहकर उस पुरी पर घेरा डालकर उसके भीतर प्रवेश करने लगे।

लंका का उत्तर दिशा का द्वार पर्वत शिखर के समान ऊंचा था। श्री राम ओर लक्ष्मण ने धनुष हाथ से लेकर उसका मार्ग रोक लिया और वहीं रहकर अपनी सेना की रक्षा करने लगे।

वह उत्तर द्वार कम बलशाली पुरुषों के मन में उसी प्रकार भय उत्पन्न करता था जिस प्रकार दानवों द्वारा सुरक्षित पाताल भयदायक जान पड़ता है। इस द्वार के भीतर योद्धाओं के बहुत से भांति-भांति के अस्त्र शस्त्र और कवच रखे गए थे जिन्हें श्रीराम ने देखा।

वानर सेनापति पराक्रमी नील और गेंद, लंका के पूर्व द्वार पर डट गए।

महाबली अंगद ने ऋषभ, गवाक्ष और गवद्य के साथ दक्षिण द्वार पर अधिकार जमा लिया।

कपि श्रेष्ठ हनुमान ने अपने वानर वीरों के साथ पश्चिम द्वार का मार्ग रोक लिया। उत्तर और पश्चिम के मध्य भाग में जो राक्षस सेना को छावनी थी, उस पर गरुड़ और वायु के समान वेगशाली सुग्रीव ने आक्रमण किया।

जहां वानर राज सुग्रीव थे, वहां वानरों के 36 करोड़ विख्यात यूथपति राक्षसों को पीड़ा देते हुए अपनी उपस्थिति बनाए रहे।

राम की आज्ञा से लक्ष्मण और विभीषण ने लंका के प्रत्येक द्वार पर एक-एक करोड़ वानरों को नियुक्त कर दिया। सुषेण और जामवंत अपनी बहुत सी सेना के साथ श्रीरामचन्द्र के पीछे थोड़ी दूर पर रहकर बीज के मोर्चे की रक्षा करते रहे।

इस प्रकार वहां उन वानर सेनाओं का टिड्डी दल के समान अब्दुत और विचित्र सम्मेलन दिखलाई दे रहा था।

वानरों ने चारों ओर से उस त्रिकुट पर्वत को, जिस पर लंका वासी थी, घेर लिया था। एक करोड़ वानर तो उस पुरी में केवल सेना का समाचार लेने के लिए घूम रहे थे।

अब जब अपनी सेना को सब प्रकार से श्रीराम ने युद्ध के लिए सज्जित कर लिया तो इस निश्चय पर पहुंचे कि राजधर्म का तकाजा यह है—जब सब तरह से युद्ध निश्चित ही हो तब भी एक बार शत्रुपक्ष को अवश्य पुनर्विचार के लिए अवसर देना चाहिए। यह सोचते हुए विभीषण

के परामर्श करके श्रीराम ने सुग्रीव से कहा—

“हे सौम्य! मैं भली-भांति जानता हूँ कि विनाश काल आने पर बुद्धि विपरीत हो जाती है इसलिए रावण में भी किसी प्रकार से समझने की संभावना की आशा करना उचित नहीं है। किन्तु फिर भी एक बार जैसा कि राजधर्म कहता है, दूत के द्वारा शान्ति संदेश भेजना चाहिए।”

“हे श्रीराम! आप स्वयं समर्थ हैं और ज्ञानी हैं, राजधर्म से परिचित हैं। अतः जो निर्णय करेंगे, उचित ही होगा।”

राम के सम्मुख प्रश्न था कि दूतकर्म के लिए किसे चुना जाए क्योंकि शत्रु की मांद में जाकर शंख फूंकना सरल काम नहीं है।

यही सोचते हुए श्रीराम ने हनुमान की ओर देखा और कहा—

“हे वीर हनुमान! तुम लंका की आन्तरिक रीति-नीति और राज्य दरबार के व्यवहार से पूर्णतः परिचित हों तुम एक बार वहां जा चुके हो इसलिए मैं तुम्हें तो वहां दुबारा दूत बनाकर नहीं भेजना चाहता लेकिन तुम सबसे परामर्श करते हुए यह जरूर चाहता हूँ कि कोई ऐसा वाक्पटु योद्धा और प्रवीण व्यक्ति वहां जाए।”

हनुमान कुछ कहते इससे पहले ही स्वयं अंगद ने कहा—

“हे श्रीराम! यदि धृष्टता क्षमा करें तो मैं अपनी सेवाएं दूतकर्म के लिए प्रस्तुत करता हूँ।”

“मैं जानता हूँ, तुम बहुत बलिष्ठ हो, उत्साही हो।”

“और मैं बाली पुत्र भी हूँ, श्रीराम! उस बाली का पुत्र, जिसने रावण को उसकी रक्षा के लिए छः महीने अपनी कांख में दबाए रखा। मुझे विश्वास है कि रावण उस संबंध को नहीं भूला होगा। यदि आप उचित समझें तो मैं इसके लिए तैयार हूँ।”

“तुम बाली के एकमात्र पुत्र हो वत्स! तुम्हारा मूल्य मेरे लिए अपनी भावी संतान से भी अधिक है। रावण दुरअभिमानी और दुष्ट है। यदि तुम्हें कुछ हो गया तो?”

हनुमान ने मुस्कुराते हुए कहा—“श्रीराम! हम वानर जाति के वीर हैं और राक्षस हमारे ही काबू में आते हैं। मैं भी आपसे यही कहना चाहता हूँ कि यदि आप पुनरावृत्ति न करते हुए मुझे भेजने में संकोच कर रहे हैं तो हम सबमें इस समय सर्व उपयुक्त युवराज अंगद ही इस दूतत्व के लिए उपयुक्त हैं।”

इस विचार को स्वीकार करते हुए राम ने कहा—

“हे सौम्य दशमुख रावण राज्य लक्ष्मी से भ्रष्ट हो चुका है। उसका ऐश्वर्य समाप्त हो चुका है। उसकी चेतना, विवेक और विचार शक्ति नष्ट हो गई है। अब तुम इस परकोटे को लांघकर उसके दरबार में जाकर उसे कहो—

“हे निशाचर राक्षसराज! तुम अभिमान और मोह में आकर अपना विनाश कर रहे हो। तुमने ऋषि, देवता, गन्धर्व, नाग, यक्ष और सत्पुरुषों का बड़ा अपराध किया है। ब्रह्माजी का

वरदान पाकर और शिव से अमरत्व पाकर तुम्हें जो अभिमान हो गया है, अब उसके नष्ट होने का समय आ गया है। तुम्हारे पाप का फल तुम्हारे सामने आना चाहता है।”

“मैं अयोध्यापति राम, तुम्हारी दुष्ट प्रवृत्तियों का विरोधी, दंड देने वाला शासक हूँ। तुमने मेरी भार्या का अपहरण किया है, इससे न केवल मेरा अपमान हुआ है बल्कि मुझे कष्ट भी पहुंचा है।”

“मैं तुम्हें दंड देने के लिए तुम्हारी लंका के द्वार पर विराट समुद्र पार कर आ गया हूँ। हमारी सेना के एक सिपाही हनुमान ने तुम्हारे देखते-देखते तुम्हारे वन-उपवन नष्ट कर डाले, तुम्हारी लंका जलाकर खाक कर दी और तुम हमारी शक्ति नहीं पहचाने।”

“युद्ध तुम्हारे सामने है। अतः हे नीच निशाचर! यदि तुम युद्ध में अडिग खड़े भी रहे तब भी तुम उसी प्रकार पददलित होओगे जिस तरह अपने सेवकों के रहते हुए भी महाराज सुग्रीव ने तुम्हें मुकुटविहीन कर दिया।”

“क्या तुम यह चाहते हो कि जिस प्रकार यह मुकुट राम के चरणों में धूल-धूसरित पड़े थे, उसी प्रकार तुम्हारा धड़ विहीन सिर भी उसी गति को प्राप्त होगा। यदि तुम अपना भला चाहते हो तो अपना अपराध स्वीकार करते हुए धड़युक्त शीश को राम के चरणों में समर्पित कर दी।”

“यदि तुमने राम प्रिया, मिथिलेश कुमारी सीता को तत्काल अपनी पराजय स्वीकार करते हुए मेरी सेवा में अर्पित नहीं किया तो मैं अपने तेज बाणों से तुम्हारे वक्षस्थल को प्राणहीन करते हुए इस संसार को राक्षसों के विहीन कर दूंगा।”

“तुमने अपने अभिमान में जिस धर्मात्मा भाई विभीषण का भरी सभा में अपमान किया और राज्य से निष्कासित करने का मूर्खतापूर्ण आदेश दिया, मैं तुम्हारा नाश करके तुम्हारे उसी भाई को लंका का अधिपति बनाऊंगा।”

“हे दुष्ट! तुम पापी हो, तुम्हें न अपनी शक्ति का ज्ञान है, न स्वरूप का। तुम सिर्फ देवों के वरदान को अंतिम वाक्य मान बैठे हो। तुम नहीं जानते कि हर वरदान की एक सीमा होती है। तुम्हारे अहंकार के कारण, तुम्हारे अपने हितैषी की तुमसे डरकर सही बात नहीं कह पाते।”

“हे राजन! जिस राजा के मंत्री या परामर्शदाता भय के कारण उसे सत्यपरामर्श नहीं दे पाते, उस राजा के विनाश को कोई नहीं रोक सकता। इसलिए तुम अपने अधर्मपूर्ण आचरण से एक क्षण भी और अधिक इस राज्य का उपभोग नहीं कर सकोगे।”

“अतः सम्पूर्ण राक्षस संस्कृति को नष्ट होने से बचाने के लिए यदि तुम बुद्धि और विवेक से काम लेकर युद्धाभिमान त्यागकर मेरी शरण में आ जाते हो तो वह एक शान्त का उचित अवसर है। युद्ध टल जाएगा और एक भयानक विनाश होने से बच जाएगा। हे रावण! यहां मेरे आने का यही उद्देश्य है।”

“यदि तुम संधि-प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए बिलकुल ही तैयार नहीं हो तो इस दशा में अपनी वीरता का आश्रय लेकर धैर्य धारण करते हुए युद्ध करो। और रणभूमि में मेरे बाणों से

प्राणहीन होकर अपनी गति प्राप्त करो।”

“हे दुष्ट राक्षस! यदि युद्धभूमि में तुम मेरे सामने पड़ गए तो फिर लौटकर पर जीवित नहीं जा पाओगे। इसलिए यदि तुम संधि प्रस्ताव मानने के लिए तैयार नहीं हो तो अपने मित्र संबंधियों को बुलाकर अपना श्राद्धकर्म कर लो और अपनी इस स्वर्णमयी लंका को मन भरकर देख लो क्योंकि युद्ध की दशा में तुम्हारा जीवन मेरे अधीन है।”

“और हे अंगद! इतना कहने के बाद यदि रावण अपने दुराग्रह पर अटल रहे तो तुम वापिस लोट आना।”

इस प्रकार उद्धोषित होकर अंगद श्रीराम और सुग्रीव को प्रणाम करता हुआ हनुमान के पास आकर ठहर गया और बोला—“हे तात! आप वायुपुत्र के रूप में आशीर्वाद दें ताकि मेरे पैरों में वायु की गति हो और मन में आपकी सी उमंग।”

हनुमान ने जब यह सुना तो वे मुस्करा पड़े। उन्होंने पैरों में गिरे अंगद को उठाया और अपने हृदय से लगा लिया और बोले—

“हे वत्स! मेरे पास अपनी युद्ध शक्ति, उत्साह, पराक्रम, तप, बल और चमत्कार है, तुम्हारे इस अभियान में वह सब तुम्हारे साथ होगा। तुम यदि आवेश में आकर अपना पैर भी धरती पर गड़ा दोगे तो रावण भी उसे हिला नहीं सकेगा और वह जमा हुआ पैर जब तक यह सृष्टि रहेगी, अंग के पांव से जाना जाएगा।”

“जाओ वत्स! जाओ। प्रभु तुम्हारा कल्याण करें।” और फिर मन ही मन हनुमान ने कहा—वैसे रावण मानने वाला नहीं है।

इस तरह आशीर्वाद और सद्भावना के साथ अंगद वहां से एक ही पल में ऊंचे विशाल परकोटे लांघकर रावण की राजसभा में जा पहुंचा।

राजसभा में रावण अपने अपने मस्तक पर हाथ टिकाए विचारपूर्ण मुद्रा में बैठा था और उसके समस्त सभासद असमंजस में थे। क्या समाधान हो?

तभी एक वानर को सभा में आया देखकर सभी लोगों के हौसले पस्त हो गए, वे घबरा उठे। उन्हें लगा कि शायद हनुमान दुबारा आ गया है।

अंगद के मार्ग में जिन लोगों ने उसे देखा, वे पूर्व भय के कारण उसे देखते ही बेसुध हो गए। दरबार में तो अधिकांश सभासद और वीर योद्धा भय से कांपने लगे।

अभी कुछ समय पहले ही उन्होंने जिस वानर को देखा था और जिसने महाराज रावण के होते हुए उसको लंका को जला दिया था, आज वहीं वानर फिर से आ गया है।

“रे तू कौन है?” यह कहते हुए रावण ने उससे प्रश्न किया तो अंगद ने बड़े विनम्र शब्दों में कहा—“हे लंकाधिपति! मैं मां कौशल्या का आनन्द बढ़ाने वाले रघुकुलतिलक दशरथ पुत्र राम का दूत बालीपुत्र अंगद हूं। संभव है आपकी कभी मेरा नाम सुनाई पड़ा हो। मेरा न सही, मेरे

पिता का नाम तो आप जानते ही होंगे।”

“हे रावण! आपने पौरुष और धर्म को पहचानो। अहंकार की कोठरी से बाहर आओ। श्रीराम को पत्नी सीता को लौटाकर उनसे अपने अपराध को क्षमा मांग लो। मेरे प्रभु राम दयाल हैं, वे तुम्हें, क्षमा कर देंगे।”

“ओ दुर्बद्धि वानर! तू यह क्या अनर्गल प्रलाप कर रहा है। जानता नहीं कि मैं लंकापति रावण हूँ।”

“हे महाराज! मैंने सुना है कि एक रावण तो वह था जिसे सहस्रबाहु ने बचपन में अपनी घुड़साल में बांध लिया था। एक रावण वह था जिसे महाराज बाली के पुत्रों ने खेल-खेल में अजीब पशु जानकर उसे घायल कर दिया था और हे महाराज! एक रावण को तो मेरे पिता ने उसकी जीवन रक्षा के लिए छः महीने अपनी कांख में दबाए रखा। आप कौन से रावण है?”

“हे दुष्ट! मैंने अपने शीशों को काट-काटकर भगवान शंकर की पूजा की है। मेरी भुजाओं में जितना बल है, उसे दिगपाल जानते हैं, जो मेरा नाम सुनकर थर्रा जाते हैं।”

“मैं आपकी भुजाओं की शक्ति जानता हूँ महाराज! अपना सिर काट देना हमारे यहां कोई वीरता नहीं कहलाती लेकिन यदि तुम अपने को वीर बताते हो तो तुम्हारी वीरता के बारे में हमारे एक साधारण सिपाही ने बताया था।”

“वह तो बड़ा विकट वीर था।”

“तुम उसे वीर कहते हो? उसने क्या कौतुक किया था?”

“हमारे वन-उपवन उजाड़कर। जब हमने उसके इस अपराध की सजा दी तो उस दुष्ट ने अपनी पूंछ से लगी आग से हमारे भवन आदि जला दिए।”

“अच्छा, तभी तो वह यहां से लौटने पर बहुत दिन तक दुबका फिरा। उसे डर था कि कहीं प्रभु नाराज न हो जाएं क्योंकि वह बिना आज्ञा के ही यह सब कर गया।”

“हे रावण! वह तो हमारी सेना का एक साधारण वानर है। तुम उससे ही डर गए। तब फिर सोचो कि जब तुम श्रीराम से भिड़ोगे तो तुम्हारी क्या गति होगी?”

“हे रावण! श्रीराम ने तुम्हें यह संदेश भिजवाया है कि यदि साहस है तो मुझसे युद्ध करो। यद्यपि एक शेर के लिए किसी गीदड़ से लड़ना बहादुरी नहीं मानी जाती लेकिन फिर भी यदि तुम यही चाहते हो श्रीराम तुम्हारी इस इच्छा को भी पूरी करेंगे।”

रावण बहुत देर तक अंगद की इन अपमान भरी बातों को सुना रहा और जब उससे सहन नहीं हुआ तो उसने अपने सैनिक को आदेश दिया—

“पकड़ लो इस बंदर को, मार डालो इसे। देखना भागने न पाए।”

अंगद को पड़ने के लिए जैसे ही राक्षस सैनिक आए, उन्होंने उसे पीछे धकेलना चाहते हो अंगद के बल से वे स्वयं ही धराशायी हो गए।

अपनी जगह खड़े-खड़े अंगद ने कहा—“हे रावण! ये अंगद का पैर भगवान श्रीराम के आशीर्वाद से जमा हुआ है। तुम्हारी सेना में यदि किसी में बल हो तो इस पैर को यहां से हिला दें।”

फिर क्या था! अंगद की इस चुनौती पर एक से एक बड़ा विकट बलशाली राक्षस आया और अंगद को पांव से धकेलने का प्रयास किया लेकिन इन्द्रजीत सहित कोई भी उसे तिल भर भी पीछे नहीं खिसका सका। ऐसा देखकर जब रावण खुद बढ़ा और उसने अंगद के पैर को धकेलने के लिए अपना हाथ आगे बढ़ाए तो अंगद ने अपना पैर पीछे खिसका लिया।

रावण भौंचक्का रह गया और बोला—“यह क्या?”

“हे रावण! तुम लंकाधिपति एक साधारण वानर के पैर छू रहे हो?”

“अरे पैरों में गिरना है तो भगवान राम के पैरों में गिरो। वे तुम्हें वरदान भी देंगे तो मुक्ति भी।”

यह सुनकर एक बार तो रावण खिसिया गया, फिर भुनभुनाता हुआ अपने आसन पर आकर बैठ गया। अंगद का पैर अपनी जगह से हिल चुका था इसलिए इससे पहिले कि रावण कोई और माया रचे, अंगद ने कहा—“हे रावण! मेरा लक्ष्य मात्र श्रीराम के बल का तुम्हारे सम्मुख प्रदर्शन करना ही था। अब तुम यह जान लो कि यदि तुमने सम्मान सहित सीता को वापिस लौटाने का मन नहीं बनाया है और तुम अब भी अपनी जिद पर अड़े हो तो अपना विनाश निश्चित जानकर युद्ध में राम के सम्मुख लड़ते हुए वीरगति पाने के लिए तैयार हो जाओ।”

अंगद अपनी बात समाप्त भी नहीं कर पाया था कि रावण के सैनिकों ने उसे पकड़ने की कोशिश में अपने हथियार उठा लिये।

और अंगद देखते ही देखते उछल गया और दरबार की छत पर पहुंच गया। उसने अपना शरीर अत्यन्त विकराल बना लिया और उसके बोझ से रावण की दरबार की छत देखते देखते फट गई। और अंगद महल की छत तोड़कर सिंहनाद करते हुए आकाश मार्ग से उड़ गया।

रावण के लिए और भी अधिक कष्टकारी था। अभी तो वह पहले वानर हनुमान के द्वारा की गई क्षति का ही रोष कम नहीं कर पाया था। अब जब उसने महल के ऊपरी भाग को खंडित देखा तो उसे लगा कि विनाश की घड़ी आ गई। वह लम्बी सांस छोड़ने लगा।

सभा को विसर्जित कर दिया गया। इस समय वह केवल एकान्त चाहता था।

वह परामर्श करे तो किससे करे? आज उसका भाई विभीषण भी तो उसके पास नहीं था।

विभीषण का नाम आते ही रावण के मन में एक साथ दो भाव उभरे। भाई होने के नाते मन के किसी कोने में छिपा प्रेम उभर आया क्योंकि प्रवृत्ति से धार्मिक होने के कारण वह सदा सत्य परामर्श ही देता था किन्तु दूसरे ही क्षण रोष भी उभरा—

“आज तक उसने मेरे बड़े-बड़े क्रोध को सहन किया। मैंने उसके साथ व्यवहार करते हुए कभी मान और अपमान का भाव महसूस ही नहीं किया लेकिन वह इस बार मेरी झिड़क को सहन नहीं कर सका। वह भूल गया कि मैं उसका बड़ा भाई हूँ। कितना प्यार नहीं किया मैंने उसको और वह मूर्ख मुझसे नाता तोड़कर मेरे शत्रु से जा मिला। हे प्रभु! वह जहां भी हो, उसका हित करना। आखिर वह मेरा छोटा भाई है।”

इस समय रावण का मन बिलकुल निर्मल था, कहीं कोई अहंकार नहीं था। आखिर वह ब्राह्मण तो था ही, विचारवान भी था। यह तो शूर्पणखा के अपमान और खर-दूषण सहित चौदह हजार सैनिकों का वध उसके मन में प्रतिशोध जगा बैठा जिससे उसने राम से बदला लेने के लिए उसकी पत्नी का हरण कर लिया।

यह ठीक है कि राजा जनक के दरबार में धनुष तोड़ने के समय लंका पर आई विपत्ति का जो समाचार उसे मिला, उसके कारण वह धनुष तोड़ने की अपनी इच्छा को दबाए तत्काल ही लंका लौटा आया था। इसलिए सीता के प्रति उसके मन में एक कोमल भाव तो था ही। फिर भी आज नौ मासों में उसने सीता पर कभी कोई कुदृष्टि नहीं डाली। उससे मिला भी तो मन्दोदरी के साथ।

उसे स्वयं यह आशा नहीं थी कि जिन लोगों से वह शत्रुता मोल ले रहा है, वे उसके सम्मुख इतने अधिक शक्तिशाली सिद्ध होंगे। वरना वह अपना यह कदम उठाने से पहले सोचता।

लेकिन अब किया क्या जा सकता है? आज युद्ध उसके लिए अपरिहार्य हो गया है। हनुमान जिस मुद्रा में लंका आए और बिना अनुमति के एक चुनौती के रूप में सारे वन-उपवन को नष्ट कर डाला, क्या यह संधि का रूप होता है? और अब यह अंगद जिस तरह अपमान करके गया है, राम के स्वरूप को महत्ता देते हुए उसने जिस प्रकार से मेरे बल का उपहास किया है, क्या किसी भी तरह से संधि की संभावना हो सकती है? पूरे राजभवन की छत को उस दुष्ट ने छिन्न-भिन्न कर डाला। इन बन्दरों की ये बचकानी हरकतें क्या समझौते का वातावरण बना रही हैं?

यही सोचते हुए रावण अपने कक्ष में इधर से उधर चक्कर काटते हुए चिंतातुर दशा में घूम रहा था। निश्चय ही उसे अपने भाई विभीषण की याद आ रही थी। आज वह होता तो अवश्य ही उसे कोई सत्परामर्श दे सकता था।

उधर दूसरी ओर गर्जना करते हुए जब अंगद राम दल में पहुंचा तो सब लोग हर्ष से भर उठे। अंगद ने आकर श्रीराम के चरण स्पर्श किए और उन्हें सारा विवरण कह सुनाया।

पर्वत शिखर के सामने विशालकाय पराक्रमी, दुर्जय वानर वीर सुषेण ने इच्छा स्वरूपधारी बहुसंख्यक वानरों के साथ लंका के सभी दरवाजों पर अपना नियंत्रण कर लिया। और सुग्रीव की आज्ञा के अनुसार वे सैनिकों की रक्षा करते हुए बारी-बारी से द्वारों का समाचार जानने के लिए उन पर विवरण करने लगे।

राक्षसों ने जब इन वनवासी वानरों की इस विशाल सेना को लंका के बाहर घेरा डाले देखा

तो वे आश्चर्य से भर गए। उन्हें यह भय लगने लो कि ये वानर निश्चय ही अब जनता को तहस-नहस कर देंगे।

हनुमान इन राक्षसों के मन में एक भय पैदा कर गए थे इसलिए ये राक्षस उन वानरों में हनुमान की प्रतिमूर्ति देखने लगे। कौन जाने, ये वानर सबके सब हनुमान की तरह ही शक्तिशाली हों। आज उनके सामने इनका भीषण कोलाहल प्रलय का प्रचंड रूप झलका रहा था।

राम द्वारा लंका पर चढ़ाई

इधर राम ने अपनी सेना के साथ लंका की जमीन पर पांच धरे और उधर राक्षसों के दल में, 'वानर सेना लंका में प्रवेश कर गई है' यह सुनकर भय व्याप गया।

रावण ने जब अपने गुप्तचर, शुक के द्वारा रामचन्द्र को लंका में आया सुना तो उसकी भी दुख की कोई सीमा न रही। अब वह राम से युद्ध में ही मिलने की कामना करने लगा लेकिन रावण के मन में समुद्र को लांघकर लंका तक आ जाने का जो साहस दिखलाई दिया उससे उसके मन में यह भय व्याप गया कि अवश्य ही राम के पास कोई दिव्य शक्ति है और वह शक्ति रावण की शक्ति से किसी भी प्रकार कम नहीं। इसीलिए उसने एक बार फिर शुक और सारंग को उनके यहां दूत बनाकर भेजा।

राम को रावण की सेना का सारा परिचय उसके छोटे भाई विभीषण के द्वारा प्राप्त हो गया था। दोनों ओर सेनाएं युद्ध के लिए तैयार थीं लेकिन फिर भी मर्यादा का पालन करने के लिए श्रीराम ने एक बार अंगद को दूत बनाकर अवश्य भेजा। ताकि चढ़ाई से पहले युद्ध का औचित्य सिद्ध किया जा सके।

रावण दुर्भिमानी था, भला वह अंगद का परामर्श क्यों मानता। उसने ज्योंही अंगद को बंदी बनाने का प्रयास किया, अंगद रावण के देखते-देखते छत फाड़कर उछलता हुआ आकाश मार्ग से उड़ गया।

एक वानर ने आकर न केवल सीता की खोज की बल्कि रावण की सारी लंका जला दी, वह हनुमान था।

दूसरा यह अंगद रावण के भरे दरबार में भला-बुरा कहकर राम की शक्ति का परिचय देकर उसके सामने ही उछलकर भाग गया और रावण उसका कुछ न बिगाड़ सका।

वास्तव में रावण को यह आभास हो रहा था कि यह टकराहट कुबेर या इन्द्र जैसी नहीं है, उससे भी कहीं भारी है और विजय के साथ अपनी सारी शक्ति के साथ जूझना होगा।

अंगद के लौटने पर अब विधिवत् रूप से श्रीराम अपनी सेना के साथ आगे बढ़े। देखते-देखते अनेक वानर लंका के परकोटे पर चढ़ गए। चारों तरफ श्रीराम की जय के नारे गूंजने लगे।

करोड़ों वानरों का दल लंका के पूर्व द्वार को घेरकर खड़ा था। शतबलि ने दक्षिण द्वार पर बीस करोड़ वानरों के साथ पड़ाव डाल रखा था। सुषेण करोड़ों वानरों के साथ पश्चिमी द्वार को घेरकर खड़ा था।

सुग्रीव, लक्ष्मण और हनुमान आदि के साथ स्वयं श्रीराम उत्तर द्वार की ओर आक्रमण के लिए तैयार हो गए।

चारों तरफ वानरराज सुग्रीव की जय—

महाराज राम की जय

महाराज राम की जय,

जय हनुमान।

जय अंगद।

जय शंकर भोलेनाथ के जयकारों से आकाश गूँज उठा। राम और रावण का युद्ध आमने-सामने सैनिकों की टकराहट में, वानरों और राक्षसों के द्वन्द्वयुद्ध के रूप में प्रारम्भ हो गया।

वानर दल के वीर राक्षसों के ऊपर भारी पड़ रहे थे।

हरी-भरी धरती कुछ ही देर में रक्त की महानदी बन गई।

अभी तो युद्ध का पहला दिन था और राक्षस सूर्य अस्त होने की प्रतीक्षा करने लगे। वानरों के कोप के सामने ये अपनी जान बचाने को भागते दिखाई देने लगे।

कहीं अंगद, कहीं सुग्रीव, कहीं हनुमान, सभी वीर अपने दल का नेतृत्व करते हुए भयानक मारकाट करने लगे।

वानरों और राक्षसों में वानर लोग अपने विपक्षी से पूछते थे कि क्या तुम राक्षस हो? और राक्षस पूछते थे कि क्या तुम वानर हो? इस प्रकार पूछ-पूछकर वे एक-दूसरे पर प्रहार करते थे।

सेना में सब ओर मारो, काटो, आओ तो, क्यों भागे जाते हो, जैसे भयंकर शब्द सुनाई दे रहे थे।

काले-काले राक्षस सुनहरे कवच पहने अंधेरे में ऐसे दिखलाई दे रहे थे मानो चमकती हुई औषधियों के वन से युक्त काले पहाड़ हों।

उस अंधकार से पार पाना उनके लिए कठिन हो रहा था फिर भी वे क्रोध में अधीर वानरों पर टूट-टूटकर पड़ रहे थे।

यह देखकर वानरों का कोप भयानक हो उठा। वे उछल-उछलकर अपने तीखे दांतों द्वारा राक्षस दल के घोड़ों को और उनकी ध्वजाओं को विदीर्ण करने लगे।

राक्षस कभी सामने आकर युद्ध करते थे और कभी अदृश्य होकर। उन्हें भय था तो केवल हनुमान की गदा से क्योंकि हनुमान अपनी गदा घुमाकर अनेक राक्षसों को धूल चटा चुके थे। वहां घायल हुए राक्षसों की कराहटें और आर्तनाद का स्वर भयंकर प्रतीत हो रहा था। चारों तरफ रक्त ही रक्त बहने लगा था।

जब ये लोग समूह बनाकर राम पर धावा बोलने लगे तो श्रीराम ने पलक झपकते ही अपने अग्नि बाणों से दुर्धर्ष वीर, यज्ञ शत्रु, महापार्श्व, महोदर, महाकाय तथा शुक और सारण सहित

बड़े-बड़े योद्धा मौत के घाट उतार दिए। बाण लगने से जो शेष बचे, वे भाग खड़े हुए। राक्षसों के सिंहनाद और भेड़ियों की आवाज से वह रात्रि और भयानक हो उठी।

लंगूर जाति के विशालकाय वानर निशाचरों को दोनों भुजाओं से कसकर पकड़ते और उन्हें कुत्ते आदि को खिला देते।

अंगद ने रणभूमि में शत्रुओं का संहार करके रावण पुत्र इन्द्रजीत को घायल कर दिया। उसके सारथी और घोड़ों को मार दिया। यह देखकर इन्द्रजीत रथ को वहीं छोड़कर भाग गया। जब राक्षसों ने इन्द्रजीत को पराजित हुआ देखा तो उनके हौसले पस्त हो गए।

सुग्रीव और विभीषण आदि ने अंगद के इस कर्म के लिए उसकी प्रशंसा की।

युद्ध में अंगद से इस प्रकार परास्त इन्द्रजीत को अत्यन्त क्रोध आ गया। इसलिए उसने अन्तर्ध्यान विद्या का आश्रय लेकर फिर से युद्ध में आकर अदृश्य रूप से बाण चलाने शुरू कर दिए।

बाण कहां से आ रहे थे, यह पता ही नहीं चल पा रहा था। उनके उद्गम स्थान को ढूंढने के लिए हनुमान आदि को श्रीराम ने आज्ञा दी कि इन्द्रजीत को खोजा जाए।

इस पर जब ये वानर आकाश में उसे ढूंढने के लिए चले तो कुपित इन्द्रजीत ने श्रीराम और लक्ष्मण को सर्प बाण से बांध लिया। इन दोनों के अंगों में भयानक घाव हो गए थे।

इस कारण दोनों महावीर, धनुर्धर विचलित और कृशकाय हुए पृथ्वी पर गिर पड़े।

राम और लक्ष्मण की यह दशा देखकर हनुमान सहित सभी की आंखों में आंसू आ गए।

नागपाश में बंधे श्रीराम और लक्ष्मण की सभी वानर चारों ओर से घेरकर खड़े हो गए। बाणों से उनका शरीर छिद्र पड़ा था, चेष्टाएं बंद हो गई थीं। सारे अंग रक्त में सन गए थे।

तब विभीषण ने माया से यह देखना आरम्भ किया, उस समय उन्होंने माया से ही छिपे हुए अपने उस भतीजे को सामने देखा।

इन्द्रजीत प्रसन्न मन होकर कह रहा था—“यह देखो! इन्होंने ही खर और दूषण का वध किया था। आज ये दोनों भाई मेरे सामने पड़े हैं। इन्हीं के कारण शोक और चिन्ता से ग्रस्त मेरे पिता सारी रात बिना शैया के बिताने को बाध्य हो गए हैं। जिन्होंने लंका को व्याकुल बना दिया था, आज मैंने इन्हीं को शान्त कर दिया।”

इधर मेघनाद श्रीराम और लक्ष्मण को मरा हुआ जानकर उत्साह में लंकापुरी चला गया। उधर विभीषण ने सुग्रीव के अश्रुपूरित नेत्र पोंछते हुए कहा—“हे वानर सम्राट! यह समय घबराने का नहीं है। जब तक श्रीराम को चेत न हो तब तक इनकी रक्षा करनी चाहिए। राम के लिए यह संकट कुछ भी नहीं है। तुम अपने आपको संभालो और अपनी सेना को आश्वासन दो। तब तक मैं इस घबराई हुई सेना को फिर से व्यवस्थित करता हूँ।” इस तरह सुग्रीव को आश्वासन देकर, विभीषण ने भागने को उद्यत हुई वानर सेना को सान्त्वना दी।

दूसरी ओर रावण ने अपने पुत्र इन्द्रजीत से राम और लक्ष्मण के इस प्रकार निश्चेत होकर धरती पर गिर जाने का समाचार सुना तो उन्होंने त्रिजटा को यह आदेश दिया कि वह सीता को युद्धभूमि ले जाकर उन मारे गए, दोनों बंधुओं को दिखा दे। जिनके गर्व में भरकर वह मेरे प्रस्ताव के ठुकरा रही है। उसका पति अपने भाई के साथ आज मारा गया है। अब मिथिलेश कुमारी को उसकी अपेक्षा नहीं रहेगी और भय और शंका को त्यागकर मेरी सेवा में उपस्थित हो जाएगी।

सीता ने जब अपने पति और देवर को इस प्रकार मूर्छित देखा तो वह अनाथ सी विलाप करने लगी।

सीता को इस प्रकार दुखी देखकर त्रिजटा ने कहा—“बेटी! तुम गलत समझ रही हो। तुम्हारे पति जीवित हैं। यह पुष्पक विमान, जिस पर तुम यात्रा कर रही हो, यह तुम्हें धारण ही नहीं करता अगर श्रीराम जीवित न होते। तुम मेरी बात का विश्वास रखो, इसमें भी रावण की ही माया है।”

त्रिजटा की बात सुनकर सीता को कुछ तसल्ली हुई और वह कुछ दुःखी और हताश सी अपने स्थान पर लौट आई। उसे त्रिजटा ने भी यही कहा था और स्वयं भी विश्वास था कि श्रीराम को कोई सरलता से नहीं मार सकता।

सीता लौट आई थीं और उधर राम को अपने पाश से मुक्ति मिल गई थी। चैतन्य होकर राम ने जब लक्ष्मण की ओर निहारा तो उनके दुःख का कोई ठिकाना नहीं रहा और वे भाव विह्वल होकर विलाप करने लगे।

“हाय, यदि मुझे सीता मिल भी गई तो मैं भाई लक्ष्मण के बिना कैसे अयोध्या लौट पाऊंगा। पत्नी तो फिर भी दूसरी मिल सकती है पर लक्ष्मण जैसा दूसरा भाई मैं कहां से लाऊंगा?”

राम की चिंता यही थी कि लक्ष्मण के बिना यदि मैं अयोध्या लौट भी गया तो मां कौशल्या को क्या जवाब दूंगा? अपने पुत्र को देखने की लालसा में जब मां सुमित्रा लक्ष्मण के बारे में पूछेंगी तो मैं उनको क्या जवाब दूंगा। मैं माता सुमित्रा का उपालंभ नहीं सहन कर सकता अतः यह शरीर ही त्याग दूंगा। मैं लक्ष्मण के बिना जीकर करूंगा ही क्या?

राम की यह विलापपूर्ण दशा देखकर अंगद, सुग्रीव और विभीषण आदि सभी अत्यन्त दुःखी हो गए।

अभी वे लोग उपचार के बारे में सोच ही रहे थे कि उन्होंने दूर से विनितानन्दन गरुड़ को पंख फड़फड़ाते हुए आते देखा।

यह देखकर सभी के चेहरे पर प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। और जिन सर्पों ने अभी तक श्रीराम और लक्ष्मण को अपने पाश में बांध रखा था वे गरुड़ को आया देखकर ही भाग खड़े हुए। गरुड़ जी ने अपने हाथ से उन दोनों का स्पर्श किया और मुख को पोंछा। ऐसा करते ही उनकी लुप्त कांति वापिस लौट आई और वे पूर्व की ही भांति पुनः स्वस्थ हो गए।

अब गरुड़ ने भीड़ को सम्बोधित करते हुए कहा, “हे वानर श्रेष्ठ-जनों! अब आप भी सब स्वस्थ हो जाएं। क्रूरकर्मा इन्द्रजीत ने माया के बल से जिन नागरूपी बाणों का बंधन तैयार किया था, वे नाग कटू के ही पुत्र थे, जो अब आपके आशीर्वाद से अपनी सद्गति पा चुके हैं।”

“हां इतना अवश्य है, हे राम! कि अब आपको सदा सावधान रहना होगा क्योंकि ये राक्षस बड़े मायावी हैं। रणक्षेत्र में इनका विश्वास नहीं करना चाहिए।” यह कहते हुए गरुड़ जी अपने विशाल पंखों से पल भर में ही उड़कर अपने स्थान को लौट गए।

रावण को जब यह समाचार मिला कि दोनों भाई अब फिर से स्वस्थ होकर युद्ध के लिए तैयार हो गए हैं तो वह फिर से चिंताग्रस्त हो गया। तब उसने धूम्राक्ष को युद्ध के लिए भेजा।

इस दुष्ट राक्षस को आया जानकर हनुमान उसके सामने अड़ गए।

जैसे ही वह राक्षस पश्चिमी द्वार से निकला, आकाशचारी क्रूर पक्षियों ने अशुभ सूचक बोली बोलकर उसे आगे बढ़ने से मना किया।

पहले उसके रथ के ऊपरी भाग पर एक भयानक गिद्ध आ गया, ध्वजा के अग्रभाग पर मुर्दा खोर पक्षी परस्पर गुंथे हुए गिर पड़े और उसी समय एक बड़ा श्वेत कबन्ध (धड़) खून से लथपथ होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा।

वायु प्रतिकूल दिशा की ओर बहने लगी। सारी दिशाएं अंधकार से घिर गईं। इस भयंकर अपशकुन को देखकर धूम्राक्ष भी व्यथित हो उठा।

और जब उसने सामने हनुमान को देखा तो उसके हौसले पस्त हो गए। धूम्राक्ष वीर था, अतः युद्ध तो होना ही था। वानर बड़े-बड़े वृक्षों, मुदगरों और शूलों से राक्षसों को चोट पहुंचा रहे थे और राक्षस गदाओं, पट्टिशों, मुदगरों और त्रिशूलों से वानरों को आहत कर रहे थे।

राक्षस और वानर दोनों ही गुंथे हुए थे। वानर यूथपतियों में भयंकर जोश था। जहां-तहां वे राक्षसों को पटक-पटक कर मार रहे थे। कुछ की पसलियां फाड़ा डालीं, कितनों के ध्वज मसल डाले, रथ चौपट कर दिए। वानरों की मार खा-खाकर राक्षस मुंह से खून निकालने लगे। वानरों पर उनकी कोई पार ही नहीं बस रही थी। इधर धूम्राक्ष सीधे आमने-सामने हनुमान के साथ था। वह हनुमान की सेना को उखाड़-उखाड़कर फेंक रहा था।

यह देखकर हनुमान कुपित होकर एक विशाल शिला अपने हाथ में ली और धूम्राक्ष पर फेंक दी।

शिला को अपनी ओर आते देख धूम्राक्ष हड़बड़ी में गदा लेकर रथ से कूद पड़ा। रथ चौपट हो गया।

अब हनुमान ने फिर दुबारा उसे बचता देखकर एक पर्वत शिला से धूम्राक्ष पर हमला बोल दिया।

शिला को अपनी ओर आते देख धूम्राक्ष ने भी अपनी गदा उठा ली और वह हनुमान की

ओर दौड़ा। उसने कुपित हुए हनुमान जी के मस्तक पर वह कांटों भरी गदा फेंककर दे मारी।

हनुमान जी तो उस गदा का वार खाकर भी बच गए, उनका कुछ नहीं बिगड़ा किन्तु धूम्राक्ष के मस्तक पर जब पर्वत शिखर गिरा तो उसकी जान निकल गई। वह स्वयं एक पर्वत के समान था जो शिखर की चोट से धराशायी हो गया।

धूम्राक्ष को मरा जानकर सभी निशाचरों में भगदड़ मच गई।

इस प्रकार शत्रुओं को मारकर यद्यपि स्वयं पवन पुत्र हनुमान भी थक गए थे फिर भी चारों तरफ उनकी विजय पताका फहरा रही थी। रावण के लिए यह समाचार अत्यन्त वज्रपात वाला था। अब उसने वज्रदंष्ट्र को भेजा। वह मायावी राक्षस था। जिस रथ पर वह आरूढ़ होकर गया, उसमें ऋषि, विचित्रतोमर, चिकने मूसल, भिंदीपाल धनुष, शक्ति, चक्र, गदा और तीखे फरसे विद्यमान थे।

वह अपनी सेना को दक्षिण द्वार से ले गया। यहां अंगद पहले से ही विद्यमान थे।

युद्ध में वज्रदंष्ट्र अपने बाणों की मार से वानरों को अत्यन्त भयभीत करता हुआ यमराज की तरह विचरने लगा।

किन्तु बाली पुत्र अंगद भी अग्नि ज्वाल के समान निर्भयी उन राक्षसों का वध करने लगा। अंगद ने एक विशाल वृक्ष उठाकर राक्षसों पर मारा जिसके कारण ये सिरफटे राक्षस जमीन पर गिर गए।

अपनी सेना का संहार होते देख महाबली वज्रदंष्ट्र क्रोधित हो उठा और भयानक अस्त्रों से वार करने लगा।

अपनी वानर सेना को इस राक्षस के प्रहार से भागता देख बाली कुमार अंगद ने कुपित होकर एक विशाल चट्टान उस पर दे मारी। वह चट्टान का वार तो बचा गया लेकिन उसका रथ, सारथी और सभी अस्त्र-शस्त्र नष्ट हो गए। और वह मूर्छित हो गया। जब वह होश में आया तो बाली पुत्र की छाती में गदा का प्रहार किया और फिर गदा त्यागकर मुक्कों से युद्ध करने लगा। दोनों ही बड़े पराक्रमी थे। लड़ते-लड़ते अवसर पाते ही अंगद ने एक तलवार के वार से उसका मस्तक काट डाला।

रावण के लिए यह समाचार भी दुखदायी था। अब उसने अकंपन से कहा—“हे प्रिय! तुम सदैव मेरा हित चाहते हो, अतः शत्रुओं को दंड देने में राक्षस सैनिकों की रक्षा के लिए मैं सेना का दायित्व तुमको सौंपता हूँ।”

यह अकंपन था, जिसे युद्ध में कभी देवता भी कंपित नहीं कर सकते थे। वह सदैव युद्ध का अभिनंदन करने वाला था लेकिन इस युद्ध में चलते समय उसकी बाईं आंख फड़कने लगी, उसे अनिष्ट दिखाई देने लगा और वह वीर उत्पातों की परवाह किए बिना रणभूमि की ओर चल दिया। जिस समय वह राक्षस लंका से निकला उस समय ऐसा कोलाहल हुआ मानो समुद्र में हलचल आ गई हो।

अकंपन और हनुमान की वानर सेना में भयानक युद्ध छिड़ गया। रणभूमि रक्त से लाल हो गई। धूल बैठ गई और युद्धभूमि लाशों से भर गई।

वानरों ने बलपूर्वक आक्रमण करके, राक्षसों के अस्त्र-शस्त्र छीनकर, वृक्षों और शिलाओं से उन्हें विदीर्ण कर दिया।

जब कंपन ने अपनी सेना की यह दशा देखी तो वह पागल हाथी की तरह रणभूमि में अकेला ही वानरों को घायल करने के लिए कटिबद्ध हो गया और उसने देखते ही देखते वानरों के समूह के समूह मृत्यु के घाट उतार दिए।

हनुमान ने जब यह देखा तो वे इसे सहन नहीं कर सके। उन्होंने अकंपन को मार डालने का विचार करके पहले अट्टहास किया और फिर उस राक्षस की ओर दौड़ पड़े।

जब उन्हें यह ध्यान आया कि उनके हाथ में कोई हथियार तो है ही नहीं तो उन्होंने एक पर्वत शिला को उखाड़ लिया और उसे हिलाते हुए जोर से गर्जना करते हुए अकंपन पर धावा बोल दिया।

लेकिन अकंपन वीर था अतः उसने दूर से ही अपने बाण से उस शिला का चूर्ण बना डाला।

जब हनुमान ने यह देखा तो उन्होंने अश्वकण नाम के एक वृक्ष को उखाड़ लिया और क्रोध पूर्ण मुद्रा में राक्षस सेना की ओर उसे फेंक दिया।

जब इससे अपनी सेना को आहत होते अकंपन ने देखा तो उन्होंने भीषण नाराचों की वर्षा हनुमान पर कर दी।

हनुमान यह सहन नहीं कर सके और घायल शेर की तरह उन्होंने एक विशाल वृक्ष उखाड़कर अकंपन पर दे मारा। दुष्ट अकंपन यह वार सहन नहीं कर सका और कटे हुए तने की तरह धरा पर गिर पड़ा। और मारा गया।

जिस प्रकार भूकंप आने पर सारे वृक्ष कांपने लगते हैं, उसी तरह राक्षसराज अकंपन को रणभूमि में मरा हुआ देखकर सारा राक्षस समूह भयभीत होकर भाग खड़ा हुआ। इन राक्षसों के केश खुले हुए थे, ये घबराए हुए थे। हनुमान की सेना से पराजित होने पर इनका घमंड चूर-चूर हो गया था। भय के कारण इनके अंगों से पसीने चू रहे थे। वे सभी राक्षस लंकापुरी में भागते हुए भी बार-बार पीछे मुड़कर देख रहे थे कि कहीं कोई उन पर आक्रमण न कर दे।

तभी आकाश में एक भयानक गर्जना हुई और जो राक्षस जीवित रह गए थे उन्हें वानरों ने पकड़-पकड़कर घसीटना शुरू कर दिया।

जब यह समाचार श्रीराम को मिला तो उन्होंने हनुमान जी की प्रशंसा करते हुए उनको गले से लगा लिया। यह प्रारम्भिक जीत उन्हें हनुमान के द्वारा ही प्राप्त हुई थी।

अकंपन के वध के बाद रावण ने युद्ध के लिए प्रहस्त को भेजा लेकिन वानर सेनापति नील

के द्वारा प्रहस्त भी मारा गया।

प्रहस्त की मृत्यु के समाचार से रावण घबरा उठा। अब उसे लगने लगा कि राम के पास अवश्य ही कोई दिव्य शक्ति है। अतः वह बिना किसी और सेनापति को आजमाए स्वयं अपने अग्नि के समान रथ पर बैठकर युद्धभूमि में आकर खड़ा हो गया।

उस महातेजस्वी ने लंकापुरी से निकलकर महासागर के समान गर्जना करते हुए उस भयंकर वानर सेना को देखा जो हाथों में बड़े-बड़े पर्वत शिखर, चट्टानें, वृक्ष और कांटेदार झाड़ियों लिए हुई थी।

राम की सेना ने जब यह देखा कि युद्ध के लिए रावण स्वयं आ गया है तो उन्होंने इस पर घोर आश्चर्य किया।

विभीषण ने राम से कहा—“हे राजन! यह जो महामनस्वी वीर हाथी पर बैठा है, इसे आप दूसरा अकंपन समझें और जिसके दांत हाथी के समान उग्र और बाहर निकले हुए हैं, यह इन्द्रजीत है तथा जो वीर धनुष लिए हाथी पर बैठा है और बार-बार धनुष की प्रत्यंचा खींच रहा है, यह अतिकाय है।”

इसी तरह विभीषण ने महोदर, पिशाच, त्रिशिरा, कुम्भ, निकुम्भ, नरान्तक, के साथ आए राक्षसराज रावण का परिचय दिया।

रावण सिर पर मुकुट धारण किए था। विशाल वक्षस्थल विन्ध्याचल के समान था और वह स्वयं सूर्य के समान प्रकाशित हो रहा था।

रावण ने अपने साथ आए महाबली राक्षसों से कहा—“तुम लोग निर्भय और प्रसन्न होकर नगरों, राजमार्गों की ड्योढ़ियों पर खड़े हो जाओ क्योंकि वानर लोग मेरे साथ तुम सबकी यहां आया देख अवसर पाकर लंकापुरी में प्रवेश कर जायेंगे और उसे मथ कर चौपट कर देंगे।” यह कहता हुआ रावण आगे बढ़ गया।

राम के लिए यह सौभाग्य की बात थी कि यह पापात्मा आज उनकी आंखों के सामने आ गया। सीता हरण के कारण राम के मन में जो क्रोध संचित हुआ है इस नराधम का वध करके ही शांत हो सकता है।

ऐसा कहते हुए राम ने अपना उत्तम धनुष हाथ में ले लिया। लक्ष्मण ने भी उनका इसमें सहयोग किया।

सहसा रावण को युद्धस्थल में इस तरह आया देख सुग्रीव ने एक बड़ा भारी पर्वत शिखर उठा लिया और उसे रावण पर फेंक दिया। रावण ने उसे अपने बाण से टुकड़े-टुकड़े कर दिया और फिर एक भयंकर बाण का संधान करके सुग्रीव की ओर लक्ष्य किया।

सुग्रीव उस बाण से घायल होकर अचेत हो गया और पृथ्वी पर गिर पड़ा। इसी तरह रावण के बाणों से बड़े-बड़े भीमकाय वानर धरती पर गिर पड़े और अन्ततः वे पीड़ित होते हुए राम की शरण में आए।

राम ने लक्ष्मण को रावण से युद्ध करने के लिए भेज दिया।

रावण उस समय अपने बाणों से वानर समूह को गाजर-मूली की तरह विनष्ट कर रहा था। यह देखकर हनुमान उसके बाणों का निवारण करते हुए उसकी ओर दौड़े और बोले—“हे निशाचर! तुमने देवताओं से दानव, गन्धर्व, यक्ष और राक्षसों से न मारे जाने का वरदान पाया है किन्तु वानरों से तो तुम्हें भय है ही। लो मेरा यह हाथ तुम्हारे शरीर से आज जीवात्मा को अलग कर देगा। तुम निःशंक होकर मेरे ऊपर प्रहार कर सकते हो।”

रावण ने कहा—“ठहर, मैं तुझे अभी बताता हूँ।”

“हां, तुम शायद भूल गए हो, तुम्हारे पुत्र अक्षयकुमार को मैंने ही मारा था।” और तभी हनुमान ने इधर-उधर चक्कर काटते हुए रावण के मुंह पर एक थप्पड़ मार दिया।

रावण ऐसे हिल गया मानो भूकम्प आने पर पर्वत हिलता है।

हंसते हुए रावण ने कहा—“शाबाश वानर! तुम वास्तव में पराक्रमी हो, मुझे तुम्हारे साथ लड़कर अच्छा लगेगा।”

“हे रावण! तू अभी तक जीवित है, मेरे पराक्रम को धिक्कार है। लो एक प्रहार और करो। अब जब मेरा मुक्का तुम्हें पड़ेगा तो तुम सीधे यमलोक पहुंच जाओगे।”

हनुमान की यह बात सुनकर रावण ने क्रोध में दाहिना मुक्का तानकर हनुमान की छाती में मार दिया।

इस मुक्के से हनुमान विचलित हो गए।

महाबली हनुमान को उस समय विह्वल करके रावण शीघ्र ही नील पर आक्रमण करने के लिए बढ़ गए।

इस बीच हनुमानजी संभल गए और उन्होंने रावण को ललकारते हुए कहा—“अरे निशाचर! इस समय तुम दूसरे के साथ युद्ध कर रहे हो अतः तुम पर धावा करना उचित नहीं है। जाओ तुम बच गए।”

नील रावण को पूरी तरह छका रहा था। कभी वह उसकी ध्वजा पर, कभी धनुष पर और कभी मुकुट पर बैठा। रावण के लिए ही नहीं, इस दृश्य को देखने वाले राम, लक्ष्मण और हनुमान को भी विस्मित कर रहा था।

रावण घबरा उठा था किन्तु जब रावण को क्रोध आ गया तो उसने आग्नेय अस्त्र को नील पर फेंका जिससे वह जमीन पर गिर पड़ा। पिता अग्निदेव के आशीर्वाद से नील के प्राण नहीं निकले लेकिन रावण ने उसको अचेत जानकर लक्ष्मण पर धावा बोल दिया।

लक्ष्मण से युद्ध करते हुए रावण पराजित हो गया। यद्यपि रावण ने शक्ति का भी प्रयोग किया, जिसे लक्ष्मण ने अपने वक्ष पर ले लिया। इसी बीच हनुमान को भी मौका मिला और हनुमान रावण की ओर दौड़े और उसकी छाती पर एक मुक्का मार दिया।

बेसुध होकर रावण मूर्छित हो गया। तब हनुमान रावण की झपट से लक्ष्मण को बचाते हुए राम के पास ले आए।

चैतन्य होने पर रावण फिर धनुष लेकर तैयार हो गया।

अब राम ने रावण पर धावा बोल दिया तो हनुमान ने श्रीराम से कहा—“हे प्रभु! जिस प्रकार भगवान विष्णु गरुड़ पर चढ़कर दैत्यों का संहार करते हैं उसी प्रकार आप मेरी पीठ पर चढ़कर इस राक्षस को दंड दें।”

श्रीराम हनुमान की पीठ पर चढ़कर रावण पर बाण चलाने लगे।

रावण ने हनुमान जी को घायल कर दिया।

घायल होने पर भी हनुमान का साहस कम नहीं हुआ बल्कि और बढ़ गया।

राम ने भी जब हनुमान को घायल देखा तो उनके क्रोध का कोई ठिकाना न रहा और जिस प्रकार इंद्र ने वज्र के द्वारा सुमेरू पर्वत पर आघात किया था उसी प्रकार राम ने वज्र बौर अग्नि के समान, अपने तेजस्वी बाण से रावण की छाती पर आघात किया। रावण इससे विचलित हो उठा, धनुष उसके हाथ से छूट गया।

यह देखते हुए राम ने एक अर्धचन्द्राकार बाण से रावण के मुकुट को काट गिराया। रावण इस समय निस्तेज और श्रीहीन दिखाई दे रहा था।

तभी राम ने कहा—

“जाओ राक्षसराज! आज तुम थके हुए हो। यद्यपि तुमने मेरी सेना के प्रधान वीरों को मारा है फिर भी मैं आज तुम्हें युद्धनीति के अनुकूल छोड़ता हूँ।”

“मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ कि लंकापुरी में जाकर विश्राम करो और तब फिर बाद में स्वस्थ होकर मुझसे लड़ना।”

रावण के चेहरे पर अभिमान की लालिमा, अपमान की कालिख से धुंधली पड़ गई थी। उसका सारथी मर गया था, धनुष और मुकुट नष्ट हो चुके थे। वह रथहीन रावण अपने सेनापति के रथ पर सवार होकर लंका आ गया।

और हनुमान श्रीराम को कंधे पर चढ़ाए हुए राम की जय बोलते हुए सुग्रीव के शिविर में विश्राम के लिए चले गए।

अपनी पराजय से क्षुब्ध रावण ने विशाल बलशाली भाई कुम्भकर्ण का सहारा लिया। वह भी रावण के समान ही महाबलशाली था।

कुम्भकर्ण को जब यह ज्ञात हुआ कि रावण ने विभीषण को निकाल दिया है तो उसे बहुत दुख हुआ और उसने उलाहना देते हुए कहा—“हे भाई! केवल घमंड में आकर तुमने अपने दुर्भाग्य को मौका दिया है। तुमने भाभी मन्दोदरी और विभीषण के किसी भी परामर्श पर ध्यान नहीं दिया, यही कारण है कि तुम पर यह संकट आया है।”

लेकिन जब रावण ने संकट के समय कुछ करने की बात कही तो भाई के स्नेहवश कुम्भकर्ण राम से युद्ध करने के लिए तैयार हो गया।

महोदर ने तो उन्हें छल से मारा बताकर सीता पर अधिकार करने की कुटिल योजना भी सिखाई लेकिन कुम्भकर्ण बलशाली था, वह शक्ति पर विश्वास करता था, छल पर नहीं। अतः अपने वक्ष पर सोने का कवच बांधकर वह वीर रावण के आशीर्वाद से युद्धभूमि में पहुंच गया।

कुम्भकर्ण ने वानरों का संहार करना प्रारम्भ कर दिया। यह देखते हुए अंगद ने मरने-मारने की इच्छा लेकर अपने साथी सुषेण, नील, हनुमान आदि के साथ उस पर आक्रमण कर दिया। वह तो सोलह, आठ, दस-बीस और तीस-तीस वानरों को अपनी भुजा में समेटकर उनका भक्षण करता हुआ दौड़ लगाने लगा।

यह देखकर हनुमान आकाश में पहुंच गए और कुम्भकर्ण के मस्तक पर पत्थर और वृक्षों की वर्षा करने लगे।

कुम्भकर्ण पर्वत शिखरों को फोड़ डालता था और वृक्षों के टुकड़े कर देता था। यह देखकर हनुमान ने एक भीषण पर्वत शिखर को कुम्भकर्ण पर बड़े वेग से फेंक दिया।

उसकी चोट से कुम्भकर्ण व्याकुल हो उठा लेकिन फिर भी उसने उस शूल को घुमाकर जिसके शिखर पर आग जल रही थी, हनुमान की छाती पर मार दिया।

इससे हनुमान की वक्षस्थल विदीर्ण हो गया। वे व्याकुल होकर मुख से रक्त वमन करने लगे।

जब राक्षसों ने हनुमान को इस प्रकार पीड़ित देखा तो प्रसन्न होकर कोलाहल करने लगे।

यह देखकर नील ने कुम्भकर्ण पर एक वार किया लेकिन इसका भी यही हश्र हुआ।

कुम्भकर्ण का आतंक बढ़ता जा रहा था।

अंगद ने कुम्भकर्ण का वार बचाकर उसकी छाती में एक जोरदार घूंसा मारा और वह पर्वताकार राक्षस मूर्छित हो गया।

होश में आने पर कुम्भकर्ण ने अंगद को भी अचेत कर दिया। तब सुग्रीव उसके सामने आया लेकिन सुग्रीव भी शीघ्र ही परास्त होकर लौट आया।

यह स्थिति देखकर लक्ष्मण ने कुम्भकर्ण के शरीर पर भयानक बाण बरसाने शुरू कर दिए। कुम्भकर्ण उसे बालक समझ रहा था इसलिए वह लक्ष्मण की अपेक्षा राम से लड़ने का इच्छुक था और जब राम से युद्ध की बारी आई तो कुम्भकर्ण अधिक देर तक उनके सामने नहीं टिक सका।

और उसका सिर कटा धड़ युद्धभूमि में गिर पड़ा और मस्तक लंका में आ गिरा।

कुम्भकर्ण के मरण का समाचार सुनकर रावण तत्काल पृथ्वी पर मूर्छित होकर गिर पड़ा। और उसे लगने लगा कि इन दोनों भाइयों पर काबू पाना सरल नहीं है।

नरान्तक को अंगद ने मार गिराया। देवान्तक को तथा त्रिशिरा को हनुमान ने मौत के घाट उतारा। महोदर को नील ने और ऋषभ ने महापार्ष्व को मार डाला। अतिकाय को लक्ष्मण ने मारा।

इस तरह रावण के दल में उसके सभी योद्धा समाप्त हो गए। अब केवल उनका ज्येष्ठ पुत्र युवराज इन्द्रजीत शेष था।

रावण अपनी सभा में विचलित हुआ विचारमग्न था।

पिता को इस स्थिति में चिंतित देखकर इन्द्रजीत मेघनाद ने आगे बढ़ते हुए कहा—

“हे पिता! जब तक युद्ध में आपका पुत्र जीवित है, तब तक आपके माथे पर चिंता की रेखाएं क्यों? आप विश्वास कीजिए कि मैं आज ही राम और लक्ष्मण को युद्ध में परास्त करके उनके शीश आपके सम्मुख प्रस्तुत कर दूंगा।”

यह कहता हुआ वह राक्षसराज रणभूमि में चला गया।

बीच में एक स्थान पर रथ पर उतरकर उस वीर ने अग्नि की स्थापना करके, चंदन, फूल तथा लावा आदि से अग्निदेव का पूजन किया। अग्नि प्रज्ज्वलित हो उठी और उसे युद्ध स्थल में विजय का आशीर्वाद मिला।

यह देखकर इन्द्रजीत ने वानर सेना के अनेक महावीरों को अपने बाणों का ग्रास बनाया। उसके बाणों से पीड़ित वानर सेना व्याकुल हो उठी।

लक्ष्मण ने जब यह देखा तो वह इन्द्रजीत की शक्ति का जवाब देने के लिए उसके समीप आ गए।

आश्चर्य की बात तो यह थी कि इन्द्रजीत के केवल बाण दिखाई दे रहे थे, वह अदृश्य था।

यह देखकर राम ने लक्ष्मण से कहा—“हे भाई! मैं समझता हूँ कि इस समय मेघनाद ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर रहा है और वह सामने दिखाई भी नहीं दे रहा। अतः अब यही उचित है कि मेरे साथ यहां चुपचाप खड़े हो जाओ और बाण की मार सहो। जब हम लोग अचेत से होकर गिर जायेंगे तो यह दुरअभिमानी विजय के उन्माद में लंकापुरी लौट जाएगा।”

इस तरह विचार करते हुए ये दोनों भाई राम और लक्ष्मण इन्द्रजीत के बाणों से घायल हो गए और इन्द्रजीत गर्जना करता हुआ लंकापुरी लौट गया।

हनुमान द्वारा संजीवनी बूटी लाना

लक्ष्मण सहित राम को मूर्छित करके इन्द्रजीत लंकापुरी लौट आया लेकिन इन दोनों भाइयों की मूर्छा से वानर दल में शोक का सागर उमड़ने लगा । हनुमान, सुग्रीव, अंगद, जामवन्त आदि बड़े-बड़े वानर सेनापति और यूथपति किंकर्तव्यविमूढ़ हो गए।

जब अपने शिविर में विभीषण ने यह सन्नाटा देखा तो वह बुद्धिमान और धीर-वीर धर्मात्मा आगे बढ़ा और बोला—

“हे वानर यूथपतियों! आप अनावश्यक भयभीत न हों। यहां इस समय यह विषाद का अवसर नहीं है बल्कि विचार का अवसर है।”

“हे महाराज विभीषण! यह क्या हो गया? हम तो कुछ समझ नहीं पा रहे हैं।”

सुग्रीव की इस विचलित दशा को देखकर हनुमान का हाथ अपनी गदा पर गया मानो उन्होंने कोई निश्चय किया हो लेकिन उन दोनों को शान्त करते हुए विभीषण ने कहा—

“आप नहीं जानते, इन दोनों आर्यपुत्रों ने ब्रह्मा जी के वचनों का आदर किया है और उनके ब्रह्मास्त्र का सम्मान करते हुए स्वयं ही हथियार नहीं उठाए।”

“दुष्ट मेघनाद ने इन दोनों को अपने अस्त्रों से घायल अवश्य कर दिया है जिसकी पीड़ा के कारण ये मूर्छित हो गए हैं लेकिन आप निश्चिंत रहें, इनके प्राणों पर कोई संकट नहीं है।”

“स्वयं ब्रह्माजी ने यह उत्तम अस्त्र इन्द्रजीत की तपस्या से प्रसन्न होकर उसे दिया था। यह अमोघ है इसीलिए संग्राम में इसका आदर करते हुए मर्यादा की रक्षा करते हुए ये दोनों राजकुमार धराशायी हुए हैं।”

“तो हे राक्षसराज! इस अस्त्र से घायल हुए वानर सैनिकों में जो-जो प्राण धारण किए हुए हैं, हमें चलकर उनको आश्वासन देना चाहिए।”

हनुमान का यह प्रस्ताव सुनकर विभीषण हनुमान के साथ हाथ में मशाल लिए एक साथ रणभूमि में विचरने लगे।

जिनकी पूंछ, हाथ-पैर, जांघ, उंगली और गर्दन कट गए थे, जिनके शरीर से रक्त बह रहा था, ऐसे पर्वताकार वानरों से वह युद्धभूमि पटी हुई थी।

हनुमान और विभीषण ने उस युद्धभूमि का निरीक्षण किया। वहां अंगद, नील, जामवन्त, सुषेण आदि को घायल पड़े देखा।

ब्रह्माजी के अस्त्र ने लगभग 67 करोड़ वानरों को दिन के भाग व्यतीत होते-होते हताहत कर दिया था।

जब हनुमान ने जामवन्त को देखा तो उनके शरीर में सैकड़ों बाण धंसे हुए थे, उनका चेहरा निस्तेज हो रहा था।

जामवन्त ने विभीषण की आवाज पहचानते हुए उनसे कहा—

“हे विभीषण! कृपया वह बताइए कि अंजनापुत्र हनुमान जीवित तो हैं?”

“ऋक्षराज! आपने राम और लक्ष्मण, सुग्रीव, अंगद और अनेक वानर यूथपतियों की कुशल की अपेक्षा हनुमान के बारे में ही अपनी चिंता किस कारण से प्रदर्शित की। हनुमान पर आपका अतिरिक्त स्नेह लगता है।”

“हे राजन! यह ठीक है लेकिन यदि वीरवर हनुमान जीवित हैं तो मरी हुई सेना भी जीवित है। वे अपने पुरुषार्थ से सभी को जीवित करने की क्षमता रखते हैं और यदि उनके प्राण चले गए तो सत्य जानिए कि हम सब लोग भी जीवित मृतक के समान हैं।”

जामवन्त का अपने प्रति यह विश्वास देखकर हनुमान तुरंत आगे बढ़े और वृद्ध ऋक्षराज के पास आकर उनके दोनों पैर पकड़कर विनीत भाव से प्रणाम करते हुए बोले—“हे आर्य! मैं आपके सामने उपस्थित हूँ।”

“आओ श्रेष्ठ हनुमान! आओ वानर सिंह! सम्पूर्ण वानरों की रक्षा करो। यहां इस पृथ्वी पर तुम्हारे सिवा दूसरा कोई पूर्ण पराक्रम से युक्त नहीं है। यह समय तुम्हारे ही पराक्रम का है। तुम ही इन सबके सहायक हो।”

“तुम रीछों और वानर वीरों की सेनाओं को हर्ष प्रदान करो। बाणों से पीड़ित राम और लक्ष्मण के शरीर से बाण निकाल कर उन्हें स्वस्थ करो।”

“हे हनुमान! तुम्हें समुद्र के ऊपर-ऊपर उड़कर बहुत दूर तक का रास्ता तय करके पर्वत श्रेष्ठ हिमालय पर जाना चाहिए। वहां पहुंचने पर तुम्हें कैलाश शिखर दिखलाई देगा। इसी शिखर के समीप स्वर्णमय ऋषभ पर्वत का शिखर है। इन दोनों शिखरों के बीच अत्यन्त चमकदार औषधियों का पर्वत है, उसकी चमक की तुलना संसार में किसी अन्य चमक से नहीं की जा सकती।”

फिर कुछ सांस लेते हुए रुककर जामवन्त ने कहा—“हे वानर सिंह! उस शिखर पर तुम्हें मृत संजीवनी, विशल्यकरणी, स्वर्णकरणी और संधानी नाम की चार दिव्य औषधियां दिखलाई पड़ेगी।”

“हे हनुमान! तुम उन औषधियों को प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व ही यदि लेकर आ गए तो अवश्य ही यह वानरों की 67 करोड़ सेना राम लक्ष्मण सहित पुनः जी उठेगी।”

“विलंब मत करो प्रियवर! मैं यहां इस निर्जन एकान्त में बाणों का तीखा प्रहार ओर वेदना सहते हुए अभी तक तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रहा था। जाओ पुत्र! जाओ।”

जामवन्त की बात सुनकर वायुपुत्र हनुमान अपने असीम बल से युक्त होकर एक पर्वत

शिखर पर चढ़ गए और देखते ही देखते उन्होंने एक पैर से पर्वत को दबाते हुए लंबी छलांग लगा दी।

हनुमान के भार से पीड़ित वह पर्वत और उस पर लगे वृक्ष धड़-धड़ा कर टूटकर पृथ्वी पर गिर पड़े। उसकी हलचल इतनी प्रभावी थी कि लंका का विशाल और ऊंचा द्वार भी हिल गया। समूची नगरी भय से व्याकुल हो गई।

यहां से बढ़कर हनुमान मलय पर्वत पर चढ़ गए। यह साठ योजन ऊंचा था। वहां रहने वाले यक्ष, गन्धर्व और किन्नरों को व्याकुल करते हुए हनुमान बादलों के समान बढ़ने लगे। और इस तरह हनुमान ने समुद्र को नमस्कार करके अपने महान पुरुषार्थ को करने का निश्चय किया। उनका वेग अपने पिता वायु के ही समान था।

वे शीघ्र ही हिमालय पर्वत पर पहुंच गए।

वहां अनेक प्रकार के सोते बह रहे थे, बहुत सी कंदराएं और झरने थे। उस पर्वत के स्वर्णमय शिखर पर पहुंचकर हनुमान ने बड़े-बड़े देविर्षियों के आश्रम देखें। यही उन्हें हिरण्यगर्भ भगवान ब्रह्मा का स्थान दिखाई दिया। अग्नि, कुबेर और द्वादश सूर्यों के स्थान दिखलाई पड़े।

अग्नि राशि के समान प्रकाशित होने वाले इस पर्वत को देखकर पवन पुत्र हनुमान को बड़ा विस्मय हुआ। अब वे यहां से औषधि से भरे पर्वत पर पहुंच गए और चारों ओर औषधियां खोजने लगे।

हनुमान यहां सहस्रों योजन लांघकर आए थे।

उस उत्तम पर्वत पर उपस्थित सम्पूर्ण औषधियां यह जानकर कि कोई हमें लेने आ रहा है तत्काल अदृश्य हो गईं।

वहां औषधियों को न पाकर हनुमान कुपित हो उठे और रोष के कारण जोर-जोर से गर्जन करने लगे और कुपित होकर पर्वतराज से बोले—

“नगेन्द्र! तुम रघुनाथ जी पर भी कृपा नहीं कर सके। यदि तुमने औषधियां प्रदान नहीं की तो स्वयं को क्षणभर में बिखरा हुआ देखोगे।”

यह कहते हुए हनुमान ने वेग से पकड़कर वृक्षों, स्वर्ण और अन्य अनेक प्रकार की धातुओं से भरे उस पर्वत शिखर को उखाड़ लिया।

वेग से उखाड़े जाने के कारण उस पर्वत की बहुत सी चोटियां बिखर कर गिर पड़ीं। पर्वत का ऊपरी भाग अपने प्रभाव से प्रज्वलित हो रहा था।

पर्वत खंड को उखाड़कर अपने हाथ में उठाए हनुमान देवों, असुरों सहित सम्पूर्ण लोक को भयभीत करते हुए गरुड़ के समान भयंकर वेग से आकाश में उड़ चले।

हनुमान को इस प्रकार जाते देख बहुत से आकाशचारी प्राणी उनकी स्तुति कर रहे थे।

जामवन्त ने यह बिलकुल सही सोचा था कि वायु के समान वेग वाले केवल हनुमान ही

इतने कम समय में इतनी लंबी निरापद यात्रा करके लक्ष्य सामने में समर्थ थे। इनके अतिरिक्त और कोई दूसरा व्यक्ति यह कार्य नहीं कर सकता था और इसीलिए उन्होंने विभीषण से पूछा था—“क्या हनुमान जीवित है?”

वही हनुमान सूर्य के समान चमकते हुए उस पर्वत शिखर को हाथ में उठाए सूर्य के ही पथ पर आ पहुंचे। उस समय वे स्वयं दूसरे सूर्य के समान शोभायमान हो रहे थे।

वायुदेव के पुत्र हनुमान पर्वत के समान जान पड़ते थे। इस समय उनकी शोभा अग्नि की ज्वाला से युक्त चक्रधारी विष्णु के समान दिखलाई पड़ रही थी।

चेतन-अर्ध चेतन वानर सेना ने जब अपनी आंखों के सामने एक अलौकिक प्रकाशपुंज चमकते देखा तो उनके हर्ष का कोई ठिकाना न रहा। हनुमान को आया जानकर सभी लोग तुमलनाद का हर्षित हो गए।

हनुमान इस उत्तम औषधियुक्त पर्वत को उठाए त्रिकूट पर्वत पर कूद पड़े और शीघ्र ही वानर सेना के मध्य आकर विभीषण को अपने आने का समाचार दिया।

जामवन्त के कथनानुसार मृत संजीवनी आदि दिव्य औषधियों का रस निकालकर राम और लक्ष्मण दोनों भाइयों को बारी-बारी से दिया गया। उनके शरीर के बाण निकल गए और घाव भर गए और दोनों भाई स्वस्थ हो गए।

इसी तरह सुग्रीव, अंगद आदि को भी स्वस्थ किया गया। जामवन्त भी स्वस्थ हो गए और सब लोग शेष वानरों को चैतन्य करने में लग गए।

धीरे-धीरे समस्त 67 करोड़ वानर सेना पुनः जाग उठी।

सेना के स्वस्थ हो जाने पर प्रचंड वेगधारी हनुमान ने पुनः औषधियों के उस पर्वत को यथास्थान पहुंचा दिया और लौटकर रामचन्द्रजी से आ मिले।

अब सभी वानर सैनिक सचेत हुए युद्ध के लिए तैयार थे। यह देखकर सुग्रीव ने हनुमान से आगे का कर्तव्य सूचित करने के लिए कहा—“कुम्भकर्ण मारा गया है, अब रावण के पास लंकापुरी का कोई प्रबंध नहीं है इसलिए हमारी सेना में जो महाबली है, वे शीघ्र ही लंका पर धावा बोल दें।

यह आदेश पाते ही सभी सैनिक वानर हाथ में मशाल लेकर लंका की ओर चल दिए। इन्हें देखकर अपने कर्तव्य पर नियुक्त राक्षस सहसा भाग खड़े हुए। वानरों ने हाथ की मशालों से अट्टालिकाओं, गलियों, महलों में आग लगानी प्रारम्भ कर दी। पर्वताकार प्रासाद धराशायी होने लगे।

आग से घिरी हुई लंका में वहां के वासी त्राहि-त्राहि करके भाग खड़े हुए। विचित्र रौरव दृश्य उपस्थित हो गया था। राम के धनुष से छूटे हुए बाणों ने लंकापुरी का कैलाश शिखर के समान ऊंचा नगर द्वारा ध्वस्त करके पृथ्वी पर गिरा दिया था।”

जब रावण ने इस प्रकार की भीषण विनाश लीला को लंका में उपस्थित होते देखा तो उसे क्रोध आ गया। तब उसने कुम्भकर्ण के दोनों पुत्र कुम्भ और निकुम्भ को कंपन आदि के साथ उन वानरों का सामना करने के लिए भेजा। अंगद ने कंपन और प्रजंघ को मार गिराया, सुग्रीव ने कुम्भ का वध किया।

जब निकुम्भ ने यह देखा कि उसका बड़ा भाई मारा गया है तो वह इन्द्रध्वज के समान तेजस्वी परिधि को घुमाता हुआ युद्धभूमि में जोर से गर्जा करने लगा।

यह देखकर महाबली हनुमान उससे भिड़ गए और देखते ही देखते अपने मुक्के के प्रहार से उस भयानक राक्षस को वृक्ष की तरह उखाड़कर टहनियों के समान उसके हाथ-पैर तोड़ डाले।

अब रावण के पास इन्द्रजीत के अलावा तरकश में कोई तीर बाकी नहीं था।

रावण ने मायावी सीता का वध करके राम को विचलित भी करना चाहा किन्तु विभीषण ने उनके इस भ्रम का निवारण कर दिया।

इसके बाद जब हनुमान को यह ज्ञात हुआ कि यह इन्द्रजीत की माया थी तो उन्होंने एक विशाल शिला रावण कुमार के रथ पर फेंककर दे मारी। इन्द्रजीत का रथ तो बच गया लेकिन वह शिला धरती फोड़कर उसके भीतर समा गई।

शिला के गिरने से राक्षस सेना को बड़ी पीड़ा हुई। वानर लोग हाथी में वृक्ष और पर्वत शिखर उठाए इन्द्रजीत की ओर दौड़ पड़े। उसके अनुचरों को मार गिराया।

इन्द्रजीत अब अपनी शक्ति को संचित करने के लिए युद्धभूमि से हटकर निकुम्भिला मंदिर में जाकर अग्नि पूजा करने लगा। वह यज्ञ के विधान का ज्ञाता था। उसने समस्त राक्षसों के अभ्युदय के लिए विधिपूर्वक हवन करना प्रारम्भ किया।

राम ने हनुमान के अत्यन्त दुष्कर कर्म को जानकर उनके अस्त्रों भयंकर शब्द को सुनकर जामवन्त को उनकी सहायता के लिए भेजा लेकिन बीच में ही हनुमान को वापिस आते, देख से लोग लौट आए।

विभीषण के कथन पर श्रीराम को यह विश्वास हो गया कि सीता का मरण एक छल मात्र था और हनुमान, जो सीता को रावण के द्वारा रची माया से भरा दिखलाया जानकर आश्वस्त थे लेकिन संदेह में लौट आए थे, अब विभीषण ने कहा—

“हे महाराज! इन्द्रजीत ने जिस प्रकार वानरों को मोह में डालकर यह मायाजाल रचा है इसमें समय का लाभ उठाकर वह निकुम्भिला मंदिर में होम कर रहा है। यदि उसका यह यज्ञ कार्य भली-भांति सम्पन्न हो गया तो हे नरश्रेष्ठ! फिर उस रावण कुमार को संग्राम में परास्त करना किसी के लिए भी संभव नहीं होगा अतः समय नष्ट न करें और लक्ष्मण को यह आदेश दें कि वह इन्द्रजीत का यज्ञ विध्वंस करें।

विभीषण से यह सुनकर राम ने लक्ष्मण को आज्ञा दी और कहा—“हे वीर! जाओ और उस दुष्ट के यज्ञ का ध्वंस करके शीघ्र ही मेरे कष्ट का निवारण करो।”

हनुमान आदि के साथ लक्ष्मण निकुम्भिला मंदिर की ओर चल दिए।

वहां देखा कि इन्द्रजीत का यज्ञ पूरा होना ही चाहता है तो हनुमान ने अपनी सेना की सुरक्षा के लिए खड़े राक्षसों पर हमला करने का आदेश दे दिया।

जब मेघनाद ने यह सुना कि वानरों की सेना मेरी यज्ञ के लिए खड़ी सेना पर टूट रही है तो वह अनुष्ठान बीच में ही छोड़कर खड़ा हो गया। इस समय वह बड़ा ही विनाशकारी लग रहा था। हनुमान ने जब यह देखा तो उन्होंने एक विशाल वक्ष को उखाड़ लिया और राक्षसों की उस सेना को दग्ध करते हुए उन्हें धराशायी करने लगे।

इधर इन्द्रजीत भी अपनी सेना की रक्षा के लिए बाणों की वर्षा करने लगे और उनका रथ उस ओर चल दिया जिस ओर हनुमान युद्धरत थे।

मेघनाद को अपने सामने आया जान हनुमान ने उसे ललकारते हुए कहा—

“ओ दुर्बुद्धि रावण कुमार! यदि भुजाओं में बल है और तुम स्वयं की शूरवीर मानते हो तो मेरे साथ मल्लयुद्ध करो।”

यह सुनकर रावण कुमार मेघनाद ने हनुमान का वध करने के लिए अपना धनुष उठा लिया।

यह देखकर विभीषण ने लक्ष्मण से कहा—“हे सौमित्रे! यह इन्द्रजीत हनुमान का वध करना चाहता है। अतः आप शीघ्र ही इसका वध करके हनुमान की रक्षा कीजिए।”

इन्द्रजीत ने विभीषण को लक्ष्मण से बात करते हुए देखा लिया तो वह बोला—

“चाचा! तुमने लक्ष्मण को मेरा वध कराने के लिए वह स्थान दिखलाया है जहां यदि मेरी तपस्या पूरी हो जाती तो फिर मेरा कोई बाल बांका नहीं कर सकता था। ऐसी निर्दयता तुम ही कर सकते हो।”

वहीं से चिल्लाते हुए विभीषण ने कहा—“हे अधम राजकुमार! तुमने कभी बड़प्पन का ख्याल रखा है जो तुम मुझसे उदारता की अपेक्षा कर रहे हों। मेरा जन्म राक्षस कुल में अवश्य हुआ है किन्तु मैं सत्वगुण का आश्रय लेकर अपने जीवन को संचालित करता हूँ। मेरी अधर्म में कभी रुचि नहीं रही। यदि अपने भाई का शील स्वभाव अपने से न मिलता हो तो भी बड़े भाई को छोटे भाई को घर से निकालना उचित है? जो दूसरों का धन लूटता हो पराई स्त्री को हाथ लगाता हो, उसके विनाश को कोई रोक सकता है? उदंड बालक तू काल के पाश में बंधा हुआ है। तूने मुझसे जो कठोर बात कहीं है, उसी का यह फल है कि आज तुझ पर यह घोर संकट आया है। अब तू बरगद के नीचे तक नहीं जा सकता।”

विभीषण की यह बात सुनकर इन्द्रजीत मेघनाद कोप से पागल हो उठा और उसने अपना पराक्रम दिखलाते हुए बाण वर्षा प्रारम्भ कर दी।

“हे लक्ष्मण! लो देखो, आज मेरे बाण तुम्हारे प्राण हर लेंगे।”

किन्तु मेघनाद का अहंकार उसके सिर चढ़कर बोल रहा था।

दोनों में भयानक युद्ध हुआ।

सुमित्रा कुमार ने विषधर सर्पों के समान भयंकर बाणों को धनुष पर चढ़ाया और उनको इन्द्रजीत को लक्ष्य करके चला दिया।

ये बाण इन्द्र के वज्र को भांति दुःसह थे। जिनकी चोट से इन्द्रजीत कुछ क्षण के लिए मूर्छित हो गया।

चेतना लोटने पर वह फिर से लक्ष्मण पर प्रहार करने लगा। लक्ष्मण को घायल करके उसने हनुमान और विभीषण पर भी अपने बाणों का प्रहार किया। तभी लक्ष्मण ने कुपित होकर रावण कुमार पर लक्ष्य करते हुए बाण चला दिया, जिससे इन्द्रजीत का कवच टूटकर बिखर गया।

कवच के टूटने से, लक्ष्मण के नाराचों के प्रहार ने इन्द्रजीत को पूरी तरह घायल कर दिया और देखते ही देखते वह अतुल वीर लक्ष्मण के तीव्र बाण से मस्तक विहीन हो गया। अब धरा पर उसका कटा धड़ खून से लथपथ दिखलाई दे रहा था।

इन्द्रजीत को मरा जानकर राक्षस सेना में भगदड़ मच गई और इधर लक्ष्मण, हनुमान और विभीषण विजय के उल्लास में यह समाचार श्रीराम को देने के लिए तेजी से चल पड़े।

आज हनुमान इतने प्रफुल्लित हो रहे थे कि उन्होंने इन्द्रजीत घाती लक्ष्मण ओर लंका के भावी नरेश विभीषण को अपने कंधे पर उठा लिया था। इस प्रकार वे वीर हनुमान प्रसन्नमना अपनी सेना के साथ अपने शिविर में लौट आए।

लक्ष्मण के द्वारा इन्द्रजीत का वध हुआ है, जब श्रीराम ने यह समाचार सुना तो अति भावुकता में उनकी आंखों से आंसू निकल पड़े। उन्होंने देखा, लक्ष्मण अपने शरीर में धंसे हुए बाणों से अधिक पीड़ित थे लेकिन राम से अपने स्नेहिल भाव से जहां-जहां घावों पर हाथ फेरा, लक्ष्मण को वेदना मिटती चली गई और वे शीघ्र ही स्वस्थ हो गए।

रावण के लिए इन्द्रजीत का वध घोर निराशा का समाचार था। अब उसे अपने युद्धाकाश में कोई भी ऐसा वीर नहीं दिखलाई दे रहा था जिसे वह सेना के सेनापति के रूप में भेज सकता।

अब उसके लिए स्वयं युद्ध में जाने का एक ही विकल्प था।

रावण को सेना के जो भी वीर थे, वे धीरे-धीरे मारे जाने लगे।

राम और रावण युद्ध के लिए अब आमने-सामने आ गए थे। और राम को इसी अवसर की प्रतीक्षा थी ताकि वे रावण का वध करके सीता को मुक्त करा सकें।

हनुमान द्वारा सीता को राम का संदेश

राम और रावण के युद्ध का परिणाम अधर्म पर चलने के कारण रावण के विपरीत पड़ा।

इस महाबलशाली वीर ने अपने भाइयों, पुत्रों, भाई पुत्रों और अनेक हितैषी महावीरों और पराक्रमियों की आहुति युद्ध में मारा गया।

इन सब परिणामों से रावण भीतर ही भीतर काफी हिल गया था। उसे अपना अन्त सामने दिखलाई देने लगा था फिर भी युद्ध तो लड़ना ही था।

अतः जब विरुपाक्ष और महोदर भी काल के ग्रास बन गए तो बलशाली रावण स्वयं युद्ध की बागडोर संभालकर युद्धभूमि में आ खड़ा हुआ। रावण को तो इस समय अपनी हारी हुई बाजी के लिए प्राण अर्पित करते थे। अतः उसने अपनी सारी शक्ति राक्षस सेना के हित में वानरों के विरोध में लगा दी।

जब राम ने यह देखा कि रावण उनकी सेना पर भारी पड़ रहा है तो उन्होंने अपने प्रखर बाणों से रावण पर प्राणघाती बार करने शुरू कर दिए।

इसी बीच लक्ष्मण ने रावण की ध्वजा के कई टुकड़े कर दिए और अपने बाणों से उस राक्षसराज के हाथी के सूंड के समान मोटे धनुष को भी काट डाला। तभी रावण ने विभीषण को मारने के लिए एक वज्र के समान प्रज्ज्वलित शक्ति चला दी। जब लक्ष्मण ने यह देखा तो उन्होंने विभीषण की रक्षा की और रावण पर बाणों की वर्षा कर दी। विभीषण बच गए तो रावण ने लक्ष्मण से कहा—

“लो तुमने विभीषण को बचा लिया तो मैं तुम पर अपनी शक्ति का प्रहार करता हूँ।” ऐसा कहते हुए रावण ने मयासुर की माया से निर्मित उस शक्ति को लक्ष्मण पर लक्ष्य करके चला दिया।

जब राम ने शक्ति को लक्ष्मण की ओर आते देखा तो—“लक्ष्मण का कल्याण हो। तेरा प्राणनाशक विषयक उद्योग नष्ट हो। तू व्यर्थ हो जा।” ऐसा कहा।

वह शक्ति विषधर सर्प के समान भयंकर थी, जो लक्ष्मण की छाती में डूब गई। लक्ष्मण अचेत होकर भूमि पर गिर पड़े। वे रक्त के प्रवाह से नहा रहे थे। यह देखकर राम हतप्रभ रह गए और तब उन्होंने सुषेण से कहा—“लक्ष्मण के बिना मैं जीकर क्या करूँगा।”

“हे शत्रुदमन राम! आप विषाद न करें। अभी इनकी हृदयगति बंद नहीं हुई है।” और यह कहते हुए सुषेण ने हनुमान से कहा—“जाओ कपिश्रेष्ठ! एक बार फिर वहीं महोदर पर्वत पर पुनः विशल्यकरणी, संजीवकरणी, संधानी और सावण्यकरणी, महाऔषधियों को लेकर आओ। उसी से लक्ष्मण की जीवन रक्षा हो सकेगी।”

हनुमान फिर से उसी पर्वत पर गए किन्तु उन औषधियों को पहचानने में भूल कर गए इसलिए वे उस पर्वत शिखर को ही उठा लाए।

उस शिखर को लेकर जब हनुमान लोटे तो उन्होंने बताया कि औषधियों को न पहचानने के कारण मैं यह पूरा पर्वत ही उठा लाया हूँ।

सुषेण ने उन औषधियों को कूट-पीसकर उनका अर्क निकालकर लक्ष्मण की नाक में डाला।

औषधियों को सूंघते ही उनके शरीर से बाण निकल गए और वे नीरोग हो गए। सब ओर से फिर हर्ष की लहरें उठने लगीं।

इसके बाद देवताओं ने श्रीराम के लिए रावण से युद्ध करने के लिए इन्द्र का रथ भेजा जिस पर बैठकर राम ने रावण का वध किया।

राम द्वारा खींचकर मारा गया मर्मभेदी बाण रावण की छाती को विदीर्ण करता चला गया ओर वह कटे हुए तने की तरह धरती पर आ गिरा।

जो विभीषण अब तक रावण के प्रति कहीं न कहीं विद्वेष भाव से पीड़ित था, अपने भाई को इस प्रकार से पराजित होता देख स्वयं को धिक्कारने लगा क्योंकि बैर तो जीवन काल तक ही रहता है इसलिए भाई के प्रति उसका बैर समाप्त हो गया।

श्रीराम ने विभीषण द्वारा रावण का विधिवत दाह-संस्कार कराया ओर उस लंका का अधिपति नियुक्त किया।

सारी औपचारिकताएं लगभग पूरी हो चुकी थीं। अब प्रश्न था, सीता मिलन का। अतः विनीत भाव से राम ने हनुमान से कहा—“हे सौम्य! अब तुम महाराज विभीषण की आज्ञा से लंका में प्रवेश करके सीता से उनका कुशल समाचार पूछो और मेरा समाचार उन्हें दे दो और शीघ्र ही मुझे इसको सूचना दो।

हनुमान को तो आदेश की देर थी, वे तुरंत अशोक वाटिका में प्रवेश कर गए।

वे तो समुद्र लांघकर सीता का संदेश ले गए थे तो वहां तो लंका में आए हुए सीता के संदेश को पाने में क्या देर लगती।

हनुमान ने अशोक वाटिका में प्रवेश करके विधिवत रूप से सीताजी को अपने आगमन की सूचना दी। वे अभी भी मलिन दिखाई दे रही थीं और राक्षसियों से घिरी हुई थीं।

सीताजी को प्रणाम करके हनुमान चुपचाप खड़े हो गए।

सीता ने उन्हें पहचान कर मन ही मन उनके इस प्रकार आने का अभिप्राय समझ लिया लेकिन वे बोली नहीं, चुपचाप बैठी रही।

सीता का मौन देखकर हनुमान ने कहा

“हे देवी! प्रभु कृपा से दुष्ट रावण सारा गया है और आपके स्वामी श्रीराम ने यह कार्य अपने हाथों से किया है। विभीषण को रावण के बाद लंका का राजा नियुक्त कर दिया गया है। अतः हे देवी! मैं आपके समीप श्रीराम का विजय के समाचार के साथ-साथ यह संदेश देने

आया हूँ कि आप चिंता छोड़कर स्वस्थ हो जाएं।”

“हनुमान! कितने समय की यातनामयी प्रतीक्षा के बाद आज यह शब्द मुझे सुनने को मिले हैं, जिसकी मुझे चिर प्रतीक्षा थी। मैं जानती थी कि राम अवश्य रावण का वध करके लंका पर विजय प्राप्त करेंगे किन्तु जब तक यह अवसर आया नहीं था तब तक उस दंभी राक्षस की कारावास में रहते हुए जो यातना मैंने सही है वह पल-प्रतिपल मुझे दंश दे रही थी। आज तुमने यह समाचार देकर मुझे वास्तव में उबार दिया है।”

“हे देवी! श्रीराम ने कहा है कि मैंने तुम्हारे उद्धार को जो प्रतिज्ञा की थी उसे सो योजन लंबा पुल बनाकर अथक प्रयत्न से रावण का वध करके पुरा कर दिया है। जब तुम अपने को रावण के घर में रहते हुए भयभीत न मानता। यह समझना कि तुम अपने ही घर में हो। और हे देवी! विभीषण भी आपके दर्शन के लिए उत्कंठित यहां आ रहे हैं।”

“हनुमान! तुम्हारे द्वारा यह शुभ समाचार पाकर मैं तुम्हें पुरस्कार देना चाहती हूँ। पर मुझे कोई वस्तु ऐसी नहीं दिखाई दे रही जो तुम्हें पुरस्कार स्वरूप दे सकूँ। क्योंकि सोना, चांदी अथवा कोई रत्न या तीनों लोकों का राज्य भी इस प्रिय समाचार की बराबरी नहीं कर सकता।”

“मैं कृतकृत्य हो गया देवी! आपके वे वचन मेरे लिए अमूल्य धनराशि के समान और स्वर्ग से भी बढ़कर है। श्रीराम की विजय से ही मेरे सारे प्रयोजन सिद्ध हो गए हैं।”

“मेरी केवल एक इच्छा है, यदि आपकी आपकी आज्ञा हो तो मैं इन समस्त राक्षसियों को जिन्होंने आपको इस हरण काल में सताया है, मार डालना चाहता हूँ। इन्होंने आपको बहुत कष्ट पहुंचाया है। रावण की ये सेविकाएं जिस प्रकार से आपके प्राणों को सुखाती थी, यह मैं पिछली बार अनुभव कर गया हूँ।”

“वैसे आपकी आज्ञा चाहता हूँ, अभी पल भर में ही मैं इनको मौत के घाट उतार दूंगा।”

“शान्त हो जाओ कपिश्रेष्ठ! इसमें इन बेचारियों का क्या दोष? ये तो पराधीन थीं। यदि ये आज्ञा का पालन नहीं करती तो रावण इन्हें मार डालता। तुम तो जानते हो कि दास का अपना क्या होता है, वह तो स्वामी का दास होता है और जो कष्ट मैंने भोगा है, वह मेरे पूर्व कर्म का फल था।”

“हे हनुमान! जब से इन्होंने यह सुना है कि रावण मारा गया है तब से तो ये मुझसे कुछ नहीं कहतीं। अतः तुम इन पर क्रोध मत करो।”

“जैसी आपकी आज्ञा। अब मैं चलूंगा ताकि श्रीराम से आपकी भेंट शीघ्र हो सके।”

सीता के पास से लौटकर हनुमान ने राम से कहा—“हे भगवान! अब आप शोक सन्तप्त मिथिलेश कुमारी को अपने दर्शन से सुख पहुंचाएं।”

हनुमान से यह सुनकर राम की आंखें भर आईं और वे बोले—

“हे विभीषण! तुम सीता को मस्तक पर से स्नान कराकर दिव्य अंगराग और आभूषणों से

युक्त करके शीघ्र मेरे पास से आओ।”

आदेश पाते ही विभीषण अन्तःपुर में गए और अपनी स्त्रियों को भेज कर उन्होंने सीता को अपने आने की सूचना दी ओर इसके बाद विनीत भाव से अंजलि बांधे विभीषण ने सीता से निवेदन करते हुए कहा—“हे देवी! आप स्थान करके दिव्य अंगराग और आभूषणों से सज्जित होकर सवारी पर बैठिए। श्रीराम ने आपको बुलाया है।”

“हे राजन! मैं बिना स्नान किए ही अपने पतिदेव का दर्शन करना चाहती हूं।”

“हे देवी! श्रीराम ने जैसी मुझे आज्ञा दी, उसी के अनुरूप मैंने आपसे कहा।”

पति भक्ति से सुरक्षित और उन्हें देवता मानने वाली सीता ने बहुत अच्छा, कहकर स्नान आदि करके चलने की स्वीकृति दी।

विभीषण बहुमूल्य वस्त्रों से सज्जित सीता को शिविका में बिठाकर राग के सम्मुख से आए। और राम से बोले—“हे श्रीराम! सीता भी आ गई है।”

राम ने धीरे-धीरे आंखें खोलते हुए सीता को देखा और कहा—

“भद्रे! मुझ पर जो तुम्हारे हरण का कलंक लगा था, तुम्हारी खोज के लिए हनुमान ने जो प्रशंसनीय कर्म किया, समुद्र लांघकर तुम्हारी लहर ली। वानरों ने सेना में मेरा सहनीय करते हुए लक्ष्य को पूरा होने में अपना कर्तव्य पूरा किया। वह मेरा कर्म और दायित्व आज पूरा हुआ।”

“तुम्हें मालूम होना चाहिए, वह पराक्रम तुम्हें पाने के लिए वही बल्कि अपवाद का निवारण करने और वंश पर लगे कलंक को धोने के लिए किया गया था।”

“तुम्हारे चरित्र में संदेह का प्रश्न उठ खड़ा हुआ है। अतः हे जनक कुमारी मैं अपनी ओर से तुम्हें अनुमति देता हूं, तुम्हारे लिए दसों दिशाएं खुली हुई हैं, तुम जहां चाहो जा सकती हो।”

राम की बात सुनकर सीता को तो आघात पहुंचा ही, हनुमान को इससे बहुत बड़ा कष्ट हुआ। उसका सारा मनोरथ असफल हो गया। उसका बल और पराक्रम व्यर्थ हो गया। सुग्रीव, अंगद और विभीषण भी यह सुनकर हतप्रभ रह गए।

सीता ने लक्ष्मण के द्वारा अपनी चिता तैयार कराई और अग्नि में प्रविष्ट होते हुए उन्होंने कहा—

“हे देव! यदि मैं मन, वाणी और किया द्वारा केवल रघुनाथजी के प्रति ही समर्पित रही हूं। यदि मैं सर्वथा निष्कलंक हूं और यदि मेरा मन एक क्षण के लिए भी रघुनाथ से अलग नहीं हुआ है तो हे अग्निदेव! मेरी रक्षा करो।” यह कहते हुए सीता अग्नि में समा गई।

यह दृश्य सबके लिए भयानक आर्तनाद करने वाला था।

अग्नि ने सीता की निष्कलंक प्रस्तुत किया।

जब श्रीराम, लक्ष्मण, सीता सहित अयोध्या लौट आए। उनके साथ सुग्रीव, विभीषण तो वे ही, सेवक के रूप में हनुमान भी उनके साथ-साथ थे।

श्रीराम के वनवास काल के अंतिम दिनों में जिस भक्ति भाव से हनुमान उनके प्रति समर्पित रहे, इसे सभी जानते हैं। यह निस्वार्थ सेवा केवल हनुमान कर सकते थे। स्वयं जामवन्त ने यह कहा था कि यदि हनुमान न होते तो समुद्र लंघन संभव नहीं था। यदि हनुमान न होते तो अचेत राम और लक्ष्मण को कैलाश शिखर से संजीवनी बूटी कोन लाकर देता? वास्तव में वीर हनुमान राम सीता प्रसंग में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के लिए अविस्मरणीय व्यक्तित्व के रूप में सामने आते हैं।

अयोध्या के लिए राम की वापसी के समय भी हनुमान की सेवाएं राम के लिए महत्वपूर्ण हो गईं।

राम के सामने यही एक प्रश्न था कि किस प्रकार भरत को उनके आने की सूचना शीघ्र ही दी जाए क्योंकि चित्रकूट से लौटते समय भरत ने कहा था—

“यदि चौदह वर्ष की अवधि की समाप्ति होते ही श्रीराम अयोध्या नहीं लौटे तो भरत प्राण त्याग देंगे” और राम को अयोध्या लौटते समय भरद्वाज मुनि के यहां उनका आतिथ्य स्वीकार करना पड़ा इसलिए इस अवधि में विलंब होने की शंका उनके मन में व्याप गई।

अतः राम ने हनुमान से कहा—

“हे कपिश्रेष्ठ! हम तुम्हारे बड़े आभारी हैं। तुमने हमारे लिए विलक्षण कार्य किए हैं। यह कार्य भी तुम्हें ही करना है। अयोध्या जाकर भरत को हमारे आगमन की पूर्व सूचना दी। इसके लिए तुम श्रृंगवेश्वरपुर पहुंचकर निषादराज गुह से जब मिलोगे तो वे तुम्हें अयोध्या का मार्ग और भरत का समाचार बतायेंगे।”

“तुम भरत को यह बताना कि श्रीराम शत्रुओं को जीतकर लक्ष्मण और सीता सहित प्रयाग तक आ पहुंचे हैं। यह बताते हुए तुम उसकी मुख मुद्रा का ध्यान रखना और समझना। तथा भरत का मेरे प्रति जो कर्तव्य और बर्ताव हो, उसे भी जानने का यत्न करना।”

“यदि कैकेयी की संगति या राज्य वैभव का संसर्ग होने पर भरत स्वयं ही राज्य के इच्छुक हों तो फिर हम अन्यत्र आश्रम से दूर चले जायेंगे।”

हनुमान मन ही मन सोच रहे थे, प्रभु की क्या विचित्र माया है। भक्त को वे बार-बार परखते हैं। भला भरत को राज्य से क्या काम है, ठीक है। ऐसा सोचते हुए हनुमान आदेश का पालन करने के लिए चल दिए। लंका के राजा रावण का वध करके सीता और लक्ष्मण के साथ आ रहे हैं। प्रयाग में भारद्वाज मुनि के आश्रम में उन्हीं के आदेश से आज पंचमी को रात वे वहां बिता कर कल प्रातः वहां से चल देंगे। यही तुम्हें रघुनाथ जी का दर्शन होगा।

इस प्रकार गुह से कहते हुए हनुमान बिना कोई सोच विचार किए आगे बढ़ गए।

अयोध्या से एक कोस की दूरी पर उन्होंने आश्रमवासी भरत को देखा जो मृगचर्म धारण

किए, जटा बढ़ाए, भाई के वनवास से दुखी कुश हो गए थे। फल-मूल ही उनका भोजन था। शुद्ध अन्त करण के ये तपस्वी भरत श्रीराम की चरण पादुकाओं को सम्मुख रखकर एक प्रतिनिधि के रूप में शासन चला रहे थे।

हनुमान ने भरत जी के पास पहुंचकर उन्हें प्रणाम किया और फिर उन्हें कहा—

“हे आर्य! अब आप वह दारुण शोक त्याग दीजिए। जिसके बिछुड़ने से आपने यह स्वरूप धारण कर रखा है, वे आपके भाई और भाभी, लक्ष्मण सहित शीघ्र ही यहां पधारे रहे हैं।”

“क्या सचमुच राम आ रहे हैं?”

“हां, रघुकुल श्रेष्ठ! और यही समाचार मैं तुम्हें देने आया हूं।”

हनुमान से यह समाचार सुनकर भरत आनन्द विभोर होकर पृथ्वी पर गिर पड़े और हर्ष से मूर्छित हो गए। जब उन्हें होश आया तो हनुमान ने उन्हें अपनी भुजाओं में उठा लिया और अपने अश्रुपरित नेत्रों से उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा—“भैया भरत। अब तुम्हारे कष्ट के दिन समाप्त हो गए हैं और जल्दी ही तुम्हें अपनी तपस्या का फल मिलने वाला है।”

भरत ने गदगद कंठ से हनुमान से कहा—“हे प्रिय! तुमने यह जो मुझे समाचार सुनाया है, यह स्वयं इतना मूल्यवान है, मुझे नहीं लग रहा कि इसके बदले मैं तुम्हें कौन-सा उपहार दूं। फिर भी भरत ने उन्हें एक लाख गौएं, सौ उत्तम गांव और उत्तम आचार वाली कुमारी कन्याएं पत्नी रूप में समर्पित की। उन कन्याओं के कानों में सुन्दर कुण्डल थे। वे सभी कुलीन थीं।”

हनुमान से बातचीत करते हुए भरत ने कहा—“प्रियवर! तुम तो श्रीराम के साथ बहुत समय तक रहे हो उनका वनवास काल किस प्रकार बीता है, मुझे यह वर्णन सुनाओ।”

भरतजी के कहने पर हनुमान ने चित्रकूट से आने के बाद और रावण वध तक की सारी घटनाएं विस्तार से सुनाई और इस वर्णन में इतना समय बीत गया कि प्रातःकाल हो गई।

श्रीराम के वनवास काल में वन के कष्ट तो थे ही, जब भरत को सीता हरण का समाचार मिला तो वे बहुत व्यथित हो उठे। इसी प्रकार जब लक्ष्मण को मेघनाद की शक्ति लगी थी और हनुमान संजीवनी बूटी लेने कैलाश पर्वत आए थे, यह वर्णन सुनकर तो भरत की आंखों से अविरल अश्रुधारा बहने लगी। वे अपने को रोक नहीं पाए ओर बोले—“हे हनुमान! मैं कितना दुर्भाग्यशाली हूं! भैया राम को, भाई लक्ष्मण और भाभी सीता को केवल मेरे ही कारण यह वनवास काल का कष्ट भोगना पड़ा।”

“इतने अधीर मत होओ भरत! व्यक्ति के जीवन में जो भी घटनाएं घटती हैं, उन सबका कारण भूत विधि विधान होता है। और फिर आपको यह तो ज्ञात ही है कि श्रीराम ने वनवास काल में असंख्य दुर्दान्त राक्षस प्रजातियों का सर्वनाश करके समूचे आर्यावर्त में धर्म की स्थापना करते हुए रघुकुल का नाम ही ऊंचा किया है। इसलिए इस दृष्टि से राम का वनवास समूचे आर्यावर्त के लिए आवश्यक था।”

“हे भरत श्रेष्ठ! आप तो विज्ञ है, इस बात को जानते हैं कि राजा का धर्म केवल राजधानी

में रहकर ही सत्ता संचालन नहीं होता बल्कि प्रजा के बीच में रहकर सीधे उनके दुख और दर्द को पहचानकर, उनकी व्यथा का निवारण करना भी होता है और इस दृष्टि से राम ने इतने बड़े आर्यावर्त के दक्षिण प्रदेश में उभरने वाली समस्याओं और आतंकवादी प्रवृत्तियों का शमन करते हुए मित्र राज्य ही स्थापित किया। जिस प्रकार से निषादराज गुह का श्रृंगवेश्वरपुर स्वतंत्र सत्ता रखते हुए भी अयोध्या के अधीन है, उसी प्रकार से किष्किन्धा और लंका भी स्वतंत्र राज्य होने के बावजूद आर्यावर्त के ही हिस्से हैं।”

“वनवास काल में श्रीराम ने तपस्वी का जीवन जीकर वास्तव में राजा के प्रजापालक धर्म का ही निर्वाह किया और एक तरह से उन्होंने सबको जीने का अधिकार देते हुए प्रजातांत्रिक व्यवस्था का अनुमोदन किया है।

“आप यहां अयोध्या में उनके प्रतिनिधि शासक के रूप में व्यवस्था देखते रहे उधर राम मोर्चे पर अव्यवस्था को व्यवस्थित करते में लगे रहे।”

“कोई भी राज्य अथवा राष्ट्र सामूहिक सम्भाव से सबके औचित्यपूर्ण अधिकार से संचालित होता है। सत्ता का अहम या दंभ निश्चय ही राज्य को ले डूबता है।”

“हे आर्याश्रेष्ठ! राम ने यही व्यवस्था कायम की है। वाली और रावण के दंभ का नाश करके उनके जैसे स्वेच्छाचारी राजाओं का आधिपत्य समाप्त करके सुग्रीव और विभीषण को राज्य सौंपना उसी जननायक राज्य दृष्टि का परिचायक है। अतः हे महाबाहो! आप मन में किसी प्रकार का क्लेश न करें।”

अभी भरत और हनुमान परस्पर बातचीत कर रहे थे कि आकाश से शब्द सुनाई दिया। ऐसा लगा मानो देवताओं का समूह अयोध्या में उतरना चाहता है।

तभी हनुमान और भरत दोनों को श्रीराम का पुष्पक विमान दूर से आता दिखाई दिया। अब विमान पास आ गया और धरती पर उतरने लगा तो भरत दौड़कर विमान की ओर गए।

जैसे ही राम ने धरती पर पैर रखा, भरत ने अपने अश्रुपूरित जल से उनके चरण धोए। राम का मन पुलकित हो गया। उन्होंने भरत को उठाकर गले से लगा लिया। तत्पश्चात सीता और लक्ष्मण से भरत का मिलन हुआ।

राम ने भरत का परिचय सुग्रीव, जामवन्त, अंगद तल नील ओर विभीषण आदि से कराया।

भरत ने सुग्रीव और विभीषण के प्रति आभार प्रकट करते हुए कहा—“मित्रों! आपने मुझ पर बड़ा उपकार किया जो मुझे अपने दर्शनों लाभान्वित किया।”

सुग्रीव और विभीषण दोनों ने एक ही स्वर से कहा—“हे भरत! हम तो माध्यम मात्र है, वास्तव में यह कृपा तो स्वयं श्रीराम की है जिन्होंने हमें यह पात्रता प्रदान की और इस सारे अनुष्ठान का यदि कोई श्रेय का अधिकारी है तो उससे तो तुम पहले ही मिल चुके हो।” भरत के साथ-साथ सभी लोग हनुमान की ओर देखने लगे।

और हनुमान स्वयं ही इस शक्ति और पराक्रम के लिए श्रीराम को कारण मानते हुए उनके

चरणों में गिर पड़े।

श्रीराम को अयोध्या का सम्राट बना दिया गया। महर्षि वशिष्ठ आदि की उपस्थिति में हर्षोल्लास के बीच उनका अभिषेक हुआ। इस उत्सव में सभी वानर और विशिष्ट राक्षसगण सुग्रीव और विभीषण के साथ उपस्थित थे।

कई दिन तक यह उत्सव हर्ष उत्सव और उल्लास के साथ मनाया जाता रहा। धीरे-धीरे सुग्रीव, जामवन्त, विभीषण सभी राक्षस और वानरगण अतिथि सत्कार पाकर प्रसन्न मन अपने-अपने स्थान को लौट गए और जब हनुमान की बारी आई तो उन्होंने अपने लिए श्रीराम चरण ही उपयुक्त स्थान समझा।

हनुमान जीवनपर्यन्त श्रीराम की सेवा करते रहे। उनका जीवन राम भक्ति में ही समर्पित हो गया।

* * *

श्री हनुमान चालीसा

दोहा

श्री गुरु चरन सरोज रज, निज मनु मुकुरु सुधारि।
बरनउं रघुबर विमल जसु, जो दायकु फल चारि
बुद्धि हीन तनु जानि के, सुमिरौ पवन कुमार।
बल बुद्धि विद्या देहु मोहि, हरहु कलेस विकार॥

चौपाई

जय हनुमान ज्ञान गुन, सागर, जय कपीस तिहुं लोक उजागर।
राम दूत अतुलित बल धामा, अंजनि-पुत्र पवनसुत नामा।
महाबौर विक्रम बजरंगी, कुमति निवार सुमति केसंगी।
कंचन बरन विराज सुवेसा, कानन कुण्डल कुंचित केसा।
हाथ बज्र ओर ध्वजा बिराजै, कांधे मुंज जनेऊ साजै।
संकर सुवन केसरी नंदन, तेज प्रताप महा जग बंदन।
विद्यावान गुनी अति चातुर, राम काज करिबे को आतुर।
प्रभु चरित सुनिबे को रसिया, राम लखन सीता मन बसिया।
सूक्ष्म रूप धरि सियहि दिखावा, विकट रूप धरि लंक जरावा।
भीम रूप धरि असुर संहारे, रामचन्द्र के काज संवारे।
लाय सजीवन लखन जियाये, श्री रघुवीर हरिष उर लाए।
रघुपति कीन्हीं बहुत बड़ाई, तुम मम प्रिय भरत सम भाई।
सहस्र बदन तुम्हरो जस गावैं, अस कहि श्रीपति कंठ लगावै।
सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा, नारद सारद सहित अहीसा।
यम कुबेर दिगपाल जहां ते, कवि को बिद कहि सके कहां ते।
तुम उपकार सुग्रीवहि कीन्हां, राम मिलाए राज पद दीन्हा।
तुम्हरो मन्त्र विभीषन माना, लंकेवर भय सब जग जाना।
जुगं सहस्र्र जोजन पर भानू, लील्यो ताहि मधुर फल जानू।
प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माही, जलधि लाधि गए अचरज नाहीं।
दुर्गम काज जगत के जेते, सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते।
राम दुआरे तुम रखवारे, होत न आज्ञा बिनु पैसारे।
सब सुख लेहै तुम्हारी सरना, तुम रक्षक काहू को डरना।
आपन तेजसम्हारो आपै, तीनों लोक हांक ते कांपै।
भूत पिसाच निकट नहीं आवै, महावीर जब नाम सुनावै।
नासै रोग हरै सब पीरा, जपत निरन्तर हनुमत बीरा।

संकट ते हनुमान छुडावै, मन कर्म वचन ध्यान जो लावै।
सब पर राम तपस्वी राजा, तिनके काज सकल तुम साजा।
और मनोरथ जो कोई लावै, सोई अमित जीवन फल पावै।
चारों जुग प्रताप तुम्हारा, है परसिद्ध जगत उजियारा।
साधु संत के तुमरखवारे, असुर निकंदन राम दुलारे।
अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता अस बर दीन जानकी माता।
राम रसायन तुम्हरे पासा, सदा रहो रघुपति के दासा।
तुम्हारे भजन राम कोभावै, जनम-जनम के दुख बिसरावै।
अंतकाल रघुवर पुर जाई, जहां जन्म हरि भक्त कहाई।
और देवता चित्त न धरई, हनुमत सेई सर्व सुख करई।
संकट कटै मिटै सब पीरा, जो सुमिरै हनुमत बलबीरा।
जै जै जै हनुमान गोसाई, कृपा करहु गुरुदेव की नाई।
जो सत बार पाठ कर कोई, छूटहि बंदि महा सुख होई।
जो यह पढ़े हनुमान चलीसा, होय सिद्धि साखी गौरीसा।
तुलसीदास सदा हरि चेरा, कीजै नाथ हृदय महं डेरा।

दोहा

पवनतनय संकट हरन, मंगल मूरति रूप।
राम लखन सीता सहित, हृदय बसहु सुर भूप।

॥इति॥

संकटमोचन हनुमानाष्टक

मत्तगयन्द छन्द
बाल समय रवि भक्षि लियो तब,
तीनहुं लोक भयो अंधियारो,
ताहि सो त्रास भयो जग को,
यह संकट काहुं सो जात न टारो
देवन आनि करी विनती तब
छांडि दियौ रवि कष्ट निवारो।
को नहि जानत है जग में कपि,
संकट मोचन नाम तिहारो ॥1॥
बालि की त्रास कपीस बसै गिरि,
जात महाप्रभु पंथ निहारो।
चौकि महा मुनि श्राप दियो तब,
चाहिए कौन विचार विचारो।
कै द्विज रूप लिवाय महाप्रभु,
सो तुम दास के शोक निवारो॥ को.2॥
अंगद के संग लेने गए सिय,
खोज कपीस यह बैन उचारो।
जीवित ना बचिहौं हम सो जु
बिना सुधि लाएं इहां पगु धारो।
हरि थके तट सिंधु सबै सब लाय।
सिया सुधा प्राण उबारो॥को.3॥
रावन त्रास दई सिय को,
सब राक्षसि सो कहि शोक निवारो।
ताहि समय हनुमान महाप्रभु
जाय महा रजनीचर मारो।
चाहत सीय अशोक सो अगि सु,
दै प्रभु मुद्रिका सोक निवारो ॥को.4॥

बान लग्यौं उर लक्ष्मण के तब,
प्राण तजे सुत रावन मारो।
लै गृह बैद्य सुसेन समेत
तबै गिरि द्रोण सु वीर उपारो।
आनि सजीवन हाथ दई तब,
लक्ष्मण के तुम प्राण उबारो ॥को.5॥

रावण युद्ध अजान कियो तब,
नाग की फांस सबै सिर डारो।
श्री रघुनाथ समेत सबै दल,
मोह भयो यह संकट भारो।
आनि खगेश तबै हनुमानजु,
बंधन काटि सुत्रास निवारो ॥को.6॥

बंधु समेत जबै अहिरावन,
लै रघुनाथ पाताल सिधारो।
देवहि पूजि भली विधि सों,
बलि देउ सबै मिलि मन्त्र बिचारो।
जाए सहाए भयो तब हो,
अहिरावन सैन्य समेत संहारो ॥को.7॥

काज किए बड़े देवन के तुम
वीर महाप्रभु देखि चारो।
कौन सो संकट मोर गरीब को,
जो तुमसो नहि जात है टारो।
बेगि हरो हनुमान महाप्रभु,
आय पड़ो अब संकट भारौ ॥को.8॥

दोहा

लाल देह लाली लसे, अरु धरि लाल लंगूर।
बज्र देह दानव दलन, जय जय जय कपि सूर।
॥इति संकटमोचन हनुमानष्टक संपूर्ण॥

आरती हनुमानलला की

आरती कीजै हनुमान लला की, दुष्टदलन रघुनाथ कला की।
जाके बल से गिरिवर कांपै, रोग दोष जाके निकट न झांकै।
अंजनिपुत्र महा बलदाई, संतन के प्रभु सदा सहाई।
दे बोरा रघुनाथ पटाए, लंका जारि सीय सुधि लाए।
लंका-सो कोट समुद्र सो खाई, जात पवनसुत बार न लाई।
लंका जारि असुर संहारे, सियाराम जी के काज संवारे।
लक्ष्मण मूर्छित पड़े सकारे, आनि सजीवन प्राण उबारे।
पैठि पताल तोरि जम-कारे, अहिरावन की भुजा उखारे।
बायें भुजा असुरदल मारे, दहिने भुजा संतजन तारे।
सुर नर मुनि जन आरती उतारे, जय जय हनुमान उचारे।
कंचन थार कपूर लौ छाई, आरती करत अंजनि माई।
जो हनुमान की आरती गावै, बस बैकुण्ठ परम पद पावै॥